कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

14-4-84

टप्पर गाड़ी

टपपर गाड़ी

द्रोणवीर कोहली

राजकमल प्रकाशन
नयी दिल्ली पटना
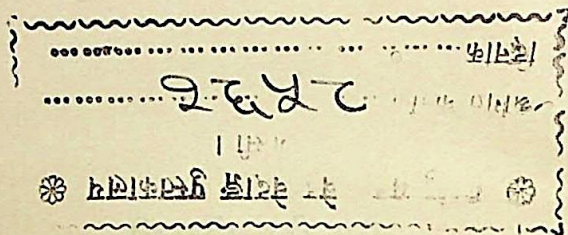
मूल्य : रु० १८.००

प्रथम संस्करण : १९७९

प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
८, नेताजी सुभाष मार्ग, नयी दिल्ली-११०००२

मुद्रक : शान प्रिंटर्स, शाहदरा-दिल्ली-११००३२

आवरण : स्टूडियो सी-40, नयी दिल्ली

TAPPAR GADI, novel by Dronvir Kohli

प्रकाशकीय

'टप्पर गाड़ी' लेखक का पहला मौलिक उपन्यास है।

इसमें ३२६ ईसापूर्व प्राचीन तक्षशिला और उसके आस-पास की कहानी है। इस भूमि के साथ लेखक का गहरा सम्बन्ध है, क्योंकि उसका बचपन और किशोरावस्था यहीं व्यतीत हुई।

३२६ ईसापूर्व भारतीय इतिहास का एक रोमांचकारी वर्ष था। ग्रीस का युवक और महत्त्वाकांक्षी राजा अलेक्ज़ेंडर (सिकन्दर) सिन्धु तट पर डेरा डाले बैठा था और तक्षशिला के उपराज आम्भि ने उसे तक्षशिला आने का निमन्त्रण दिया था। इस घटना से चारों ओर उथल-पुथल मच गयी थी और तक्षशिला और उसके आसपास के गाँवों-कस्बों का जीवन अस्त-व्यस्त हो गया था।

इसी उथल-पुथल के दौरान एक सीधा-सादा ग्रामीण अपनी जन्मान्ध कन्या का उपचार करवाने अपने गाँव से चलकर तक्षशिला पहुँचता है। मार्ग में उसे जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा और फिर जिन परिस्थितियों में वह तक्षशिला पहुँचा, इन सारी घटनाओं के वर्णन में लेखक ने उस समय के समाज का बड़ा अद्भुत और प्रभावशाली चित्र उपस्थित किया है। इस प्रकार, यह तत्कालीन राजाओं के आपसी कलह और राजमहलों के जीवन की कहानी न होकर उस काल के आम आदमी और उसके कष्टों की मार्मिक कथा है। पासमान, मूली, विचक्खण,

महीधर, विसालक्खी, पुक्कुस, उदय और वेणी—इस कथा के सशक्त पात्र हैं और अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं।

लेखक ने यह उपन्यास १९६० के आसपास लिखना आरम्भ किया और यह पूर्ण हुआ कहीं १९७६ के मध्य जाकर। इस सम्बन्ध में लेखक ने लिखा है : "मैं जो कुछ लिखता, उससे मुझे सन्तोष नहीं होता था···सारी कहानी को मैंने अधिक नहीं, तो कम से कम दस-ग्यारह बार अवश्य लिखा होगा···" ('लेखक का निवेदन' से)।

'टप्पर गाड़ी' की कथा जितनी रोचक और रोमांचक है, उसके साथ लेखक का वक्तव्य भी उतना ही पठनीय है जिसमें उसने बताया है कि इस कहानी को लिखने की प्रेरणा उसे कैसे मिली।

'टप्पर गाड़ी' मुख्यतः किशोर पाठकों के लिए है, परन्तु हमें विश्वास है, यह अपनी शैली और भाषा-प्रयोग से अन्य पाठकों को भी आकर्षित करेगा।

लेखक का निवेदन

'टप्पर गाड़ी' प्राचीन काल की कहानी है और इसका निश्चित समय ३२६ ईसापूर्व है।

जैसा कि अब तक की खोज से पता चला है, ३२६ ईसापूर्व के आरम्भ में ग्रीस अर्थात यूनान का एक युवक और महत्त्वाकांक्षी राजा अपना रणकौशल दिखाता हुआ सिन्धु-तट पर आ पहुँचा था और नदी पर पुल बनाकर तक्षशिला नगरी की ओर कूच करने की तैयारियाँ कर रहा था।

यूनान के इस राजा का नाम अलेक्ज़ेंडर था। हम लोग उसे अलक्षेन्द्र, अलसन्द, अलसचण्ड अथवा सिकन्दर के नाम से भी जानते हैं। यह वही अलेक्ज़ेंडर था जिसे पोरस ने छटी का दूध याद कराया था।

किंवदन्ती है कि इस यूनानी राजा को तक्षशिला के उपराज अर्थात युवराज आम्भि (आम्भीक) ने आने का निमन्त्रण दिया था। आम्भि का आसपास के राजाओं के साथ वैर-वैमनस्य था। उन्हें नीचा दिखाने के लिए ही उसने एक विदेशी राजा की सहायता माँगी—हमारे इतिहास-ग्रन्थों में ऐसा ही वर्णन मिलता है।

आम्भि के वैरियों की संख्या कम नहीं थी। एक तो राजा पुरु या पोरउ था, जिसे हम पोरस नाम से जानते हैं। पोरउ का राज्य वितस्ता (वर्तमान जेहलम) और इरावती (वर्तमान रावी)

नदियों के मध्य था। वितस्ता के ऊपर अभिसार नाम का राजा राज्य करता था। फिर तक्षशिला के ऊपर पहाड़ी प्रदेश में उरशा राज्य था, जिसके राजा का नाम अशंक मिलता है। सिन्धु के पश्चिम में पुष्कलावती (वर्तमान पेशावर) नगरी थी। इन सबके साथ आम्भि की लाग-डाँट चलती रहती थी।

परन्तु 'टप्पर गाड़ी' में मैंने इन राजाओं के आपसी कलह की कहानी न लिखकर उस युग के आम आदमी की कहानी लिखी है। अलेक्ज़ेंडर के आगमन से सारा उत्तरी भारत हिल गया था। भारत के इतिहास की इसी नाटकीय घटना की पृष्ठ-भूमि में मैंने अपनी कहानी का ताना-बाना बुना है।

अब, मैंने यह कहानी क्यों लिखी ?

इसके पीछे एक लम्बी कहानी है—व्यथा की कथा है यह।

रावलपिण्डी और उसके आसपास के क्षेत्र में मेरा बचपन और किशोरावस्था बीती। रावलपिण्डी से तक्षशिला पन्द्रह-बीस मील के अन्तर पर है और तक्षशिला के खँडहर आज भी विद्यमान हैं।

वह दिन मुझे भुलाये नहीं भूलेगा। १६ सितम्बर, १९४७ का वह दिन था और प्रातःकाल की वेला। तब मेरी अवस्था चौदह-पन्द्रह बरस से अधिक की नहीं थी।

भोर वेला में ही नानकपुरा में यह बात फैल गयी कि हमें अपने घरों से निकालकर किसी 'सुरक्षित' स्थान पर ले जाया जायेगा। बच्चों के मन में एक प्रकार की खुशी थी कि किसी नयी जगह जा रहे हैं। बड़ों को विश्वास था कि विपत्ति टलने के उपरान्त वे सब अपने-अपने घरों को लौट आयेंगे और फिर उसी तरह जीवन व्यतीत करने लगेंगे।

परन्तु यह न होना था, न हुआ।

उजाला होते ही ट्रकों की एक लम्बी कतार हमारे मुहल्ले के बाहर लोहे के फाटकों पर आकर खड़ी हो गयी। अफ़रा-तफरी

में सब लोग ट्रकों में सवार हुए। किसी ने सपने में भी नहीं सोचा था कि उनकी जन्मभूमि उनसे सदा के लिए छीनी जा रही है।

अपने घर-घाट से उखाड़कर हमें एक ऐसी जगह ले जाकर पटक दिया गया जो हम सबके लिए अनजान थी। फिर वहाँ नानकपुरा के लोग ही नहीं थे, दूसरे मुहल्लों के भी वासी थे, आसपास के गाँवों-कस्बों के सैकड़ों नहीं, हजारों और लाखों की संख्या में—स्त्री-पुरुष, बच्चे-बूढ़े, सभी।

चारों ओर ऊँची पहाड़ियों से घिरे मैदान में बैरकें थीं, जो विश्वयुद्ध के दौरान बनायी गयी थीं। इन्हीं बैरकों में ला-लाकर हमें पटका गया था, जैसे हम मनुष्य नहीं, अनाज के बोरे थे। ट्रक खाली होकर जाते थे और आसपास के गाँवों-कस्बों के लोगों को भेड़-बकरियों की तरह भरकर पटक जाते थे।

इस शिविर में हमें किन-किन विपदाओं का सामना करना पड़ा, वह एक अलग कहानी है।

फिर एक दिन ऐसा आया कि हमें रेल के डिब्बों में भेड़-बकरियों की तरह ठूँस-ठूँसकर भरा गया। किसी को कुछ पता नहीं था कि हम लोग कहाँ जा रहे हैं। स्थिति यह थी कि एक बार डिब्बे में घुसे, तो फिर निकलने का कोई रास्ता नहीं मिलता था। यदि कोई अपने परिवार से बिछुड़ जाता था, तो फिर ढूँढ़े नहीं मिलता था। मुझे याद है, लोग खिड़कियों के पास खड़े होकर गला फाड़-फाड़कर अपने कुटुम्ब के खोये लोगों को पुकारते थे और विह्वल होकर आगे बढ़ जाते थे।

फिर कई दिनों की लम्बी यात्रा और असह्य कष्ट सहने के बाद हम दिल्ली की ओर आये। परन्तु उस दिन जो अपनी जन्म-भूमि से नाता टूटा, तो फिर उसके दर्शन नहीं हुए। आज भी उठते-बैठते, सोते-जागते, अपने पुराने शहर और गाँव की चप्पा-चप्पा भूमि की याद आती है—जहाँ हम संगी-साथी मिलकर

खेलते थे, मार-पीट करते थे, बाग में जाकर कच्ची खुमानियाँ, अलूचे तोड़ते, नसूढ़े बीन-बीनकर खाते और माली को चकमा देकर नौ-दो ग्यारह हो जाते थे। उन फलों का कच्चा स्वाद आज भी मेरे मुँह में है।

कभी-कभी बैठे-बैठे मुझे याद आती है अस्पताल के बीच से जानेवाले रास्ते के किनारे खड़े एकाकी खजूर के पेड़ की, जिस पर पत्थर-ढेले मारकर हम खजूर गिराया करते थे। कभी मैं अकेला होता था, तो सोचा करता था कि यही वह पेड़ है जिसके नीचे दो मित्रों और रीछ की घटना घटी थी। मैं सोचता था कि रीछ को देखकर एक मित्र इसी पेड़ के नीचे साँस रोककर मृतवत लेट गया होगा और रीछ ने उसके कान में कहा होगा कि झूठे और धोखेबाज़ मित्र का कभी विश्वास नहीं करना चाहिए।

और फिर याद आती है अपने स्वर्ग-समान गाँव की जहाँ अंडकड़ और उछड़ी में हम नहाते थे। किनारे की रेत में चहबच्चा बनाकर स्त्रियाँ पानी भरती थीं, जो इतना शीतल और मधुर होता था कि उसके आगे आज के फ्रिज का पानी तुच्छ है।

फिर उस कच्चे कोठे की याद आती है जहाँ मेरा जन्म हुआ था। कल्पना की आँखों से देखता हूँ, तो लगता है कि अब भी दीवार के साथ नाँदों में गाय-भैंस, खच्चर, घोड़ियाँ, भेड़-बकरियाँ और वह साँड़ बँधा है जिसमें अद्‌भुत शक्ति थी, क्योंकि इस साँड़ को दो आदमी भी बड़ी कठिनाई से पकड़कर ले जाते थे। वह चलता नहीं था, भागता था और ज़मीन हिल जाती थी। इस साँड़ को हम 'दो बागोंवाला साँड़' कहते थे।

फिर उस कच्चे कोठे का एक-एक हिस्सा भी मेरे सामने साक्षात खड़ा है जिसे हम न जाने क्यों 'महल' कहते थे। भीतर किवाड़ के पीछे लकड़ी का दीवट रखा रहता था। बायीं ओर एक बन्द कोठरी थी, जिसमें ऊपर की चौखट में साँकल में लोहे का

मजबूत ताला लगा रहता था।

(यह अद्‌भुत ताला आज भी मेरे पास दिल्ली में सुरक्षित रखा है। इतने बरस बीत जाने पर भी इसमें तनिक भी ज़ंग या मुरचा नहीं लगा। इतना पुराना ताला है और बिगड़ा नहीं। क्या यह उस धातु का तो नहीं बना जिससे कुतुब के आँगन में खड़ी लोहे की कील बनायी गयी थी? यह ताला मेरी दादी का है। आज इस पर दृष्टि जाती है, तो किवाड़ के पीछे अँधेरे में डूबा अद्‌भुत संसार आँखों के सामने आकर खड़ा हो जाता है।)

उस अँधेरी कोठरी में न जाने किस ज़माने की लकड़ियाँ चुनकर रखी हुई थीं, जो कभी निकाली नहीं जाती थीं। किवाड़ खोलने पर भी भीतर कुछ दिखायी नहीं देता था—घुप्प अँधेरा था। परन्तु लकड़ी को भीतर ही भीतर खानेवाले कीड़े-मकोड़ों की लपलपाती जिह्वाओं की लप्-लप् बन्द किवाड़ों के पीछे से भी सुनायी देती रहती थी।

इसी कोठरी में किवाड़ के पीछे हमारी दादी कहीं गहनों और नकद रुपयों का डोला या सन्दूकची छिपाकर रखा करती थी और सुँहाठ (यानी दहलीज) पर बैठकर टटोल-टटोलकर निकालती-धरती रहती थी और बिल्कुल डरती नहीं थी—हालाँकि कोठरी के भीतर साँप-बिच्छू बहुत होते थे। प्रायः कोई साँप वहाँ से निकलकर महल की छत की कड़ियों में रेंगता रहता था और कभी-कभी चारपाई पर हम लोगों के ऊपर गिर भी पड़ता था।

यह भी याद आता है कि हमारे दादा 'ढोक' से फसल बटोकर लौटते थे, तो आगे वे स्वयं एक घोड़ी पर बैठकर आते थे और उनके पीछे अनाज से लदे ऊँटों की लम्बी कतार होती थी। फिर एक-एक करके सभी ऊँट हमारी विशाल ड्योढ़ी में से प्रविष्ट होकर आँगन में बैठते थे और अनाज उतारा जाता था। फिर सारे अनाज को सँभालकर कच्चे कोठों में रखा जाता था और

दादी मुँहाठों पर तेल चुपड़ती थी कि चींटों की सेना अनाज ढोकर न ले जाये।

क्या ये दृश्य भुलाये जा सकते हैं ?

और फिर गाँव के उन भोले-भाले लोगों की शक्लें याद आती हैं। हिन्दू, सिख, मुसलमान, सब उस गाँव में रहते थे, स्नेह और प्यार से। धर्म के नाम पर कभी किसी में कलह या दंगा-फसाद नहीं होता था।

ऐसी थी मेरी सुन्दर, अद्भुत और हृदय की हार जन्मभूमि। परन्तु १६ सितम्बर को हम ऐसे बिछुड़े उससे कि आज भी उसके दर्शन को तरसते हैं। जब-जब उसकी याद आती है, तो भीतर एक टीस-सी उठती है और मन करता है कि उड़कर वहाँ पहुँचूँ। परन्तु मेरी दशा उस बालक जैसी है जो अपने घर के निकट एक विशाल मैदान में प्रतिदिन खेलने जाया करता था, पर अचानक एक दिन किसी ने उसकी बाँह पकड़कर उसे मैदान के सिरे पर खड़ा कर दिया और लक्ष्मणरेखा खींच दी कि खबरदार जो इसे लाँघकर भीतर क़दम रखा !

तुम्हीं बताओ, यदि तुम पर भी यह बीते, तो तुम्हें कैसा लगेगा ! इसीलिए तो कहा है कि किसी की मातृभूमि, जन्मभूमि उससे छिन जाये, तो समझो कि उसका सर्वस्व ही छिन गया। मैं देखता हूँ और उद्विग्न होता हूँ कि मेरी जन्मभूमि रूपी मैदान में सबको आने-जाने की अनुमति है, परन्तु मुझे कोई घुसने नहीं देता। अब मैं उस शहर में, उस घर में नहीं जा सकता जो था तो पुराना, सीलन-भरा, अँधेरा, तंग और वहाँ ढेरों रहनेवाले लोग आपस में चील-कौवों की तरह उलझते रहते थे। परन्तु वह मेरा घर था, क्योंकि वहीं खाट पर बैठकर मैंने रामायण की, महाभारत की, पंचतन्त्र की, हितोपदेश की कहानियाँ पढ़ी थीं; सुल्ताना डाकू के रोमांचक क़िस्से पढ़े थे; और नरक में पड़े पापी

मनुष्यों को दी जानेवाली असहनीय यातनाओं की लोमहर्षक कहानियों के ढेरों रंगीन चित्र देखे थे।

सोचता हूँ कि मुझसे तो वे प्रवासी पक्षी ही अच्छे हैं जो ठंडे देशों से उड़कर तक्षशिला और उसके आसपास की मेरी जन्मभूमि पर से होकर जाते हैं। मैं खड़ा-खड़ा निहारा करता हूँ उन्हें और उनसे निवेदन करता हूँ कि जब वे मेरी जन्मभूमि के ऊपर से उड़कर जायें, तो कुछ क्षण वहाँ रुकें, वहाँ का ठंडा पानी पिएँ, वहाँ के पेड़ों की शीतल छाया के नीचे किंचित विश्राम करें और जब कभी दिल्ली आयें, तो हमारे गाँव के घर में खड़ी बेरी का एक बेर चोंच में भरकर लायें।

सन् १९६० में एक दिन अचानक मेरे मन में यह बात आयी कि क्यों न मैं अपनी स्वर्ग-समान जन्मभूमि के विषय में कुछ लिखूँ। हमेशा सोचता था। परन्तु कुछ सूझता नहीं था कि आरम्भ कैसे करूँ। फिर एक दिन अचानक यह बात भी मस्तिष्क में कौंधी कि जिस धरती पर मेरा जन्म हुआ, जहाँ मैंने अपने जीवन के सर्वोत्तम दिन बिताये, वहाँ प्राचीन काल में इतनी बड़ी घटना घटी कि उत्तर भारत का नक्शा ही बदल गया। मैंने सोचा, क्यों न उस युग का चित्रण करने के व्याज से मैं अपनी जन्मभूमि का, उसकी सोंधी मिट्टी का, वहाँ के पेड़-पौधों का वर्णन करूँ। बस, उसी दिन से मैं इस काम में लग गया। 'टप्पर गाड़ी' उसी मनोरथ की उपज है।

१९६० के आसपास लिखना आरम्भ किया, तो कई बाधाएँ आयीं। परन्तु सबसे बड़ी उलझन यह थी कि मैं जो लिखता उससे सन्तोष नहीं होता था। बार-बार काट-काटकर लिखता था। इस तरह सारी कहानी को मैंने अधिक नहीं, तो कम से कम दस-ग्यारह बार अवश्य लिखा होगा। इस तरह यह कहानी १९७९ के मध्य जाकर कहीं पूरी हुई।

तक्षशिला का महत्त्व

प्राचीन काल में तक्षशिला बड़ी प्रसिद्ध और समृद्ध नगरी थी। आम बोलचाल की भाषा में इसे 'तक्कसिला' अथवा 'तक्खसिला' भी कहते थे। यहाँ पर तीन मुख्य व्यापार-मार्ग आकर मिलते थे। एक इतिहासकार ने लिखा है कि सिन्धु और जेहलम नदियों के मध्य तक्षशिला सबसे बड़ी नगरी थी। तक्षशिला के आसपास की भूमि पर घनी आबादी थी और धरती बड़ी उपजाऊ थी। इसकी प्रसिद्धि इतनी थी कि दूर-दूर के राजकुमार यहाँ अस्त्र-शस्त्र की विद्या प्राप्त करने आया करते थे। यहाँ के वैद्य-चिकित्सकों के हस्त-कौशल की भी बड़ी धूम थी।

ऐसी किंवदन्ती है कि राजा भरत ने तक्षशिला की नींव रखी। कहते हैं कि भरत ने अपने दो पुत्रों को अलग-अलग राजगद्दियाँ दी थीं — तक्ष को तक्षशिला में और पुष्कल को पुष्कलावती में। फिर यह भी उल्लेख मिलता है कि हस्तिनापुर के राजा जनमेजय ने तक्षशिला में सर्पयज्ञ किया। यह भी कहा जाता है कि महाभारत का सर्वप्रथम पाठ इसी नगरी में हुआ। जातक कथाओं में तक्षशिला का बार-बार वर्णन आता है। जैन परम्परा के अनुसार भी ऋषभ नामक तीर्थंकर तक्षशिला आये थे और उनके पदचिह्नों पर बाहुबली ने एक राजसिंहासन और धर्मचक्र की स्थापना की थी। इस धर्मचक्र का व्यास कई योजन था।

संक्षेप में, तक्षशिला का यह प्राचीन इतिहास है। इसके बारे में तब मैंने कई कहानियाँ सुनी थीं। एक दिन, जब मैं मुश्किल से दस-ग्यारह बरस का था कि अकेला रावलपिण्डी से तक्षशिला के खँडहर देखने गया और घण्टों वहाँ भटकता फिरा था। इस घटना को बीते तीस-पैंतीस बरस हो गये हैं, परन्तु आज भी लगता है कि वहाँ का एक-एक पत्थर मेरी आँखों के सामने खड़ा है। मुझे भली भाँति याद है कि एक जगह गहरी खुदाई की गयी

थी। मैंने एक टीले पर चढ़कर नीचे देखा था और कल्पना की थी कि नीचे जो चार-चार फुट के वर्गाकार चबूतरे-से खुदाई से निकले हैं, वे प्राचीन काल में किसी राजा के महल में सभासदों के बैठने के आसन थे।

'टप्पर गाड़ी' की मुख्य घटनाएँ इन्हीं के आसपास घटी हैं।

द्रोणवीर कोहली

१६ सितम्बर, १६७६
'निलयम'
ई, १६३ ग्रेटर कैलाश भाग २,
नयी दिल्ली

पहली लीक

फागुन आधा बीत चला था। दोपहर चढ़ आयी थी; परन्तु धूप में अभी इतना तीखापन नहीं आ पाया था। रह-रहकर प्रचण्ड वायु के झोंके चलते थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे ऊपर हिमवन्त का स्पर्श करके आ रहे हों।

ऐसी वेला में एक टप्पर गाड़ी भटककर कहीं जा रही थी। टप्पर गाड़ी के डगमग पहिये धीरे-धीरे घूमते हुए चूँ-चर चूँ-चरर कर रहे थे। तरवाल अर्थात बायीं ओर जुता बैल हल्के भूरे रंग का और उपराल अर्थात दायीं ओर जुता बैल चितकबरा था। तरवाल के सींग मुड़वाँ और उपराल के सींग सीधे और लम्बे थे।

डगर ऊबड़-खाबड़ और निर्जन थी। जहाँ तक दृष्टि जाती, काले टीले, पत्थर, झड़बेरियाँ, कीकर-फुलाही और जण्ड के पेड़ दिखायी पड़ते थे। दूर-दूर तक न कोई बस्ती थी, और न खेती-बारी के ही चिह्न थे।

टप्पर गाड़ी के जोत पर एक तरुण ग्रामीण बैठा ऊँघ रहा था। उसके सिर पर मैली चीकट पगिया थी और कन्धों पर चारखाना काला खेस। उसकी हल्की दाढ़ी-मूँछ झक्कड़ की धूल-मिट्टी से अटी हुई थी। कानों में ताँबे के कुण्डल और हाथ में कड़ा था।

गाड़ीवान का नाम पासमान था।

पीछे टप्पर में गाड़ीवान की स्त्री बैठी थी, जिसका नाम मूली था। उसकी गोद में साल-सवा साल की एक कन्या सो रही थी। यह कन्या जन्म से अन्धी, बहरी और पंगु थी।

गाड़ीवान की स्त्री उद्विग्न होकर बार-बार बाहर देखती थी –'सूरज बीच आकाश में आ गया है, पर कोई ठौर-ठिकाना दिखायी नहीं देता···'

उसके सिर पर से नीले वर्ण का मैला चीवर सरक गया था। बालों की पतली गुँथी हुई बहुत सारी मेढ़ियाँ(चोटियाँ) उसके कन्धों पर लटक रही थीं और कर्णफूल भी दिखायी पड़ते थे।

मूली ने एक पोटली अपने निकट खींच धरी और उसमें से बाँस की अंगुल-भर लम्बी नलकी निकाली, जिसके भीतर जौ के आटे में सुइयाँ रखी थीं। एक सुई निकालकर वह अपना फटा हुआ चीवर सीने बैठ गयी। चीवर सीते हुए वह आशंकित मन से पीछे छूटते हुए मार्ग को बार-बार देखती थी। बीच-बीच में वह अपनी स्निग्ध गोद में लेटी कन्या के झंडूले बालों में हाथ फेर लेती और फिर जैसे मन के भय को दूर करने के लिए होंठों ही होंठों में यह प्रार्थना करने लगती--

···जिनके पैर नहीं हैं, उनसे मेरा कोई वैर नहीं
जिनके दो पैर हैं, उनसे मेरा कोई वैर नहीं
जिनके चार पैर हैं, उनसे मेरा कोई वैर नहीं
जिनके अनेक पैर हैं, उनसे मेरा कोई वैर नहीं···

आगे सूखा नाला था। उसके पार अरण्य था। टप्पर गाड़ी ने हिचकोला खाया, तो गाड़ीवान चैतन्य होकर बैठ गया और बैलों को सँभाल-सँभालकर उतारने लगा। सामने दूर तक बन-पाँती चली गयी थी। पासमान चिन्तित हो गया। पिछले पड़ाव पर बटोहियों ने बताया था कि सूरज चढ़ते-चढ़ते वे बड़ी

सड़क पर पहुँच जायेंगे। परन्तु अब तो सूरज मध्य आकाश में आ गया था और किसी सड़क अथवा वस्ती का चिह्न तक दिखायी नहीं पड़ता था।

गाड़ीवान स्वयं को कोसने लगा। भोर वेला में उसकी आँख न लग गयी होती, तो इस तरह भटकना न पड़ता। बैल न जाने कब लीक छोड़कर इस निर्जन मार्ग पर चल पड़े थे! साथ पत्नी और अबोध बालिका न होती, तो चिन्ता की कोई बात नहीं थी। ऐसे में कोई विपत्ति आ पड़े, तो इन्हें कौन सँभालेगा? यही सोच-सोचकर वह उद्विग्न हो रहा था···निर्जन, अनजानी डगर और फिर घना जंगल। इधर जानवर भी पड़ता होगा। नदी के कछार में शुंडार हाथियों के झुण्ड विचरते रहते हैं। बघेरा, तेंदुआ, जंगली सुअर या अरना भी निकलकर आ सकता है। राह में कोई गुल्म (रक्षा चौकी) भी दिखायी नहीं पड़ी। फिर उसे स्मरण आया कि जंगल में जाते हुए शेर आदि के विषय में सोचना भी नहीं चाहिए, नहीं तो वह सचमुच निकलकर आ जाता है! पासमान ने कल्पना भी नहीं की थी कि मार्ग इतना लम्बा और बीहड़ होगा।

एक संशय बार-बार उसके भीतर सिर उठाता था—'कहीं उन बटोहियों ने जान-बूझकर हमें उलटी राह पर नहीं डाल दिया?···' वह यह बात मुँह पर लाने से भी डरता था, क्योंकि मूली व्यर्थ ही डरेगी। गाड़ीवान को विश्वास था कि बनपाँती समाप्त होते ही कोई बस्ती होगी और सूर्यास्त से बहुत पहले वे पहुँच जायेंगे। परन्तु ज्यों-ज्यों क्षण बीत रहे थे, उसकी धुकधुकी बढ़ती ही जाती थी।

बैल भी थक गये थे। चितकबरा डगमगा रहा था। पासमान साँटा फटकारता या टिटकारी भरता, तो बैलों की काँसे की गलघण्टियाँ त्वरित वेग से टनटनाने लगतीं। परन्तु वे कुछ ही

अन्तर दौड़ते और फिर धीमी गति पर आ जाते और पासमान का धैर्य छूटने लगता।

बैलगाड़ी नाला पार कर रही थी। मूली ने कन्या को वक्ष से सटा लिया और सँभलकर बैठ गयी। नाले के चौड़े पाट में धूल-मिट्टी उड़ रही थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे नाले में पानी के स्थान पर पवन धूल-धक्कड़ के साथ बह रहा हो।

उस पार सपाट मैदान था और फिर जंगल-भूमि आरम्भ हो जाती थी। बैल पूरी शक्ति लगाकर गाड़ी खींच रहे थे। ज्यों-ही गाड़ी ऊपर चढ़कर आयी कि पासमान चौंक पड़ा और जोत पर खड़ा होकर देखने लगा। नहीं, यह भ्रम नहीं था उसका। दूऽऽर पेड़ों में से निकलते हुए धुएँ की पतली रेख ऊपर अन्तरिक्ष में घुलती जा रही थी।

पासमान उछल पड़ा और चिल्लाने लग गया। मूली ने चीवर छोड़कर देखा, तो वह भी खिल उठी। एक क्षण में जैसे उसका सारा भय, सारा विषाद तिरोहित हो गया।

पासमान ने टिटकारी भरी और बैलों की पूँछें मरोड़ीं, 'हुँह, हुँह···चले चलो, चले चलो···'

बैल टल्लियाँ टनटनाते हुए भागे। पुरानी लीक पर झाड़-झंखाड़ उगा हुआ था। न जाने कब से कोई बैलगाड़ी इस डगर से होकर नहीं गयी थी। स्यात कोई मनुष्य भी नहीं आया था इधर। बैल वनस्पतियों को रौंदते हुए भाग रहे थे।

"अब चिन्ता की कोई बात नहीं!" पासमान ने जैसे निश्चिन्त होकर कहा। "वहाँ कोई गामड़ा होगा। वहीं जाकर विश्राम और कलेवा करेंगे। तू बस्सी को दूध पिला···"

पासमान का मरा हुआ उत्साह जैसे फिर जी उठा। उसने पगिया खोलकर झाड़ी। उसे कन्धे पर डालते हुए वह जैसे चहकने लग गया। फिर बोला, "अभी लपककर पहुँचते हैं मेरे

शेर···" उसने टिटकारी भरी और बैलों को उकसाया। पेड़ों में से निकलती हुई धुएँ की वह क्षीण रेखा जैसे उसकी आशाओं-आकांक्षाओं का सम्बल बन गयी थी।

अब वे वन-भूमि में प्रविष्ट हो रहे थे। मूली आँखें मूँदकर बैठ गयी और चुपचाप यह प्रार्थना करने लगी—

···जिनके पैर नहीं हैं, वे मेरी हिंसा न करें
जिनके दो पैर हैं, वे मेरी हिंसा न करें
जिनके चार पैर हैं, वे मेरी हिंसा न करें
जिनके अनेक पैर हैं, वे मेरी हिंसा न करें···

शरद ऋतु में जो पेड़ रूक्ष और नग्न हो गये थे, उन्होंने अब हरे, गुलाबी विविध रंगों के वस्त्र ओढ़ लिये थे। कोमल किसलय हवा में सरसरा रहे थे। उनके मध्य से पतली फीकी धूप छन-छनकर झर रही थी। पेड़ों की टहनियों पर बैठे भाँति-भाँति के पक्षी कलरव कर रहे थे। कुछ ही दिनों में जब धूप की तपन बढ़ने लगेगी, तो ये पंख-पखेरू उड़ेंगे और दूऽऽर उत्तरी पर्वतों की हिमानी चोटियों को लाँघकर अपने नीड़ों में जा बैठेंगे और अण्डे-बच्चे देंगे।

पासमान जोत पर खड़ा देख रहा था। उसके रूखे काले बाल हवा में उड़ रहे थे। उसने जो चादर बाँध रखी थी, वह सुरमई रंग की थी और घुटनों तक आती थी। खेस को उसने कसकर लपेट लिया था और बैलों को वह दौड़ा रहा था।

बस्सी जाग गयी थी और चुपचाप माँ की गोद में लेटकर ज्योतिहीन नेत्रों से देख रही थी। मूली ममतामयी दृष्टि से उसे निहारने लगी। देख-देखकर उसकी आँखें डबडबा आयीं।

आगे जंगल में वृक्षों के पत्ते अधिक घने और टहनियाँ गुँथी

हुई थीं। धुएँ की रेख अब दिखायी नहीं पड़ती थी और पासमान तनिक शंकित मन से खड़ा देख रहा था।

थोड़ी ही देर में वे चितकबरी धूप के नीचे पहुँच गये। वहाँ से मार्ग बायीं ओर मुड़ते हुए पेड़ों में खो जाता था। पासमान को विश्वास था कि मोड़ मुड़ते ही कोई बस्ती या गाँव दिखायी देगा। परन्तु ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ते जा रहे थे, पासमान के हृदय की धड़कनें भी बढ़ती जाती थीं। एक अव्यक्त-सी आशंका ने उसे आ दबोचा। मूली भी सशंक आँखों से देख रही थी।

पासमान आशा-भरी दृष्टि से देख रहा था। परन्तु ज्यों ही गाड़ी मोड़ लेकर मुड़ी और सामने घोर जंगल ही दिखायी दिया, तो पासमान का कलेजा धक्-से रह गया। वहाँ कोई गाँव-कस्बा नहीं था। इसके विपरीत, बायीं ओर घनी झाड़ियाँ और ऊँची चट्टानें थीं और उन्हीं के बीच से निकलता हुआ धुआँ ऊपर उठ-कर आकाश में विलीन होता जा रहा था।

पासमान इतना डर गया कि हड़बड़ाकर उसने बैलों की रस्सियाँ खींच लीं। टप्पर गाड़ी चरमराकर रुक गयी। मूली और पासमान के चेहरों पर एक रंग आता था, एक रंग जाता था।

फिर यह सब जैसे उन्हें व्याकुल और भयभीत करने के लिए पर्याप्त नहीं था। वे चकित होकर देख ही रहे थे कि धुएँ के स्थल के निकट से ही, एकाएक, ढेरों काकल काँव-काँव करते हुए उड़े और आसपास के पेड़ों पर बैठने लगे।

दोनों बहुत डर गये। पासमान ने अनुमान लगाया कि कोई मृत जन्तु झाड़ियों में पड़ा होगा और ये जंगली कौवे उसे नोच-नोचकर खा रहे होंगे। परन्तु वे जिस तरह एकाएक उड़कर पेड़ों पर जा बैठे थे, यह बड़ी भयजनक बात थी। यह सोच-सोचकर

पासमान के रोंगटे खड़े हो गये कि कहीं ऐसा तो नहीं कि कोई हिंस्र जन्तु भोजन करने आ रहा हो और उसे देखकर ही ये काकल पेड़ों पर जा बैठे हों !

भयभीत मनुष्य का मस्तिष्क बड़ा उर्वर हो जाता है और वह तरह-तरह की विलक्षण कल्पनाएँ करने लगता है। अब पासमान ने यह कल्पना कर ली कि सम्भवत: कोई बाघ या चीता चलकर आ रहा है और उसे देखकर ही काकल उड़े हैं।

पासमान बहुत डर गया। वह कल्पना की आँखों से देखने लग गया कि सूखे पत्तों पर कोई बाघ धीरे-धीरे चलकर आ रहा है।…

परन्तु इस भय की वेला में भी वह यह नहीं भूला कि मध्याह्न की वेला में बाघ अथवा चीता इस तरह बाहर निकलकर नहीं आता। फिर ऐसे जन्तु से भी भय नहीं होता जो घायल न किया गया हो। यह बात ध्यान में आते ही उसका डर कुछ कम हुआ। फिर सोचने लगा कि मृत जन्तु को खाने के लिए कोई छोटा-मोटा जन्तु आया होगा – लकड़बग्घा अथवा ऐसा ही कोई जानवर हो सकता था, जिससे भयभीत होने की आवश्यकता नहीं थी। उसी समय एक कटास (वनबिलाव) बायीं ओर की झाड़ियों में से निकला और राह काटकर पेड़ों के नीचे अदृश्य हो गया।

परन्तु यह रहस्य उसकी समझ में नहीं आया कि घने जंगल में निकलते धुएँ का कारण क्या है ! कहीं जंगल में आग तो नहीं लगनेवाली है ?

अब, आगे बढ़ने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं था। पासमान ने मूली को ढाढ़स बँधाया और फिर साहस बटोरकर बैलों को हाँका। उसने सोचा कि यदि कोई जन्तु होगा, तो गाड़ी की आहट सुनकर भाग जायेगा और वे निर्विघ्न निकल जायेंगे।

गाड़ी खड़खड़ाकर चल पड़ी। पासमान भी ऊँचे स्वर से बैलों को कोंचने लगा। फिर भी वह मन की घबराहट को छिपा न सका। यह मूली भी ताड़ गयी और भयभीत आँखों से देखने लगी।

पेड़ों पर काँव-काँव मची हुई थी। पासमान सतर्क और चौकन्ना होकर देख रहा था। उसे एक डर इस बात का था कि कहीं कोई हिंस्र जन्तु झाड़ियों में से निकलकर एकाएक बैलों पर आक्रमण न कर दे।

तभी उसे लगा कि बायीं ओर धुएँवाले स्थल की दिशा से पत्ते चरमराने लगे हैं। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कुछ मनुष्य जल्दी-जल्दी चलकर आ रहे हों। वह आहट किसी जन्तु की नहीं हो सकती थी। पासमान सोचने लगा—कहीं कोई चोर-बटमार घात लगाये तो नहीं बैठे हैं! भयावह जंगल में वह हिंस्र जन्तु से दो-दो हाथ कर सकता था, परन्तु मनुष्य के छल-कपट और नृशंसता से जूझना उसके सामर्थ्य की वात नहीं थी। ऐसे संकट में पशु से मनुष्य अधिक भयंकर सिद्ध हो सकता था।

पासमान डरते हुए देख ही रहा था कि उसे लगा कि झाड़ियों के पीछे कोई दौड़ते हुए आ रहा है। मूली ने भी आहट सुन ली थी। तभी पासमान क्या देखता है कि बायीं ओर की झाड़ियों में ही, एक बड़ी चट्टान के पीछे, दो मनुष्य खड़े हैं और एकटक उन्हीं की ओर देख रहे हैं। उन्हें देखते ही पासमान ने बैलों की रस्सियाँ खींच लीं। जिस संकट की आशंका थी, शायद वह आ पहुँचा था।

मूली ने भी उन्हें देख लिया था। उसकी तो जैसे चीख ही निकल गयी। परन्तु पासमान जैसे संकट को सामने देखकर तैयार हो रहा था। ऐसी वेला में कायरता दिखाना कितना भयावह सिद्ध हो सकता था, यह वह भली-भाँति जानता था—विशेषकर

तब जब कि उसकी पत्नी और बेटी साथ थीं। मूली को आश्वस्त करने के लिए वह धीरे से बोला, "डरो नहीं, भधनी! चुपचाप बैठी रहो..."

प्रकट तो वे दो ही थे, परन्तु यह भी सम्भव था कि इनके साथी आसपास कहीं छिपकर बैठे हों और अवसर देखकर निकल आयें। पासमान टकटकी लगाये देख रहा था। तभी वे दोनों बटमार चट्टानों और झाड़ियों को पार करके जल्दी-जल्दी चल पड़े। उनके हाथों में मोटी और लम्बी लाठियाँ थीं। उनकी आकृतियाँ भयानक थीं। उनकी विचित्र वेशभूषा से सहज ही अनुमान लगाया जा सकता था कि वे जंगलों में घूमनेवाले कटल्लू अर्थात् व्याध थे जो अकेले-दुकेले बटोहियों को लूटकर मार डालते थे।

एक बटमार ठिगना और मोटा था। दूसरा तनिक लम्बा और दुबला-पतला। ठिगने बटमार की दाढ़ी-मूँछ नहीं थी। लम्बा बटमार डड्ढार था, अर्थात् उसकी बड़ी-बड़ी दाढ़ी-मूँछ थी। उन्होंने घुटनों तक काले जँघिया पहने हुए थे। ऊपर मट-मैले झगे-से थे और उसके ऊपर रस्सी के कायबन्ध कसे हुए थे। उनके सूखे केश उड़-उड़कर उनके चेहरों पर पड़ रहे थे, जिससे वे और भी डरावने लगते थे।

क्षण-भर में ही पासमान ने निश्चय कर लिया कि ऐसी स्थिति में उसका क्या कर्तव्य है। साक्षात विपत्ति सामने खड़ी थी। ऐसी वेला में धैर्य, साहस और युक्ति से ही काम लिया जा सकता था। एक बार जब पासमान ने यह निर्णय कर लिया, तो उसे लगा कि उसके भीतर किसी सोयी हुई शक्ति का अजस्र सोता फूटने लगा है। अब तनिक भी सन्देह नहीं था कि ये बटमार किस उद्देश्य से आये थे। वे हाथों में लट्ठ लिये इस तरह खड़े थे जैसे गाड़ीवान की सामर्थ्य नाप रहे हों। पासमान

भी उन्हें निर्निमेष दृष्टि से देख रहा था। पीछे देखे बिना उसने फुसफुसाकर कहा, "भवनी! डर नहीं। ये शेर हो जायेंगे..."

दोनों बटमार जैसे परस्पर परामर्श कर रहे थे। एकाएक दोनों ने लाठियाँ कन्धों पर रखीं और फिर वे धीरे-धीरे बैल-गाड़ी की ओर बढ़े।

मूली के तो प्राण ही कण्ठ तक आ गये। पासमान ने कहा, "बस्सी को सँभालकर पकड़ लो। स्यात सकट को भगाकर ले जाना पड़े..."

बटमार नाप-नापकर पग उठा रहे थे। पासमान को समझते देर नहीं लगी कि वे उसकी शक्ति नापे बिना कोई जोखिम मोल नहीं लेना चाहते थे। इससे उसका मनोबल बढ़ गया और कनखियों से उसने अपनी बरछी को एक बार फिर देख लिया।

मूली ने बस्सी को वक्ष के साथ सटा लिया था। बटमार गाड़ी से लगभग बीस हाथ के अन्तर पर खड़े हो गये। फिर लम्बा डड्ढार लठैत तो वहीं रुक गया और ठिगना लठैत दो पग आगे बढ़ आया और लाठी भूमि पर टकोरकर बड़े कर्कश स्वर में बोला, "नीचे उतरो सग्गड़ से...इहाँ आओ..."

पासमान का अनुमान ठीक था। बटमार सोचे-समझे बिना कोई जोखिम नहीं उठाना चाहते थे। इसलिए पासमान निश्चय नहीं कर पा रहा था कि वह बटमार के आदेश का पालन करे या उल्लंघन! मूली डरी हुई आँखों से देख रही थी। धीरे से बोली, "नहीं, मत उतरो..."

परन्तु पासमान ने संकेत से मूली को बरज दिया। फिर वह धीरे-धीरे बैलों की रस्सियाँ टप्पर के साथ बाँधने लगा। मूली मना करती रह गयी। पासमान धीरे से उतरा, नंगे पैरों धीमे-

धीमे चलकर गया और भूरे बैल के मुड़वा सींगों के निकट जाकर खड़ा हो गया।

लठैत ने वहीं खड़े-खड़े पूछा, "क्या नाम है तुम्हारा ? किस गाँव के वासी हो ? कहाँ जा रहे हो ?"

उसका स्वर फटे हुए बाँस-जैसा था। पासमान सहमा-सहमा सा खड़ा था और उत्तर जुटाने का उपक्रम कर रहा था। उसी क्षण मूली को ध्यान आया कि उसके हाथ में गोखरू है और कानों में तिरकुली। बस, बड़ी चतुराई से उसने सिर का चोवर बाँह पर गिराया और गोखरू उतार लिया और फिर उसे चुपचाप पीठ के पीछे टप्पर में छिपा दिया। यह सब करते-करते जैसे उसके प्राण गले तक आ गये।

पासमान के मुँह से शब्द नहीं निकल रहे थे। किसी तरह अटक-अटककर वह बोलने लगा। उसने बताया कि उसका नाम पासमान है, जलावत गाँव का वासी है और तक्कसिला अर्थात् तक्षशिला जा रहा है…

बटमार जैसे चौंक पड़ा। अचरज करते हुए बोला, "तक्कसिला ! तक्खसिला तो बहुत दूर है इहाँ से ! इतनी दूर क्या करने जा रहे हो ?"

डड्ढार लठैत जैसे इस सब पचड़े में नहीं पड़ना चाहता था। एकाएक चिढ़कर बोला, "तुम्हें क्या लेना-देना है इस बात से ! चाहे जायें भाड़ में ! इससे कहो, जो कुछ इसके पल्ले है, निकाल धरे चुपचाप—सोना-चाँदी, गहना-गट्टा, सब कुछ…"

सुनते ही पासमान के तो हाथ-पैर फूलने लग गये। वह जानता था कि मूली के हाथ में गोखरू और कानों में कर्णफूल। गाड़ी में बहुत-सा खाने-पीने का सामान भी था। कपड़ा-लत्ता भी। कौड़ियों की एक थैली भी थी। यह सब छिन गया, तो

इतनी लम्बी यात्रा कैसे पूरी करेंगे !

यह सोच-सोचकर पासमान के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं। कुछ समय पूर्व जो साहस और मनोबल बटोर पाया था, वह जैसे पल-भर में क्षीण हो गया। फिर भी, एक बात भली-भाँति उसकी समझ में आ गयी थी : वह यह कि लड़कर वह इन कठोरहृदय लठैतों से पार नहीं पा सकेगा। मारकर डाल दें, तो किसी को भनक भी नहीं पड़ेगी; अतः युक्ति और उपाय से ही काम लेना श्रेयस्कर था। इसलिए जैसे अनुनय-विनय करते हुए बोला, "तात ! हमारे पल्ले कुछ नहीं। हम निर्धन गामवासी हैं। बड़ी बिपदा में हैं। हमारे पास तुम्हें देने के लिए कुछ नहीं…"

परन्तु लठैत ऐसे माननेवाले नहीं थे। ठिंगना लठैत बोला, "बच्चा ! हमें सिखाता है ! सैकड़ों गावुत यात्रा करके राजा की राजधानी जा रहे हो और कहते हो कि पल्ले कुछ नहीं ! जिसके पास सग्गड़गाड़ी हो, दो-दो वल्द (बलीवर्द या बैल) हों, यह हम कैसे मान लें कि उसके पल्ले कुछ नहीं है…"

पासमान जानता था कि इन शठों से पार पाना इतना सरल नहीं था। फिर भी, उसने एक और प्रयत्न किया। उसी तरह विनीत स्वर में बोला, "मैं झूठ नहीं कहता, महाराज ! हम लोग बड़ी बिपदा में हैं। टप्पर में हमारी पत्नी है। गोद में एक कन्या है, जो जनम से अन्धी, बहरी है। उसी का उपचार करवाने तक्कसिला जा रहे हैं। हम झूठ नहीं कहते। चाहे हाथ से जल छुड़वा लो।"

पासमान जैसे एक ही साँस में यह सब कह गया। उसे भरोसा था कि उसकी दयनीय स्थिति जानकर कठोरहृदय बटमार भी पसीज जायेंगे। परन्तु यह उसकी भ्रान्ति सिद्ध हुई। बटमार इतने कठकरेज थे कि उसकी एक नहीं सुनी उन्होंने। दढ़ियल

लठैत बोल पड़ा, "बलभद्दर ! यह इस तरह नहीं मानेगा। इसकी घरनी के हाथ-कान-पैर टटोलकर देख। उसके गले में निष्क-माला होगी और कटि में कटित्तर। सग्गड़ में रखा सारा सामान भी निकाल धर नीचे···इसके अपने कानों में कुण्डल हैं···"

पासमान समझ गया कि इनका हृदय ठोकचे (आम की गुठली के ऊपर का कड़ा छिलका) की नाईं कठोर है। हाथ-पैर जोड़ने या अनुनय-विनय से नहीं, अब साहस से ही काम लेना होगा। इसके अतिरिक्त और कोई उपाय भी नहीं था। इसलिए क्षण-भर में उसने निश्चय कर लिया।

बलभद्दर ने अपने साथी का संकेत पाकर कन्धे पर लाठी रखी। परन्तु अभी उसने एक पैर ही उठाया था कि एकाएक पासमान चीखकर उछला। पलक झपकने की देर में उसने टप्पर में से बरछी निकाली और इस तरह भाँजकर खड़ा हो गया कि बलभद्दर को बींधकर ही रख देगा। देखते ही बलभद्दर तो जैसे वहीं जड़ हो गया। उसके हाथ से लाठी छूटकर गिर पड़ी और वह ऐसे देखने लगा जैसे साँप सूँघ गया हो उसे।

यह सब देखते ही पासमान का मनोबल ऐसा बढ़ा कि दोनों लठैतों को चुनौती देते हुए बोला, "आओ, आओ, आगे बढ़ो। खड़े देख क्या रहे हो ! आओ, उतारो एक स्त्री के गहने ! निकाल धरो सकट का सामान···"

लठैतों ने सोचा भी नहीं था कि ऊपर से दुबला-पतला लगने-वाला यह साधारण ग्रामीण उन्हें इस तरह चुनौती देगा। उन्हें भय लगा कि कहीं वह सचमुच बरछी छोड़ ही न दे। दोनों खड़े खड़े काँप रहे थे और बार-बार क्षमा माँगते थे। लगता था कि इसी प्रतीक्षा में थे कि ग्रामीण बरछी नीचे करे और वे भागें।

अब यह तो स्पष्ट हो गया कि वे अकेले थे; आसपास कोई नहीं था। परन्तु पासमान उन्हें इतना सस्ता नहीं छोड़ना चाहता

था। डर उसे इस बात का था कि यहाँ से निकलकर ये गये, तो अवश्य ही दल-बल सहित राह रोकेंगे। इसलिए बोला, "परन्तु तुम लोगों का क्या भरोसा कि तुम फिर राह नहीं रोकोगे..."

बलभद्दर गिड़गिड़ाते हुए बोला, "इतनी दुर्दसा करवाने के पस्चात भी काले कुत्ते ने काटा है जो फिर ओखली में सिर देंगे! हमारे बाप-दादा की सौगन्ध..."

पासमान भी इतना नहीं खींचना चाहता था कि रस्सी टूट जाये। इसलिए डपटकर उसने चेतावनी दी और उन्हें भाग जाने को कहा।

दोनों बटमार जैसे तपती धरती पर खड़े थे। अपनी लाठियाँ वहीं छोड़ वे इस तरह भागे जैसे कोई भूत-पिशाच देख लिया हो। दायीं ओर ढलान थी और उससे परे नदी का कछार। उतरकर वे भागते चले गये। कुछ दूर तक उनके सिर दिखायी पड़ते रहे। फिर वे भी ओझल हो गये।

पासमान ने सपने में भी नहीं सोचा था कि इतने क्रूर, नृशंस दिखनेवाले ये बटमार इतनी जल्दी लीद करेंगे। उन्हें पूँछ दबाकर भागते हुए देखकर पासमान का मन किया कि वह ठहाके मारकर हँसे।

परन्तु मूली अब भी सहमी हुई बैठी थी। बोली कि जल्दी से गाड़ी हाँक ले चलो। ऐसा न हो कि ये दुष्ट फिर आ धमकें और लेने के देने पड़ जायें।

यह भी सम्भव था। किसी भी समय वे दल-बदल सहित आकर धावा बोल सकते थे। इतना अपमानित होने और हेठी करवाने के पश्चात भी क्या वे चुप बैठंगे?

पासमान दौड़कर गया और दोनों लाठियाँ बटोर लाया।

बरछी के साथ उन्हें गाड़ी में रखकर वह उछलकर जोत पर बैठ गया और जल्दी-जल्दी बैलों को हाँकने लगा। काकल पेड़ों से उतरकर अपने भोजन पर टूट पड़े थे और नोच-नोचकर खा रहे थे।

गाड़ी दौड़ी, तो एक साही डरकर भागा और उनकी राह काटकर बायीं ओर अदृश्य हो गया।

बैल भागे जा रहे थे। जब वे धुएँ के निकट पहुँचे, तो बस, देखते ही रह गये। दो शिलाओं के बीच जलती हुई आग पर शूल से बिंधा एक हिरण भुन रहा था। साथवाली एक चौड़ी शिला पर एक और हिरण पड़ा था जिस पर जंगल की नीली मक्खियाँ भिनभिना रही थीं और जंगली कौवे चोंचें मार रहे थे।

मूली और पासमान ने चकित आँखों से देखा। आग पर पकनेवाले हिरण का निचला भाग जल चुका था और जलाँध आ रही थी। कोई और अवसर होता, तो पासमान उतरकर जाता और दोनों हिरणों को उठाकर गाड़ी पर रख लेता। अब खटका इस बात का था कि बटमार कहीं फिर न आ धमकें। इसलिए वह रुका नहीं और बैलों को दौड़ाते हुए आगे निकल आया।

विपत्ति टल गयी थी। अब जाकर पासमान को इस बात की प्रतीति हुई कि वे कितनी भारी विपत्ति से उबरकर आये थे। यह तो कहो कि भाग्य अच्छा था, नहीं तो प्राणों के लाले पड़ जाते।

बैल झाड़-झंखाड़ को रौंदते हुए भागे जा रहे थे। पासमान को अब एक खटका इस बात का था कि जंगल से कोई हिंस्र जन्तु न निकल आये। गाड़ी को वह किसी घनी झाड़ी के निकट नहीं जाने देता था। डरता था कि कहीं झाड़ियों में सोया कोई जन्तु

नींद में विघ्न पड़ने से भड़ककर आक्रमण न कर दे।

आगे मार्ग चौड़ा था और किसी प्रकार का भय नहीं था। फिर भी मूली का धड़का अब भी दूर नहीं हुआ। प्रति क्षण उसे यही लगता था कि बटमार पेड़ों के पीछे छिप-छिपकर आ रहे हैं और किसी भी समय धावा बोल सकते हैं।

पासमान टप्पर में रखी बटमारों की लाठियों को देख रहा था। महीनों तेल पिला-पिलाकर बटमारों ने इन्हें तैयार किया होगा। दोनों सिरों पर मोटे-मोटे छल्ले मढ़े हुए थे। एक वार सिर पर पड़ जाये, तो दिन को भी तारे दिखायी पड़ने लगें! देख-देखकर पासमान फूला नहीं समाता था। गर्व भी क्यों न करता! उसने अकेले ही दो-दो बटमारों के छक्के छुड़ा दिये थे। फिर वह यह सोच-सोचकर लज्जित हुआ कि क्योंकर उसने मान लिया कि भरी दोपहरी में गाँव-घर में कोई इतनी अलम्बे. (ऊँची लपट) वाली आग जलाता है···

मूली कह रही थी, "चले थे, तो बड़ा दुर्निमित्त दिखायी दिया था। जिस कुएँ पर हम मुँह-हाथ धोने गये थे, वहाँ एक जले हुए पेड़ पर बैठा कौआ बोल रहा था। बस, तभी से भरम हो गया था मुझे। तुमसे कहा नहीं कि व्यर्थ ही भरम करोगे।"

पेड़ धीरे-धीरे विरल होने लगे थे। अब आकाश भी अधिक चौड़ा दिखायी पड़ता था। मूली ने आँखें मूँदीं और चुपचाप बैठकर वह यह प्रार्थना करने लगी—

···सब्बे सत्ता सब्बे पाणा···

अर्थात सभी सत्व, सभी प्राणी, सभी जीव सुखी रहें। किसी को कोई दुख न हो। मैंने अपनी रक्षा कर ली, मैंने अपनी रक्षा कर ली···

पासमान निश्शंक था। उसका मन कहता था कि अब बटमार अपना काला मुँह लेकर नहीं आयेंगे और उनकी यात्रा निर्विघ्न पूरी होगी। फिर उसे यह भी विश्वास था कि निकट ही कोई बस्ती होगी।

परन्तु मूली का कलेजा अब भी धुक-धुक कर रहा था। वह बार-बार पेड़ों के नीचे देखती थी कि कहीं बटमार छिप-छिपकर पीछा न कर रहे हों!

आगे मार्ग एक टीले पर से होकर जाता था। चढ़ाई चढ़ते हुए बैलों की गति मन्थर पड़ गयी थी। मूली बता रही थी कि किस प्रकार बटमारों का अभिप्राय समझते ही उसने चतुराई से अपना गोखरू उतारकर छिपा दिया था।

बैल पूरा बल लगाकर गाड़ी खींच रहे थे। चितकबरा मुँह से फेन छोड़ रहा था, परन्तु पासमान बार-बार उन्हें कोंचता और उकसाता था।

देखते-देखते वे ऊपर चढ़ आये। पासमान ने रस्सियाँ खींच-कर गाड़ी रोक ली। मार्ग सीधा नीचे उतर जाता था और दूर-दूर तक विस्तृत हरा मैदान दिखायी पड़ता था। चारों ओर धूल ही धूल उड़ रही थी। पासमान टकटकी लगाये देखने लगा।

तभी दूर, उत्तर-पूर्व दिशा में, उसे एक अमराई दिखायी दी, जिसके निकट कुछ मड़ैयाँ थीं। देखते ही वह उछल पड़ा और उत्साह में भरकर बोला, "वोह रहा कोई गामड़ा···वो···वोऽऽ, पेड़ों के उस पार, जहाँ रहट दिखायी पड़ता है···"

मूली ने उचककर देखा। उसकी आँखें चमक उठीं। पासमान जैसे सन्तुष्ट होकर कह रहा था, "अब चिन्ता की कोई बात नहीं। सूरज डूबने से बहुत पहले हम पहुँच जायेंगे।"

बैल खड़े-खड़े हाँफ और थूक रहे थे। सूरज नीचे उतरने लगा था। पासमान ने टिटकारी भरी और टप्पर गाड़ी

खड़खड़ाकर चल पड़ी।

आगे उतराई थी। इसलिए वह बैलों को सँभाल-सँभालकर उतारने लगा। जंगल बहुत पीछे छूट गया था। आगे खेत भी दिखायी पड़ने लगे थे। अब बटमार उनका बाल भी बाँका नहीं कर सकते।

मार्ग खेतों में से होकर जाता था, जिनमें हाड़ी गेहूँ, सरसों की उपज खड़ी थी। थोड़ी ही दूर एक रहट था, जिसमें ऊँट जुता हुआ था। रहट की चूँ-चरर यहाँ तक सुनायी पड़ती थी।

ज्यों-ज्यों सूरज नीचे उतर रहा था, हवा में ठण्डक आने लगी थी। मूली ने एक कपड़ा लेकर बस्सी के पैरों पर डाल दिया।

गाड़ी धीरे-धीरे रहट की ओर बढ़ी। रहट के साथवाले टीले पर खड़ा एक बालक बिटर-बिटर टप्पर गाड़ी को आते हुए देख रहा था। रहट का ऊँट खड़ा हो गया था और पतनाले में आनेवाला पानी रुक गया था। टीले के साथवाले पेड़ के नीचे, जिस पर एक मचान बना हुआ था, पासमान ने जाकर टप्पर गाड़ी खड़ी कर दी।

वह ग्यारह-बारह बरस का दुबला-पतला बालक था। उसके शरीर पर एक जर्जर-सा झगा था और वह दाँतों में उँगली दबाये उन्हें देख रहा था। पासमान ने गाड़ी में बैठे-बैठे ही पूछा, "कौन गाम है यह?"

परन्तु बालक निर्निमेष दृष्टि से उन्हें देख रहा था। पासमान चकित होकर मूली की ओर देखने लगा। फिर उसने चिल्लाकर पूछा। जब बालक पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, तो पासमान सहज ही समझ गया कि यह बालक गूँगा-बहरा है।

सचमुच, बालक गूँगा-बहरा था, क्योंकि उसे पता ही नहीं चला था कि रहट का ऊँट रुक गया था। एकाएक जो उसने मुड़कर देखा, तो फिर एक ही छलाँग में वह टीले से उतरा और

दौड़कर ऊँट के पीछे मिरखम पर जा बैठा और छड़ी से उसे कोदने लगा। ऊँट चल पड़ा और रहट की चूँ-चरर, और कुत्ते की टिक-टिक, किट-किट की ध्वनि एक बार फिर गूँजने लगी और माला में बँधे लोटे अर्थात टींड स्वच्छ, शीतल जल ला-लाकर पतनाले में गिराने लगे।

नाली में फिर से पानी की धारा बह निकली और वहाँ से जाकर ठेवके में और फिर खेतों में बहने लगी।

पासमान गाड़ी से उतरकर बैलों को खोलने लगा। ऊँट लम्बे-लम्बे डग भरता चक्कर काट रहा था और बालक मिरखम पर बैठा एकटक टप्पर गाड़ी की ओर देख रहा था। पासमान ने बैलों को पानी के निकट छोड़ा और स्वयं नीचे बैठकर मुँह-हाथ धोने लगा।

शीतल जल से जैसे उसकी सारी थकान मिट गयी। मुँह-हाथ धोकर उसने दो घूँट पानी पिया, फिर सगरी भरकर मूली के लिए ले आया। बोला, "तुम मुँह-हाथ धोकर कुल्ला कर लो। तब तक मैं इससे गाँव के विषय में पूछने का जतन करता हूँ।"

परन्तु गूँगे बालक से सम्भाषण महाभारत के युद्ध से अधिक विकट था। न तो पासमान उसे अपने मन की बात समझा पा रहा था और न ही वह उसकी बात समझ पाता था। अन्त में जब पासमान हताश होकर चलने को हुआ, तो बालक टीले पर चढ़ गया और गाँव की दिशा में छड़ी से संकेत करने लगा।

पासमान समझा या नहीं, सिर हिला-हिलाकर प्रसन्नता प्रकट करने लगा। अब बालक भी धीमे-धीमे मुस्कराने लगा और फिर संकेतों से जताने लगा कि तुम लोग चलो, मैं भी पीछे-पीछे आ रहा हूँ।

पासमान ने बैलों को गाड़ी में जोत लिया। बालक रहट से ऊँट को खोल रहा था। पासमान को अपनी ओर लक्ष्य करते देख,

उसने फिर संकेत से कहा कि तुम जाओ, मैं आ रहा हूँ।

जहाँ पासमान की टप्पर गाड़ी खड़ी थी, उससे कुछ दो धनुष के अन्तर पर धूल में साँप की लीक दिखायी दी जो दायीं ओर खेतों में चली गयी थी। लीक को देखते ही पासमान ने पहचान लिया कि इधर से कोई विषैला साँप निकलकर गया है, क्योंकि लीक बड़ी टेढ़ी-मेढ़ी थी। विषहीन साँप की लीक इतनी टेढ़ी नहीं होती।

टप्पर गाड़ी अभी कुछ ही दूर गयी होगी कि पीछे से गूँगा बालक ऊँट पर सवार होकर आया और गाड़ी के आगे-आगे चलते हुए संकेत करने लगा, चले आओ, मेरे पीछे-पीछे चले आओ। ऊँट के साथ-साथ ऊँट का बोता भी आ रहा था।

उतरते हुए सूर्य की ताँबिया लाली रिक्त आकाश में भरने लगी थी। टप्पर गाड़ी के आगे-आगे भेड़-बकरियों का अजड़ (रेवड़) धूल उड़ाते हुए जा रहा था।

गूँगे बालक का ऊँट और उसका बोता धूल के बादलों में अदृश्य हो गया। धूल इतनी भारी थी कि लगता था जैसे उसके नीचे भेड़-बकरियों का स्वर भी दबने लगा था। पासमान ने बैलगाड़ी रोक ली। वह तब तक बैठा प्रतीक्षा करता रहा जब तक धूल समाप्त नहीं हो गयी।

वह छोटी-सी पुरानी बस्ती थी, जिसका नाम झाँझर था—एक पोखर के किनारे बसी हुई थी। बायीं ओर, पोखर की गोलाई के साथ-साथ, कच्चे घर-मकान और मड़ैयाँ थीं। अन्तिम छोर पर एक विशाल वटवृक्ष खड़ा था। ऐसा प्रतीत होता था मानो वह अर्द्धवृत्त में खड़े इन मकानों की पाँत को सहारा दे रहा हो। यदि उसे हटा लिया जाये, तो एक-एक करके सारे घर-

मकान करवट बैठ जायं।

पोखर का जल लगभग सूखकर बीच में केन्द्रित हो गया था। पोखर की फटी हुई धरती पर दो गधे चलकर जा रहे थे। तीसरा गधा पोखर के पानी से मुँह लगाये खड़ा था। उसके निकट ही जल में आधा डूबा एक सूखा ठूँठ पड़ा था। पोखर की धरती में जहाँ आर्द्रता थी, वहाँ से गधे के पैरों के चिह्न दिखायी पड़ते थे, जो आगे कीच और पानी में जाकर विलीन हो जाते थे।

मूली उचक-उचककर देख रही थी। गूँगा बालक न जाने कहाँ अदृश्य हो गया था!

बायीं ओर अमराई थी। एकाएक उधर से बहुत-से कण्ठों की खिलखिलाहट सुनायी पड़ी। मूली और पासमान ने एकसाथ पलटकर देखा। पेड़ों के नीचे कोई बन्दरवाला खेल दिखा रहा था। अब वह पटच्चर (पुराना कपड़ा) झाड़कर खड़ा हो गया था और भीड़ खिडने लगी थी।

तभी गाँव में टप्पर गाड़ी पर उनकी दृष्टि गयी। बहुत-से लोग दौड़े आये। इनमें अधिक बच्चे थे. जो अधनंगे थे। बस्सी जाग गयी थी और भर्राये स्वर में रो रही थी। बच्चे उत्सुक दृष्टि से टप्पर गाड़ी के पीछे चलते हुए ऐड़ियाँ उठा-उठाकर देखने का यत्न करते थे कि गाड़ी में कौन बच्चा रो रहा है।

एक ग्रामीण, टप्पर गाड़ी के साथ-साथ चलते हुए पासमान से बातें करने लगा। पासमान ने बताया कि वह भटककर इधर आ निकला है और घना जंगल पार करके आया है। वह बड़ा चकित हुआ और तत्काल पासमान को गामणी (गाँव के मुखिया) के घर ले जाने को तैयार हो गया।

बच्चे टप्पर गाड़ी के आगे-आगे हुड़दंग मचाते हुए भाग रहे थे। दो बच्चे सबसे आगे दौड़कर गये और गामणी की ड्योढ़ी

में घुसे। उन्होंने जाकर गामणी की कन्या को बताया कि गाँव में कोई अतिथि आया है। यह सूचना देकर उन्होंने बड़े गौरव का अनुभव किया और खड़े-खड़े इतराने लगे।

गामणी की बेटी का नाम सिरि था, जिसकी आयु बारह-तेरह वर्ष की थी। वह नंगे पैरों दौड़ी आयी और आकर चौखट पर खड़ी हो गयी। उसने पीली घगरी के ऊपर काली कुर्ती पहन रखी थी और बालों की वैसी ही मेढ़ियाँ थीं जैसी कि मूली की थीं।

भीतर से गामणी भी निकलकर आ गया। उसका ऊँचा डील-डौल था और उसकी दाढ़ी-मूँछ के बाल पकने लगे थे। उसका नाम महीधर था। महीधर के सिर पर दूध-सी पगिया थी। नीचे उसने वैसा ही झगा और धोती धारण कर रखी थी। पगिया के नीचे पीछे ग्रीवा पर बालों की कचूणियाँ (बबरियाँ) निकली हुई थीं। उसने नीचे उतरकर कोलाहल करते हुए बच्चों को रोका, "बच्चो! कोलाहल न करो, आगे से हट जाओ।"

टप्पर गाड़ी आकर ड्योढ़ी के निकट खड़ी हो गयी। बच्चे उचक-उचककर देखने लगे। कुछ बच्चे पहियों पर चढ़कर खड़े हो गये और प्रसन्न होकर हिलने लगे। गामणी ने सबको खदेड़कर भगा दिया।

पासमान का मुँह-सिर धूल से अटा हुआ था। महीधर उससे बातें करने लगा और फिर अपनी बेटी से बोला कि पाहुनों को वह भीतर लिवा ले जाये।

लजीली सिरि चौखट में खड़ी देख रही थी। धीरे से नीचे उतरी और टप्पर में बैठी मूली की ओर देखने लगी। फिर हाथ बढ़ाकर उसने बस्सी को अपनी गोद में ले लिया और मूली को गाड़ी से उतारकर वह भीतर ले चली।

दो-तीन व्यक्ति आकर पासमान का सामान उतारने लगे। एक ग्रामीण बैलों को खोलकर पानी दिखाने ले गया।

पासमान ने गामणी के साथ ड्योढ़ी में पैर रखा। ड्योढ़ी के उस पार चौड़ा आँगन था, जिसमें बदरी के पेड़ पर चिड़ियों की चूँ-चूँ मची हुई थी। बायीं ओर सात हाथ ऊँची भीत के साथ-साथ नाँदें बनी हुई थीं जिनमें ढोर-डंगर खड़े गोतावा खा रहे थे। आँगन के दायीं ओर लम्बा-चौड़ा प्रसार था। महीधर ने उसी के नीचे खाट पर पासमान को बिठाया और बोला कि आराम से बैठ जाओ, इसे अपना ही घर समझो।

पासमान को बड़ा संकोच हो रहा था। वह बीच-बीच में दृष्टि उठाकर आसपास देख लेता था। प्रसार के नीचे एक ही पाँत में अनेक द्वार थे। सामने कोने में चौका था, जहाँ एक स्त्री बैठी दूध ओट रही थी।

धीरे-धीरे अँधेरा घिरने लगा। दीये-बाती की वेला हुई, तो गामणी की कन्या एक खम्भे के साथ काठ के दीवट पर दीया जलाकर रख गयी। गामणी और पासमान बैठकर बातें कर रहे थे। सिरि थोड़ी देर पश्चात आयी और दीवट के निकट खड़ी होकर पिता को संकेत से बुलाने लगी।

"क्या बात है?" महीधर अचरज से देखते हुए उठा और पैरों में चमरौंधा उलझाते हुए उसके निकट गया, "क्या बात है, सिरि?"

सिरि धीरे-धीरे बोल रही थी, "वो, वो···अन्धी है?"

पासमान ने भी सुन लिया और दुखी होकर देखने लगा। गामणी चकित होकर पूछ रहा था, "कौन अन्धी है? किसे अन्धा बता रही है, पगली?"

पासमान जैसे दुख के अथाह सागर में डूबने-उतराने लगा था। सिरि बता रही थी, "वोह-वोह, गोदवाली जातकी!"

गामणी को बड़ा अचरज हुआ। फैली-फैली आँखों से वह देखने लगा। सिरि से जाने के लिए कहकर वह पासमान के पास आ बैठा और बोला, "...अभी-अभी सिरि क्या बक रही थी..."

पासमान की आँखें डबडबा आयीं। वह क्या उत्तर दे। जहाँ भी जाता था, लोग उससे यही जिज्ञासा करते और फिर सारी बात जानकर सहानुभूति दिखाते। यही उसे कचोटता रहता था। घुटनों में सिर दिये बैठा वह बड़े उदास स्वर में बताने लगा, "क्या बताऊँ, उसी के लिए हम ठोकरें खाते फिरते हैं। जन्म से अन्धी है..." उसके कण्ठ से शब्द जैसे अटक-अटककर निकल रहे थे।

गामणी सारी बात समझ गया। जैसे बात बदलने के लिए बोला, "सौम्य! बहुत थके हुए हो। हाथ-मुँह धो लो, भोजन करके विश्राम करो...।"

अँधेरा पूरी तरह उतर आया था। गामणी उठकर चौके की ओर चला गया।

आँगन के बदरी वृक्ष पर किसी ने पंख फड़फड़ाये। पासमान सिर उठाकर देखने लगा। शायद कुक्कुटी थी, जो रात के बसेरे के लिए पेड़ की शाखा पर जमकर बैठने गयी थी। वह बार-बार पंख फड़फड़ाती थी, सँभलती थी और फिर गिरने-गिरने को हो जाती थी। अन्त में वह जमकर बैठ गयी। पासमान का ध्यान बँट गया था। एक क्षण के लिए वह अपनी सब चिन्ताएँ भूल गया।

तभी गाँव के आठ-दस व्यक्ति आ गये और पासमान के पास बैठकर बातें करने लगे। सारे गाँव में यह बात फैल गयी थी कि एक गाड़ीवान जंगल लाँघकर आया है। वे उसकी दुख-गाथा सुनने को उत्सुक थे। पासमान बोला, "लम्बी गाथा है। कैसे वर्णन करूँ!"

एक ग्रामीण बोला, "सो तो ठीक, बेटा ! कोई किसी की दुख-पीड़ा बाँट नहीं सकता। पर कह देने से मन का बोझ तनिक हलका हो जाता है। धीरज से काम लो। प्रभु सब ठीक करेंगे।"

चौके पर स्त्रियाँ भोजन बना रही थीं। चूल्हे पर कटवी रखी थी और उसके चारों ओर साँप की लपलपाती अनेक जिह्वाओं की तरह लाल-लाल अलम्बे निकल रहे थे। निकट ही मूली उदास बैठी थी। सिरि आँगन में बस्सी को गोद में लिये डोल रही थी।

पासमान अटक-अटककर बोल रहा था और सब लोग एकाग्र होकर सुन रहे थे। पासमान ने बताया कि किस तरह उनके कुल में बस्सी पहली कन्या थी। बड़ी मन्नतों से प्रभु की कृपा हुई और उन्हें कन्या का मुँह देखने को मिला···यह कहते-कहते पासमान का कण्ठ भर आया। बोला, "न जाने किन पापों का फल है यह···"

पेड़ पर बैठी कुक्कुटी पंख फड़फड़ाने लगी। सबने कहा कि स्यात कोई बिल्ली उस पर झपट्टा मार रही है। गामणी उठकर गया और अँधेरे में ताली बजा-बजाकर बिल्ली को खदेड़ने लगा।

एक बूढ़ा ग्रामीण पासमान को समझा रहा था, "धीरज धर, बेटा ! प्रभु सब ठीक करेंगे। बुद्धिमान मनुष्य निराश नहीं होता। तुमने अपना दुख प्रकट करने की सामर्थ्य पायी है, यही बड़ी बात है। जिसमें दुख कहने और सहने की शक्ति होती है, उसके बुरे दिन जल्दी निकल जाते हैं। तुम्हारे सुख के दिन लौटेंगे।"

बड़ी रात बीत चुकी थी। एक-एक करके सब ग्रामीण चले गये। सिरि थाली में भोजन परोसकर ले आयी। पासमान को बड़ा संकोच हो रहा था। गामणी ने पलांडु (प्याज़) उठाकर

खाट के पाये पर रखा और मुक्का मारकर उसे कुचला। फिर दोनों हथेलियों में दबोचकर उसने पलांडु का कड़वा पानी गारकर पासमान की थाली में रख दिया।

पासमान को भोजन में रस आ गया। कितने दिनों पश्चात आज उसने इस तरह चैन से बैठकर भोजन किया था। गामणी बीच-बीच में पुकारकर कभी रोटी, कभी दाल लाने के लिए कहता था। पासमान बार-बार थाली पर हाथ रखकर मना करता, परन्तु गामणी कुछ-न-कुछ थाली में रख ही देता था। सिरि एक कटोरी में थोड़ा घी-शक्कर ले आयी। पासमान ने बहुतेरा मना किया, पर गामणी कब सुननेवाला था। ठट्ठा करते हुए बोला, "अरे घी-शर्करा नहीं खाओगे, तो तक्कसिला कैसे पहुँचोगे!"

पासमान ने वहीं बैठे-बैठे अदवायन पर झुककर दाँतों में उँगली चलाते हुए कुल्ला किया और तृप्त होकर कृतज्ञता प्रकट की।

चौके पर स्त्रियाँ भोजन कर रही थीं।

गामणी बिछौनों के लिए खेस-दरियाँ और कम्बल ले आया। पासमान नीचे उतरने लगा, तो गामणी ने उसे सावधान किया, "नंगे पैर न खड़े रहो! यहाँ साँप-बिच्छू बहुत निकलते हैं।"

आँगन की ड्योढ़ी का द्वार खुला रह गया था। एक कुत्ता घुसकर चौके तक चला आया और अगली टाँगों के सहारे बैठकर जीभ लपलपा रहा था। गामणी ने देखा, तो वहीं से उसे हुड़ककर भगाया। कुत्ता डर के मारे क्वींऽऽ करते हुए भागा और देहरी लाँघकर बाहर अँधेरे में अदृश्य हो गया।

पासमान बिछौने पर लेटा, तो जैसे उसका सारा शरीर ढीला बिखर रहा था। गामणी भी आकर साथवाली खाट पर लेट गया और बातें करने लगा। बोला, "तुमने अच्छा छकाया बटस्थ

सारों को ! निर्भीक होकर विपत्ति का सामना करो, तो प्रभु भी सिर पर हाथ रखते हैं। साहसी जन पर्वत भी तोड़ सकता है।"

पासमान सवेरे उठकर चल देना चाहता था। गामणी उसकी एक नहीं सुनता था। वह हठ कर रहा था कि पासमान एक-दो दिन झाँझर गाँव में रुके। पासमान जैसे उड़कर तक्षशिला पहुँचना चाहता था। उसे डर इस बात का था कि वर्षा ऋतु से पहले वह अपने गाँव लौटकर न पहुँचा, तो अनर्थ हो जायेगा। सारी बात जानकर महीधर ने आग्रह नहीं किया। लेटे-लेटे ही वह पासमान को मार्ग समझाने लगा।

बातें करते-करते ही पासमान नाक बजाने लगा था। फिर वह इतना बेसुध होकर सोया कि उसे पता ही नहीं चला कि रात को बस्सी ने सारे घर को कितना दुखी किया। पता नहीं उसके पेट में शूल उठता था या क्या बात थी कि रात-भर वह रोती-गसकती रही। कभी सिरि और कभी सिरि की माँ उसे उठाये आँगन-ड्योढ़ी में डोलती रही; गामणी ने भी उसे गोद में लिया, परन्तु पासमान की निद्रा में उन्होंने विघ्न नहीं डाला। सिरि की माँ का कहना था कि कन्या को कुदीठी लग गयी है। इसलिए उसने एक बघनखा निकालकर बस्सी के गले में डाल दिया।

आश्चर्य कि थोड़ी ही देर में बस्सी शान्त होकर सो गयी!

अकस्मात पासमान की नींद उचट गयी। वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। उसे लगा कि कोई चीखा था।

पौ फट रही थी। निकट गामणी की खाट खाली पड़ी थी। ढोर-डंगर भी अपने खूँटों पर नहीं थे। बदरी वृक्ष पर चिड़ियों का कोलाहल मचा हुआ था। पहले तो पासमान ने समझा कि स्यात वह सपना देख रहा था। परन्तु फिर एकाएक उसने देखा

कि बायीं ओर प्रसार के नीचे, खम्भे के साथ, कोई खड़ा है। पास-मान बहुत डर गया। फिर उसने तन पर लिपटी राहड़ी एक (प्रकार का कम्बल) उतार फेंकी और काँपते स्वर में कहा, "कौन है?"

कहने की देर थी कि खम्भे के साथ खड़ी सिरि चीखती हुई आयी और पासमान से चिपट गयी और 'सप्प्, सप्प्' कहकर रोने-चिल्लाने लग गयी।

पासमान के हाथ-पैर फल गये। वह उछलकर खड़ा हो गया, "कहाँ है सप्प् ?"

सिरि के मुँह से भय के मारे बोल नहीं निकल रहे थे। पास-मान की चिल्लाहट घर-भर में गूँज गयी थी। सिरि की माँ और मूली तथा एक-दो और स्त्रियाँ उठकर दौड़ी आयीं। सिरि पासमान से छिटककर अपनी माँ से चिपट गयी और रो-रोकर बताने लगी कि चक्की के नीचे।

सब भयभीत, त्रस्त होकर देख रहे थे। सहसा पासमान चिल्लाकर बोला, "कोई जना नीचे न खड़ा रहे। सब खाट पर चढ़ जाओ..."

पासमान ने लपककर लाठी उठा ली। फिर चेतावनी दी और कन्धे पर लाठी रखकर वह चक्की के निकट गया। मूली का कलेजा धक-धक करने लगा। सिरि की माँ भयभीत होकर बोली, "नंगे पैरों मत जाओ..."

परन्तु पासमान ने एक नहीं सुना।

चक्की के निकट ही ऊँट का किचावा और उसके साथ गधे की झूल और पलान रखे थे। पासमान जैसे फूँक-फूँककर चल रहा था। निकट जाकर उसने लाठी से झूल को छेड़ा। छेड़ने की देर थी कि नीचे से सर-सर करता हुआ लम्बा साँप निकल आया और किचावे के नीचे घुस गया।

भय के मारे सब स्त्रियाँ रोने-चिल्लाने लगीं। मूली के तो

प्राण ही निकले जा रहे थे···फिर कैसी विपदा आयी है।

पासमान ने आगे बढ़कर किचावे को हिलाया और साँप निकलकर दीवार के साथ टेढ़ा-मेढ़ा रेंगने लगा। पासमान ने लाठी मारी, पर साँप बचकर निकल गया और प्रसार से बाहर आकर खूंटों के साथ बँधे पगहों (ढोर बाँधने की रस्सियाँ) में उलझता हुआ चौके की ओर गया। पासमान ने एक बार फिर सबको चेताया, "नीचे कोई खड़ा न रहे। बड़ा विषैला, कौड़ियों-वाला है···"

पासमान बार-बार लाठी मारता था, परन्तु उसका एक भी वार साँप पर नहीं पड़ा। अब मूली से न रहा गया। वह चिल्ला-कर बोली, "मत मारो, सप्प-देवता को मत मारो···नागहत्या न करो···"

परन्तु पासमान ने किसी की एक न सुनी। आगे-आगे साँप था और पीछे-पीछे वह। परन्तु अचरज की बात यह थी कि पासमान प्रहार करता था और साँप बचकर निकल जाता था। वह दीवार के साथ-साथ रेंगते हुए चौके तक पहुँच गया था। फिर वहाँ से मुड़कर वह घड़ौंची के नीचे घुसा। पासमान ने लाठी मारी, तो साँप पर न लगकर पानी के घड़ों पर लगी और घड़े फूट गये। साँप भीगता हुआ भागा और अपने पीछे पानी की टेढ़ी-मेढ़ी लकीर छोड़ते हुए प्रसार की ओर लपका।

सारे घर में जैसे कुहराम मच गया था। पास-पड़ौस की छतों पर बहुत-से स्त्री-पुरुष एकत्र होकर देख रहे थे। घर की स्त्रियाँ चिल्ला-चिल्लाकर पासमान को बरज रही थीं। परन्तु पासमान किसी की एक न सुनता था। घर में दौड़ते हुए विषैले सर्प को वह इस तरह कैसे छोड़ सकता था!

मूली रो-रोकर दुहाई दे रही थी कि नागदेवता को मत मारो, मत मारो।

साँप ने भूसे की बन्द कोठरी के द्वार के नीचे घुसने का यत्न किया। जब वहाँ उसे कोई मार्ग नहीं मिला, तो लौटकर वह प्रसार से निकल ढोर-डंगरों के पगहों में उलझता हुआ आँगन की भीत की ओर भागा। वहाँ बरसाती पानी की मोरी थी। वह उसी मोरी में घुसा। सबने सोचा कि बाहर निकल जायेगा, परन्तु अचरज की बात कि साँप बाहर न निकलकर मोरी के भीतर किसी छिद्र में घुसता चला गया। जब तक पासमान आये कि वह लगभग आधा भीतर घुस चुका था।

और फिर इससे भी आश्चर्यजनक बात हुई। सबके देखते-देखते, पासमान लपककर आया। उसने आव देखा न ताव, लाठी वहीं फेंकी और दोनों हाथों से साँप को पूँछ से पकड़ लिया और लगा उसे खींचने। मूली तो जैसे पछाड़ खाकर गिर पड़ी और सिरि की माँ उसे सँभालने लग गयी।

पासमान था कि पैरों को जमाये साँप को पकड़े खड़ा था। साँप टस से मस नहीं हुआ। फिर एकाएक पासमान चिल्लाया, "कोई त्रकला (तकला) लाओ, रे!"

सबके हाथ-पैर फूल रहे थ। किसी को कुछ सूझ नहीं रहा था। परन्तु सिरि खाट से कूदी और दौड़कर चरखे का त्रकला ले आयी और डरते-डरते पासमान के निकट गयी। पासमान ने झपटकर एक हाथ से सिरि से त्रकला लिया और फिर पलक झपकने की देर में उसे साँप के शरीर में इस तरह खोंस दिया कि वह आर-पार हो गया।

देखकर मूली की तो चीखें ही निकल गयीं। साँप वहीं-का वहीं ठहर गया था। लाठी जितना मोटा साँप मोरी से लगभग दो हाथ बाहर था। यह कहना कठिन था कि वह जीवित था या मर गया!

तभी गामणी दौड़ा आया। प्रातः वह ढोरों को लेकर बाहर

गया था। आते ही उसने जो दृश्य देखा, तो आँखें फाड़े देखता रह गया। पासमान खड़ा-खड़ा इस तरह हाँफ रहा था, जैसे एक कोस ऊँचे पर्वत पर दौड़ता हुआ चढ़कर पहुँचा हो।

पिता को देखते ही सिरि दौड़कर आयी और उसके वक्ष से लगकर रोने लगी, "आज मैं मर गयी होती···" कहते-कहते वह मुँह छिपाकर फफक-फफककर रो पड़ी।

गामणी चकित आँखों से देख रहा था—कभी बिंधे हुए साँप को, कभी पासमान को, जो स्तम्भित-सा खड़ा अपलक देख रहा था।

सिरि उसके वक्ष से लगी सुबक रही थी। गामणी ने उसके सिर पर हाथ फेरा और सान्त्वना दी। सिरि रो-रोकर बता रही थी कि किस तरह भोर वेला में वह चक्की पीसने बैठी ही थी कि कुछ नरम-नरम-सा उसके पैर से छुआ। पहले तो वह समझी कि बिल्ली की पूँछ है। पर जब फुँफकार-सी हुई, तो वह डरकर पीछे जा गिरी और अनाज की टोकरी बिखर गयी···

यह सब बताते हुए भय और त्रास से उसकी आँखें फैल गयी थीं। बोली, "साँप डस लेता, तो मैं मर गयी होती न···" और कहते-कहते वह फिर मुँह छिपाकर रोने लगी।

पिता ने बेटी की पीठ सहलाते हुए दिलासा दिया, "मत रो, मेरी बच्ची! मत रो। तू क्यों मरे, तेरे शत्रु भी न मरें···"

पासमान जैसे अविचल खड़ा बिंधे हुए साँप को निर्निमेष देख रहा था। सिरि के रोने का स्वर उसके कानों में पड़ जाता था। तभी गामणी आया और पासमान के निकट खड़ा हो गया और फिर उसे कन्धे से पकड़ खाट तक ले आया।

पासमान अब भी सूनी-सूनी आँखों से देख रहा था। मोरी में घुसा साँप जौ-भर भी नहीं हिला था। पासमान को अब

झुरझुरी-सी हो आयी। उसे लगने लगा कि साँप अब भी उसकी हथेलियों में से फिसलता हुआ निकलकर जा रहा है।

घर की स्त्रियाँ मूली को थामे बैठी थीं। छत पर खड़े लोग अचरज से झाँक-झाँककर देख रहे थे। सबको जैसे घोर आश्चर्य हो रहा था कि किसी में इतना साहस कैसे हो सकता है कि वह जाकर साँप को नंगे हाथों से पकड़े और फिर बींध भी डाले।

थोड़ी देर पश्चात गामणी उठा और साँप के निकट जाकर खड़ा हो गया। जैसे उसे विश्वास हो गया था कि साँप अब जीवित नहीं है। तकला चुभने से उसकी रीढ़ टूट गयी थी। बस, गामणी ने धीरे से हाथ बढ़ाकर साँप को पूँछ से पकड़ा और बाहर खींचना आरम्भ किया।

आश्चर्य कि साँप इस तरह खिचा चला आया जैसे मक्खन में से बाल खिचकर आता है। पूरा खींचकर गामणी ने साँप को वहीं डाल दिया। वह तीर की नाईं सीधा और निश्चल पड़ा था। कुछ क्षण गामणी खड़ा देखता रहा। फिर एक पत्थर उठाकर उसने इस तरह साधकर मारा कि साँप का सिर कुचलकर रह गया। फिर उसने निष्प्राण साँप को लाठी पर उठाकर भीत के ऊपर से बाहर उछाल दिया।

पासमान एकाएक चुप हो गया था। मूली आँखों से छलछल आँसू बहाती हुई आयी। पासमान के निकट नीचे भूमि पर बैठकर डबडबाई आँखों से इस तरह देखने लगी जैसे किसी बड़ी आशंका से त्रस्त हो। फिर एकाएक पासमान की भर्त्सना करते हुए बोली, "तुम पर क्या भूत सवार था कि सप्पदेवता को बींधकर तुमने मार डाला ! पिछले जनम में खोटे करम किये थे कि कुल में अन्धी कन्या ने जनम लिया। तुम्हें क्या पड़ी थी अपने प्राण जोखिम में डालने की ! सप्प डस लेता, तो…"

मूली की आँखों से झर-झर आँसू बह रहे थे। पासमान चुप-चाप बैठा उसकी खरी-खोटी सुन रहा था। जब मूली अपनी भड़ास निकाल चुकी, तो पासमान ने कुछ कहना चाहा। परन्तु उसके मुँह से शब्द नहीं फूट रहे थे—जैसे उसकी जिह्वा जाकर तालू से लग गयी थी। वह कहना चाहता था कि डसना साँप की प्रकृति है। साँप किसी का सगा नहीं होता—पर जैसे जिह्वा पर आयी बात उसके मुँह से निकल नहीं रही थी।

मूली कह रही थी, "घर से सैकड़ों गावुत दूर यहाँ मारे-मारे फिरते हैं। परदेश में द्वारे-द्वारे ठोकरें खा रहे हैं। तुम्हें कुछ हो जाता, तो फिर हम लोगों का क्या होता···" वह किसी अनिष्ट की कल्पना करके बहुत व्याकुल और उद्विग्न हो उठी थी। सर्पदेवता पूजनीय हैं। उनकी हत्या करना पाप है। यह सोच-सोचकर वह बैठी प्रार्थना करने लगी—

···नागराज के सब कुलों से मेरा कोई वैर नहीं···
नागराज के सब कुलों से मेरा कोई वैर नहीं
जतकार[1] के बेटे आसीत[2] ने सप्पों की रक्खा[3] की थी
जतकार हमारी भी रक्खा करे···
सब्बे सत्ता, सब्बे पाणा···

मूली अब उस घर में पल-भर भी नहीं रुकना चाहती थी। गामणी पासमान को इस दशा में नहीं जाने देना चाहता था। परन्तु मूली हठ कर बैठी। अन्त में गामणी को झुकना पड़ा। मूली जल्दी-जल्दी सामान बटोरने में लग गयी और घर की स्त्रियाँ उनके लिए यात्रा में खाने-पीने की सामग्री पथ्याशन बाँधने लगीं।

पासमान हाथ-मुँह धोने बैठा। हाथों को उसने मल-मलकर

१. जरत्कारु, २. आस्तीक, ३. रक्षा

रगड़ा। अब भी जैसे उसकी हथेलियों में से साँप फिसलते हुए जा रहा था। उसने हाथों को भूमि पर रगड़-रगड़कर धोया कि किसी तरह साँप की सरसराहट दूर हो, परन्तु वह जितना रगड़ता था, सरसराहट उतनी ही तीव्र होने लगती थी। प्रतीत होता था जैसे कोई साँप आकर उसकी हथेलियों से चिपक गया था और रह-रहकर रेंगने लगता था।

सिरि तो बस्सी से बिछुड़ने के विचार से ही रो-रोकर आँसू बहा रही थी। वह उसे गोद में लिये-लिये बावली की तरह इधर से उधर डोल रही थी।

घर में इतना विषैला साँप निकलने से सब डरे हुए थे। इसलिए गामणी ने तुरन्त साँप की केंचुली और बिनौले निकाले। दोनों को मिलाकर आँगन में जलाया गया। गामणी बोला, "जहाँ तक इसका धुआँ पहुँचेगा, वहाँ तक कोई साँप नहीं ठहरेगा..."

गामणी ने बहुत-सी खाने-पीने की वस्तुएँ टप्पर गाड़ी में रखवा दीं। जब सब तैयारी हो गयी, तो मूली आकर गाड़ी पर बैठ गयी। सिरि बस्सी को उठाकर लायी। उसे मूली की गोद में देते हुए वह फफक-फफककर रोने लग गयी।

दोनों परिवारों का बिछुड़ना बड़ा हृदयद्रावक था। सिरि की माँ ने भीगी आँखों से मूली और बस्सी के सिरों को सूँघकर मूली को आशीर्वाद दिया, "अपने पति का आदर पाओ।"

टप्पर गाड़ी चली, तो सिरि चौखट के साथ सिर टिकाकर रोने लगी।

पासपान उसी राह से, पोखर के साथ-साथ चलते हुए आया। गामणी उनके साथ-साथ चल रहा था। तरवाल बैल के ऊपर

हाथ रखे वह पासमान को सारा मार्ग समझा रहा था। पासमान बार-बार उसे लौट जाने के लिए कहता था, परन्तु गामणी उन्हें और दूर छोड़कर आने की हठ कर रहा था।

टप्पर गाड़ी जब दुराहे पर पहुँची, तो पासमान ने रस्सियाँ खींच लीं। वह नीचे उतर आया। यहीं से उन्हें विदा होना था। पासमान ने गामणी के चरण छूने का उपक्रम किया, तो गामणी ने उसकी बाँहें पकड़ लीं, "अरे रे रे ऽऽऽ यह क्या करते हो, सौम्य!" कहते-कहते उसका गला भर आया। "बेटा, मेरे लिए जैसी सिरि है, वैसी ही मूली और बस्सी है। मैं तुम लोगों का किया उतार नहीं सकता। तुम हमारे घर पाहुने बनकर नहीं, साक्षात भगवान आये। सिरि हमारे प्राण है। उसे कुछ हो जाता, तो हम कहीं के न रहते!" फिर मूली को सम्बोधित करते हुए वह बोला, "बेटी! तुम लोगों की हम कोई सेवा नहीं कर सके। सेवा-कार्य में कोई त्रुटि रह गयी हो, तो मन में न रखना। ऐसे मिलन संयोग से ही होते हैं। किसी जनम में पुण्य किया था कि तुम लोगों के दर्शन हुए…" कहते-कहते उसने भीगी आँखों से पासमान को विदा किया।

टप्पर गाड़ी चली, तो पासमान को लगा जैसे वह अपने-आपको चीरकर ले जा रहा हो। गामणी अपने स्थान पर खड़ा गाड़ी को जाते हुए देख रहा था। जब तक गामणी आँखों से ओझल नहीं हो गया, पासमान भी अपलक पीछे देखता रहा। मोड़ पर ओझल होने से पहले पासमान ने वहीं से हाथ जोड़कर गामणी को प्रणाम किया।

अब पासमान ने जल्दी-जल्दी गाड़ी को आगे बढ़ाया। बैल गलघण्टियाँ टनटनाते हुए भागे।

मूली जैसे बिल्कुल मूक हो गयी थी। बस, बैठी-बैठी आँसू बहा रही थी, जैसे किसी आशंका से भयभीत हो। बार-बार

सोचती कि नागदेवता की हत्या करके उन्होंने अपना बड़ा अहित किया है। जिस सप्प देवता की सब पूजा करते हैं, उसी की उन्होंने हत्या की है। उसने सुन रखा था कि मृत साँप की आँखों में हत्यारे की छवि अंकित हो जाती है और सर्पिणी आकर उसे देखती है और फिर हत्यारे को ढूँढ़कर डसती है···सोच-सोच-कर मूली की आँखों से अविरल धारा बह चली और वह फिर प्रार्थना करने लगी—

···नागराज के सब कुलों से मेरा कोई वैर नहीं
नागराज के सब कुलों से मेरा कोई वैर नहीं
जतकार के बेटे आसीत ने
सप्पों की रक्खा की थी
जतकार हमारी भी रक्खा करे···

सूरज बाँस-भर ऊपर उठ आया था। चन्द्रमा अदृश्य हो चुका था। हवा वेग पकड़ने लगी थी, इसलिए मौसम में तनिक ठण्डक थी। पासमान ने साँटा फटकारा और बैल हवा से बातें करने लगे।

अभी वे थोड़ी ही दूर गये होंगे कि आगे एक तिराहा मिला। एक मार्ग बायीं ओर फटता था। तिराहे पर चींटियों के बिल थे। मूली ने गाड़ी रुकवायी और उतरकर चटनाल जिमाया। फिर होंठों-ही-होंठों में कुछ बोलती हुई वह चुपचाप आयी और टप्पर में बैठ गयी। पासमान ने टिटकारी भरी और बैल धीमी गति से चल पड़े।

तभी पासमान को लगा कि किसी ने पुकारा है। वह चौंक पड़ा। पहले तो उसे लगा कि यह उसका मात्र भ्रम है। परन्तु मूली ने भी पुकार सुनी थी। डरे हुए तो वे थे ही। उनके कलेजे

धुक-धुक करने लगे।

पासमान उचक-उचककर देख रहा था। निर्जन, सुनसान प्रदेश में कहीं कोई दिखायी नहीं देता था। यह सोच-सोचकर वह भयभीत हुआ कि कहीं बलभद्दर और उसके बटमार साथी तो घात लगाये नहीं बैठे हैं !

तभी उसकी दृष्टि सड़क के बायीं ओर गूलर के पेड़ के नीचे गयी। वहाँ कोई बैठा था। पासमान डरते हुए देख ही रहा था कि वह उठकर खड़ा हो गया और टप्पर गाड़ी की ओर हाथ उठाकर बोला, "थमो, तनिक थम जाओ, भाई..."

पासमान और मूली भयभीत होकर देखने लगे। वह कोई लड़का था और उसके साथ दो बन्दर भी थे। फिर वह जल्दी-जल्दी चलकर आया और सड़क के किनारे खड़ा होकर बोलने लगा "तुम वही गाड़ीवान हो न, जो तक्कसिला जा रहे हो ?"

पासमान को बड़ा अचम्भा हुआ...इसे कैसे मालूम कि हम तक्कसिला जा रहे हैं ? तेरह-चौदह बरस का वह लड़का था और बड़ा दुबला-पतला था। सिर और पैरों से नंगा, गले में चोला, जो चीथड़े-चीथड़े हो चुका था। नीचे उसने एक मैली-कुचैली काली चादर बाँध रखी थी, जिसमें अनेक थेगलियाँ लगी हुई थीं। पासमान देख ही रहा था कि वह जैसे उत्साहित होकर बोला, "हम भी चलें, तुम्हारे साथ ?"

पासमान ने पलटकर मूली की ओर देखा। फिर एकटक वह उस लड़के का मुख देखने लगा। बोला, "तुम कैसे जानते हो कि हम तक्कसिला जा रहे हैं ?"

वह खीसें निपोरते हुए बोला, "अरे, कौन नहीं जानता कि तुमने अकेले ही दो भटोटो[1] को मार भगाया था।"

१. यात्रियों के गले में फाँस लगानेवाले ठग।

पासमान तो उसका मुँह ही देखता रह गया। लड़के के हाथ में चने थे और वह एक-एक दाना मुँह में डालते हुए बोल रहा था। फिर जल्दी ही सारी बात पासमान की समझ में आ गयी। यह वही बन्दरवाला था जो कल साँझ की वेला में झाँझर गाँव में खेल दिखा रहा था। विचित्र बात कि इस सुनसान, निर्जन स्थान पर बैठा वह क्या कर रहा था!

बन्दरवाला जैसे अनुनय-विनय करते हुए बोला, "कोई दोष न हो, तो हम भी साथ चलें?"

मूली जैसे डरी-डरी आँखों से देख रही थी, मानो कह रही हो—न, न, मत आने दो।...

बन्दरवाला बोला, "हम भोर वेला में ही गाँव से चल पड़े थे। सोचा था कि आसपास के गाँवों में खेल दिखायेंगे और पेट भरने का जुगाड़ करेंगे। पर आप लोग तक्कसिला जा रहे हैं। हमारा भी मन करता है तक्कसिला जाने का..." और फिर चनेवाला हाथ आगे बढ़ाकर बोला, "लो, चणक खाओ..."

पासमान जैसे संकोच करते हुए बोला, "बात यह है...कि सकट में मेरी घरनी है..."

बन्दरवाला बोला, "हम पाँव-पाँव ही चले आयेंगे। बस, हमारी गठरी-पोटली अपनी गाड़ी में रखवा लो..." फिर उसने पासमान के उत्तर या अनुमति की प्रतीक्षा नहीं की। दौड़कर गया और अपना सामान बटोरने लगा।

मूली ने चिन्तित होकर कहा, "यह फिर कैसी विपत्ति मोल ले रहे हो! कौन जाने, क्या कुल-सील है इस नसूढ़िये[1] का। किसी तरह टालो। कोई विट-भुजंग-[2]सा लगता है। कोई बखेड़ा खड़ा करेगा...भगाओ इसे..."

१. जिसके दर्शन मात्र से हानि हो। २. लम्पट।

परन्तु पासमान कुछ और ही सोच रहा था। बोला, "मुझे तो बड़ा निरीह जातक लगता है। साथ रहेगा, तो सवेरे बन्दर का दर्शन बड़ा शुभ होता है। हमारा क्या लेगा! गाड़ी के साथ-साथ चला आयेगा। फिर एक-एक दो ग्यारह। संग-संग यात्रा कटेगी। यात्रा में किसी साथी का मिल जाना बड़े सौभाग्य की बात होती है, भवनी!"

एकाएक पासमान का मन बन्दरवाले पर ठहर गया था। जिस पर मन एक बार ठहर जाता है, उस पर विश्वास भी हो जाता है।

मूली बोली, "मुझे तो कोई खुरचाली[1] लगता है..." मूली पहले से डरी हुई थी और कोई जोखिम मोल नहीं लेना चाहती थी।

बन्दरवाला अपना झोला-पोटली उठाये आ रहा था। बन्दरों की रस्सी उसने बायीं कलाई के साथ बाँध रखी थी। एक छोटी पोटली उसके सिर पर थी। कन्धे पर बन्दर गाड़ी थी। वह ऐसे चलता था जैसे फुदकता हो।

पासमान और मूली एक-दूसरे का मुँह देख रहे थे। अब और कोई चारा न था। पासमान ने उसका झोला, पोटली तथा बन्दर गाड़ी टप्पर में रखवा ली। बन्दरों की रस्सियाँ पकड़े धूल में पैर रपटते हुए पीछे-पीछे आने लगा।

दिन गरम होने लगा था। वे चुपचाप चलते जा रहे थे। एकाएक पासमान को कुछ स्मरण आया और वह उससे पूछने लगा, "अरे, तूने अपना नाम-धाम तो बताया नहीं! किसका जातक है तू? कहाँ का वासी?"

१. बखेड़िया।

बन्दरवाला तनिक पीछे छूट गया था। दौड़कर आया और खीसें निपोरते हुए बोला, "हमारा नाम विचक्खण है!"

"कहाँ के वासी हो?"

विचक्खण बन्दरवाला जैसे गहरी साँस भरते हुए बोला, "क्या पूछते हो! हम जैसों का क्या ठिकाना! आज यहाँ, तो कल वहाँ। इसी तरह मारे-मारे फिरते हैं। किसी तरह पेट भर जाता है। जिधर दाना-पानी ले जाता है, उधर ही मुँह कर लेते हैं। जहाँ रात पड़ती है, वहीं बसेरा कर लेते हैं। सूरज निकलता है, तो फिर चल पड़ते हैं..."

कहते-कहते वह जैसे बड़ा गम्भीर हो गया। पासमान को लगा जैसे कोई बालक नहीं, बड़ा-बूढ़ा अपने जीवन के अनुभव सुना रहा हो। उसने फिर कुछ नहीं पूछा उससे। उसे लगा कि छोटी अवस्था में ही इसने बड़ी ठोकरें खायी होंगी, इसीलिए इतनी निराशा-भरी बातें करता है।

कुछ देर तक कोई नहीं बोला। फिर पासमान को जैसे चुहल सूझी। बोला, "पर तू कहीं तो पैदा हुआ होगा, या आकाश से टपका था?"

मूली ने कनखियों से देखते हुए पासमान को झिड़क दिया, "क्यों ठट्ठा करते हो जातक से?"

पर विचक्खण ठहाका मारकर हँस पड़ा। बोला, "यहीं समझ लो, भैया! जब से सुधि सँभाली है, हम बन्दरवालों के साथ ही घूमते-फिरते हैं। कहते हैं, हमारा बाप भी बन्दर का खेल दिखाया करता था। हमारी माँ हमें जनम देकर ही मर गयी थी। कहते हैं, बाप उस समय जंगल में बन्दर पकड़ने गया हुआ था। बाघ उसे उठाकर ले गया, जंगल से। बस, हमें इतनी ही कहानी ज्ञात है। किस गाँव में हमारा जनम हुआ, कितने बरस के हो गये हैं हम, यह हम नहीं जानते : आठ-नौ

बरस के तो हो गये होंगे हम ? क्यों जी ?…"

उसकी भोली बात सुनकर पासमान ने पलटकर मूली की ओर देखा और फिर दोनों खिलखिलाकर हँस पड़े। विचक्खण उनका मुँह ही देखता रह गया। बोला, "क्यों, हमने कोई न्यारी बात कही है ?"

"नहीं, रे !" मूली के पेट में हँसते-हँसते बल पड़ गये थे। बोली, "तू अपने-आपको आठ-नौ बरस का बताता है। अरे, आठ बरस के जातक तो नंगे घूमते हैं…"

इस पर तीनों ठहाका मारकर हँस पड़े और इस हँसी-ठट्ठे में जैसे उनकी सब दुख-पीड़ाएँ तिरोहित हो गयीं।

विचक्खण बोला, "आप लोग इतनी दूर तक्कसिला क्यों जा रहे हैं ?"

दोनों फिर उदास हो गये। पासमान दुखी होकर फिर सोचने लगा…दुखी जन की यही नियति है। सभी उसकी दुख-गाथा सुनना चाहते हैं। उसे बार-बार अपनी व्यथा की कहानी आरम्भ से सुनानी पड़ती है। विचक्खण नंगे पैरों चलता आ रहा था और बड़े ध्यान से पासमान की कहानी सुन रहा था। सुनकर वह भी उदास हो गया। फिर कोई बोला नहीं।

धीरे-धीरे मौसम में परिवर्तन आने लगा था। हवा अब और वेग पकड़ने लगी थी। भुंइलेटवाँ हवा चल पड़ी। नन्हे-नन्हे कंकर आकर सीधे मुँह-आँखों पर लगते थे। धूल-मिट्टी के मारे उनकी दुर्दशा हो गयी। मूली ने बस्सी को चीवर से ढाँप लिया। चारों ओर धूल के बवण्डर उठ रहे थे। आँखों में धूल, मुँह में धूल, कानों में धूल, दाँतों में धूल। आसपास कोई ठिकाना भी तो नहीं था कि ओट में तनिक रुककर आँधी को निकल जाने देते।

परन्तु आँधी का यह वेग जिस तरह आया था, उसी तरह निकल भी गया। देखते-देखते सब जैसे एकाएक शान्त और

स्थिर हो गया। धरती ऐसे लगती थी जैसे किसी ने झाड़ू से
बुहार दिया हो। आकाश भी नितान्त निर्मल हो गया था।

विचक्खण थू-थू करके मुँह-दाँतों से मिट्टी के कण थूक
था। फिर न जाने उसे क्या सूझी कि बोल उठा, "भैया!
जो तुमने दो बटमारों को मार भगाया था न, और उनके
मरिग रखे थे, उन्हें तुम उठा क्यों नहीं लाये?"

अन्धे को जैसे दूर की सूझी थी। पासमान ने साँटा फटक
और बैलों को दौड़ाते हुए बोला, "हम तो उठा लाते, पर इन्
ही बरज दिया था। डर गयी थीं।" कहते-कहते पासमान ने
खियों से मूली की ओर देखा और मुस्काने लग गया।

विचक्खण बोला, "बड़ी डरपोक हैं आप!"

और इस तरह हँसी-ठिठोली करते हुए वे चलते गये।

सूर्य ढलने के साथ ही वे एक गामड़े में पहुँचे। उस वेला
आकाश ऐसे लगता था जैसे हलके नीले रंग की बहुत बड़ी
हो, जिस पर बालक दिन-भर ऊधम मचाकर चले गये हों।

गामड़े में पन्द्रह-बीस ही कच्चे मकान और फूस की मड़
थीं जो सँकरे मार्ग के दोनों ओर खड़ी थीं। गामड़े के आर
में बायीं ओर एक देवस्थान था, जिसके बाहर एक कुइयाँ थ
यात्री यहीं डेरा डालते थे।

चारदीवारी के बीचोंबीच न्यग्रोध (बट) का पुराना
था, जिस पर पंचागुलि का चिह्न बना था। पेड़ के नीचे चबूत
सा था। इस पर खड़े होकर लोग वृक्ष-देवता की प्रदक्षिणा क
थे। चबूतरे के चारों ओर बालू बिछा था।

मूली और पासमान रात बिताने के लिए यहीं उतर प
थका-माँदा विचक्खण सड़क के किनारे एक पेड़ के नीचे जा

बैठ गया ।

चारदीवारी के एक कोने में छप्पर तना हुआ था। उसके नीचे चित्तक बिछाकर उन्होंने मूलो को बैठाया और गाड़ी खोल दी। गाड़ी को लग्गी लगाकर उन्होंने रस्सी-बटलोही से जल की द्रोणी भर दी और फिर स्वयं बैठकर हाथ-मुँह धोने लगे ।

विचक्खण थका हुआ तो था ही, तुरन्त आकर छप्पर के एक कोने में लेट गया और फिर देखते ही देखते नाक बजाने लगा। साँझ घिरने लगी थी और हवा में ठण्डक आ गयी थी ।

वींस्सी को चित्तक पर सुलाकर मूली और पासमान वृक्ष-देवता की परिक्रमा करने गये। मूली बार-बार क्षमा माँगती थी कि उनसे कोई भूल हो गयी हो, तो प्रभु क्षमा करें।

जब वे छप्पर के नीचे लौटे, तो साँझ का धुआँ-सा गाढ़ा पड़ने लगा था। कहीं-कहीं तारे भी टमकने लगे थे। वे पोटली खोलकर बैठ गये और धीरे-धीरे खाते हुए बातें करने लगे। गामणी ने ढेर सारा सामान साथ बाँध दिया था—गेहूँ की रोटियाँ, अचार, पलांडु, मीठी बाजरे की रोटियाँ, चूर्मा, गुड़, गुड़धानी, पिन्नियाँ, सूखा मांस और पिण्ड खजूर। सत्तू का थैला अलग से था। पासमान चाहता था कि विचक्खण को जगाकर एक-आध रोटी उसे भी दे। अवश्य ही वह भूखा होगा। परन्तु मूली ने उसे मना कर दिया। धीरे से बोली, "अब एक काम करो। मेरी बात मानो, इससे पिण्ड छुड़ाओ।"

पासमान ने फुसफुसाकर कहा, "धीरे बोल भवनी, सुन लेगा।"

दिन-भर ठिठोली करते हुए वे यहाँ तक आये थे। पासमान को लगने लगा था कि जैसे वह भी उसके परिवार का एक जीव है। इसलिए जब मूली ने उससे पिण्ड छुड़ाने की बात कही, तो पासमान को अच्छा नहीं लगा।

परन्तु वह मूली के मन में विश्वास भी उत्पन्न न कर सका।

वह कह रही थी, "अब तुम्हीं बताओ, कोई पूछे कि यह कौन है तो क्या उत्तर दोगे ? फिर क्या पता कि क्या कुल-सील है इसका ! कहाँ से आया है ?"

बस्सी जाग गयी थी। मूली ने उसे उठाकर गोद में लि लिया और गुड़ का एक भोरा उसकी जीभ पर रखा। झुटपुटे वह चटखारे मार-मार खाने लगी। मूली ने जैसे चहककर क "देखो-देखो, कैसे चटखारे लेती है !"

थोड़ी देर में विचक्खण ने करवट बदली, तो पासमान पुकारा "अरे, अभी से सो गया है। उठ, आ। तू भी एक रो खा ले..."

निद्रालु आँखों को मलते हुए वह उठकर बैठ गया। बोल "नहीं, आप लोग पाइए। हमें भूख नहीं। दिन को हम अप चना-चबैना कर चुके हैं.." फिर वह लेट गया और थोड़ी देर में खर्राटे भरने लगा।

खाना खाकर वे भी लेट गये। चन्द्रमा-विहीन रात थी औ आकाश पर ढेरों तारे निकल आये थे।

मूली की तो आँख लग गयी, परन्तु पासमान को नींद न रही थी। रह-रहकर उसकी आँखों के सामने वह कौड़ियोंवा साँप रेंगता हुआ आता और वह डर जाता। एक बार तो उ ऐसा भयानक दृश्य दिखायी दिया कि उसके रोंगटे खड़े हो गये कुइयाँ के निकट ही उसकी टप्पर गाड़ी खड़ी थी और चितकबा बैल सामने बैठा था। यों तो अँधेरे में वह उसे देख नहीं सक था, परन्तु उसे लगा कि उसकी श्वेत-काली खाल और उसका पे उसकी आँखों के सामने चमक रहा है। और फिर अगले ही क्ष उसे लगा कि वह चितकबरा बैल नहीं, गामणी के घर में निक कौड़ियोंवाले साँप की सप्पणी है जो इतना बड़ा आकार ग्रह करके बाहर लेटी उसकी प्रतीक्षा कर रही है।

भोर वेला में कुक्कुट बोलने के साथ ही वह उठकर बैठ गया। मूली किसी समय उठकर गयी थी और निवृत्त हो आयी थी। विचक्खण बस्सी को गोदी में लिये उसे बहला रहा था। पासमान उठकर मुँह-हाथ धो आया। फिर मूली को साथ लेकर वह वृक्ष-देवता की परिक्रमा करने गया। लौटकर उन्होंने थोड़ा कलेवा किया और गाड़ी बाँधकर वे चल पड़े।

धीमी-धीमी बयार चल रही थी। विचक्खण पाँव-पाँव पीछे चलकर आ रहा था। उसने बन्दरों की रस्सियाँ टप्पर के साथ बाँधकर उन्हें टप्पर के ऊपर बैठा दिया था। जब टप्पर गाड़ी गामड़े से निकली, तो गाँव के बच्चे उछल-उछलकर कोलाहल करने लगे। टप्पर गाड़ी पर सवारी करते हुए दो बन्दरों का दृश्य उनके लिए बहुत बड़ा कौतुक था और वे उछलते-कूदते गाड़ी के साथ-साथ चलने लगे। विचक्खण ने भी अपनी डुगडुगी निकाली और थोड़ी दूर तक वह बच्चों का मनोरंजन करता रहा।

ज्यों-ज्यों दिन चढ़ता गया, वातावरण गर्म होने लगा। स्पष्ट था कि गर्मी के दिन अब अधिक दूर नहीं थे। पासमान दोपहर से पहले ही किसी पड़ाव पर पहुँच जाना चाहता था। इसलिए वह जल्दी-जल्दी बैलों को हाँक रहा था।

दोपहर ढलने के साथ ही वे अगले गामड़े में जा निकले। यह गामड़ा पिछले गामड़े से किंचित बड़ा था। यहाँ यात्रियों के विश्राम के लिए एक पुण्यशाला भी थी और उसके साथ एक सघन अमराई।

रात उन्होंने पुण्यशाला में बिताने का निश्चय किया, क्योंकि अगला पड़ाव बहुत दूर था और रात को यात्रा करने की जोखिम वे उठाना नहीं चाहते थे। शाला के आगे गाड़ी खोलकर वे विश्राम करने लगे। थोड़ी देर पश्चात विचक्खण उठा और बन्दरों को पहिये के साथ बाँधकर गामड़े की ओर निकल गया। वह कुछ

बताकर नहीं गया था, परन्तु पासमान समझ गया कि भोजन के समय विचक्खण उनके निकट बठने में संकोच करता था।

मूली और पासमान रहट पर मुँह-हाथ धोने गये। जब लौट कर आये, तो बस, देखते रह गये। विचक्खण का एक बन्दर छूट गया था और टप्पर में बैठकर खाने की पोटली खोले बैठा था। पासमान को देखते ही वह बँधी हुई रोटियाँ उठाकर भागा और अमराई के एक पेड़ पर जाकर बैठ गया।

मूली बैठकर कोसने लगी। बन्दर सारी पोटली बिखेर गया था, परन्तु अब झींकने के अतिरिक्त और कोई चारा न था। सारा सामान बटोरते हुए वह बोली, "रोटी तो ले गया है। किसी तरह कपड़ा छीनो उससे, नहीं तो चीथड़े करके डाल देगा।"

पासमान तरह-तरह के प्रलोभन देकर बन्दर को फुसलाने लगा। किन्तु बन्दर ने उसकी ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। डाली पर बैठकर वह रोटियाँ खाता रहा। जब वह खा चुका तो रोटीवाला कपड़ा उसने डाली पर रख दिया और उछलकूद मचाने लगा।

तभी विचक्खण आता दिखायी दिया। वह बड़ा प्रसन्न था क्योंकि गामड़े में उसे बड़ा शुभ समाचार मिला था। पर आकर जो उसने देखा कि उसका बन्दर छूटकर पेड़ पर जा बैठा है, तो उसकी सारी प्रसन्नता पर जैसे पानी फिर गया। बन्दर एक बार हाथ से निकल जाये, तो फिर सरलता से पकड़ाई में आता नहीं। इसलिए जल्दी-जल्दी उसने सबको वहाँ से हटाया और पेड़ के नीचे खड़ा होकर तरह-तरह की बोलियाँ बोलने और विचित्र-विचित्र स्वर निकालने लगा। परन्तु बन्दर था कि खौंखिया-खौंखियाकर उलटे विचक्खण को ही डराने लगता था।

विचक्खण के इस बन्दर का नाम 'गव' था। वह बार-बार 'गव, गव' कहकर उसे फुसलाता। परन्तु गव था कि जैसे का

में तेल डाले बैठा था। विचक्खण को कुछ सूझ नहीं रहा था। बन्दर के बिना उसका सारा धन्धा चौपट हो जायेगा। केवल 'सुलसा' बँदरिया के भरोसे वह पेट नहीं पाल सकता था। इसलिए किसी भी तरह गव को पकड़ना आवश्यक था। पर उसके सब उपाय व्यर्थ जा रहे थे और वह घबराकर भाग-दौड़ कर रहा था। डर उसे इस बात का था कि अँधेरा घिरते ही बन्दर अन्यत्र चला जायेगा और फिर कभी हाथ नहीं आयेगा।

मूली बैठी अलग झींक रही थी। बन्दर खट्टी-मीठी सब वस्तुएँ मिला गया था। वह उन्हें अलग करते हुए विचक्खण को कोस रही थी।

तभी विचक्खण दौड़ा-दौड़ा गाँव में गया और वहाँ से एक घड़ा ले आया। घड़े में उसने थोड़े चने डाले और उसे पेड़ के नीचे रखकर वह गाड़ी की ओट में बैठ गया।

उसके जाने की देर थी कि गव पेड़ से उतरा और घड़े में उसने हाथ डाला। परन्तु मुट्ठी भर जब चने निकालने लगा, तो घड़े के तंग मुँह से बन्द मुट्ठी कैसे निकलती! बन्दर में इतनी बुद्धि थी नहीं कि चने छोड़ दे। हाथ आयी वस्तु से वह हाथ नहीं धोना चाहता था, चाहे प्राणों से ही हाथ क्यों न धोने पड़ें। विचक्खण ने जब देखा कि बन्दर फँस गया है, तो वह दौड़कर आया और उसे पकड़ लिया।

अब विचक्खण प्रसन्न था, परन्तु मूली क्रुद्ध थी। बन्दर ने जितना खाया नहीं था, उतना वह खिंडा गया था।

तभी विचक्खण को वह बात स्मरण हो आयी। बन्दर के पचड़े में पड़कर वह भूल ही गया था। जल्दी-जल्दी आया और चहकते हुए बोला, "बड़ा अच्छा वृत्तान्त है। बड़ी सड़क यहाँ से

आठ-दस गावुत दूर है। उस पर एक कस्बा है। कुलगाम ना
बताते हैं। वहाँ एक 'सात्थ' ठहरा हुआ है और तक्खसिला ज
रहा है। उसके साथ लगकर हम भी तक्खसिला पहुँच जायेंगे...

सचमुच, बड़ा शुभ समाचार था। पासमान और मूली प्रस
हो गये।

व्यापारियों के दल हाथियों, घोड़ों, गधों, ऊँटों, बैलगाड़ि
आदि पर माल लादकर चलते थे और एक स्थान से दूसरे स्थान
जाकर व्यापार करते थे। ऐसे दलों को ही सात्थ या 'सार्थ' कह
थे। सार्थ में मूल्यवान वस्तुओं के साथ-साथ जीवन की आवश्य
वस्तुएँ रहती थीं। सार्थ एक राजधानी से चलकर दूसरी रा
धानी पहुँचते थे और बटोही प्रायः इनके साथ लगकर अप
यात्रा पूरी करते थे।

अब और कुछ करने को था नहीं। पासमान और विचक्ख
मिलकर बैलों को नहलाने-धुलाने लगे। फिर उन्होंने गाड़ी
कील-काँटा देख डाला। जब साँझ घिरने लगी, तो वे पुण्यशा
में चले गये और विचक्खण टप्पर गाड़ी के नीचे ही घुसकर ले
गया।

अँधेरा घिरने के साथ ही नाना प्रकार के जीवों की टेर सुना
पड़ने लगी। कभी एक साथ गीदड़ बोलने लगते और फिर कु
भी। पासमान लेटा न जाने क्या-क्या सोच रहा था! रात
बार-बार बाहर झाँककर देखता था कि रात कितनी बीती है

मूली आराम से सो रही थी। पासमान ने आधी रात आँ
ही आँखों में काट दी। चन्द्रमा की बड़ी फाँक निकल आयी। उ
देखते-देखते न जाने कब उसकी भी आँख लग गयी।

उजाला होते ही वे उठकर चल पड़े। गामड़े से निकले ही थे

मार्ग में उन्हें दो ऊँटों के साथ जाते हुए दो ओट्ठी दिखायी दिये। एक ऊँट पर रंगीन पीढ़े, मथानियाँ और खाट के पाये और दूसरे पर रस्सियाँ और सींकी घास के बने धरती पर बिछाये जाने-वाले गोल चपटे आसन लदे हुए थे। ओट्ठी उसी कस्बे की ओर जा रहे थे जहाँ सार्थ ठहरा हुआ था। पासमान और विचक्खण उनके साथ बातें करते हुए चलने लगे। उन्होंने बताया कि वे कुलगाम में अपना माल बेचकर वहाँ से खण्ड और खाण्डव अर्थात मिश्री तथा महीन कपड़ा लायेंगे।

राह में उनके साथ गाँव-गाँव घूमकर माल बेचनेवाला पघैया (व्यापारी) भी हो लिया। उसके पास चार गधे थे, जिन पर तरह-तरह का सामान लदा था।

इसी तरह मार्ग में उन्हें अनेक बैलगाड़ियाँ, ओट्ठी आदि मिले, जो सार्थ से मिलने जा रहे थे। अब किसी बात का डर नहीं था। राह में छोटे-छोटे गाँव-गामड़े थे। वहाँ इच्छानुसार विश्राम करते हुए वे कुलगाम की ओर बढ़ते गये।

विचक्खण को बस्सी से इतना लगाव हो गया था कि वह तनिक भी कुनमुनाती, तो उसे गोद में लेकर वह कोसों दूर चलता और उसके साथ खेलता। बड़ी प्यारी लगती थी बस्सी उसे। परन्तु जब उसे ध्यान आता कि बस्सी कितनी अभागी है, आँखों से अन्धी, तो उसका मन खिन्न हो जाता।

एक बार बस्सी ने जो रोना आरम्भ किया, तो चुप होकर न दी। वह उसी तरह रो रही थी जिस तरह झाँझर गाँव में रात को रोयी थी। जब मूली से चुप नहीं हुई, तो विचक्खण ने उसे अपनी गोद में ले लिया और ऊँटों के साथ-साथ चलते हुए वह उसे बहलाने लगा। ऊँट की टल्ली टन-टन बज रही थी। विचक्खण बस्सी को बहला रहा था, "बड़ी अच्छी बिटिया है। देख उट्ठ[1]

१. उट्ठ = ऊँट

की टल्ली बजती है। जब तेरी आँखें ठीक हो जायेंगी, हम तुझे कौवा दिखायेंगे, मोर दिखायेंगे, कबूतर दिखायेंगे, चिड़िया दिखायेंगे, कुत्ता दिखायेंगे···कुत्ता भौं-भौं करता है। गाय भी दिखायेंगे—गाय हम्बा-हम्बा करती है। बकरी भी दिखायेंगे—बकरी मैं-मैं करती है···"

देख-देखकर मूली की आँखों में आँसू आ गये। वह सोचने लगी कि वह दिन कब आयेगा जब बस्सी अपनी आँखों से देख सकेगी, कानों से सुन सकेगी, पाँव-पाँव चलेगी···

ज्यों-ज्यों कुलगाम निकट आ रहा था, मार्ग में मिलनेवाले ग्रामीण यात्रियों और वाहनों तथा व्यापारियों की संख्या बढ़ती जाती थी, परन्तु वे क्या जानते थे कि कुलगाम में कठोर नियति उनकी राह देख रही थी।

ज्यों-ज्यों डगर कटती जाती थी, उनका उत्साह बढ़ता जाता था। वे लोग अपने-अपने सपने सँजोने लगे थे। पासमान और मूली प्रसन्न थे कि अब दुख-विषाद के दिन शीघ्र ही कटेंगे। कुलगाम का सार्थ उनके लिए आशा का प्रतीक बन गया था। उन्हें पूरा विश्वास था कि साथ के साथ लगकर वे तक्षशिला पहुँचेंगे और फिर वहाँ अपनी जन्मान्ध कन्या का उपचार करवाने के पश्चात् सुखपूर्वक अपने गाँव लौट जायेंगे।

विचक्खण प्रसन्न था कि कुलगाम में सार्थ के व्यापारियों को खेल दिखाकर वह सैकड़ा कमायेगा और फिर तक्षशिला जाकर सहस्र।

उस दिन सूरज ढलने के साथ वे कुलगाम के निकट पहुँच गये। दूर से ही कुलगाम में ठहरे सार्थ का कोलाहल सुनायी पड़ता था। इनकी काया पुलकित हो गयी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे

कोई बड़ा भारी मेला लगा हो अथवा कोई सेना पड़ाव डाले पड़ी हो। ऊँट बिलबिला रहे थे, घोड़े हिनहिना रहे थे और बैल अम्मा-अम्मा करके बोलते थे।

विशाल सार्थ ने सड़क के बायीं ओर लम्बे-चौड़े मैदान में डेरा डाल रखा था। उसके पीछे वह कस्बा था जिसका नाम कुलगाम था। मैदान में चारों ओर व्यापारियों के बोरे, गठरियाँ, पेटियाँ, गाँठें फैली पड़ी थीं। स्थान-स्थान पर जलते हुए अलावों के अलम्बे दूर से ही दिखायी पड़ते थे।

इतना भीड़-भड़क्का और कोलाहल इन लोगों ने जीवन में पहली बार देखा था। बैलों की गति जैसे एकाएक मन्थर पड़ गयी थी। धीरे-धीरे वे सार्थ के निकट पहुँचे और फिर सड़क के किनारे एक पेड़ के नीचे उन्होंने डेरा डालने का निश्चय किया। सब लोग अपने-अपने काम में जुटे हुए थे। किसी ने उनकी ओर ध्यान तक नहीं दिया। टप्पर गाड़ी खोलकर वे बैठ गये और दिन-भर की थकान मिटाने लगे। फिर विचक्खण उठा और बटलोही-रस्सी लेकर पानी लेने चला गया।

पासमान गाड़ी के नीचे घुसकर पहियों का निरीक्षण करने लगा। मार्ग में कहीं चड़चड़-सी ध्वनि हुई थी। उसे डर था कि कहीं कुछ टूटनेवाला न हो! अभी वह पहियों का निरीक्षण कर ही रहा था कि एक मोटा, थुलथुल व्यापारी, जो बड़ी देर से उनकी ओर टकटकी लगाये देख रहा था, उठा और धीरे-धीरे चलकर टप्पर गाड़ी की ओर बढ़ा। सिर और पैरों से वह नंगा था। दो-चार दिन पहले ही उसने सिर घुटवाया था। बड़ी-बड़ी मूँछें थीं। गाल पेट की नाईं फूले हुए थे। शरीर पर घुटनों तक चादर और ऊपर ढीला-ढाला कुरता था। शरीर उसका ठिंगना था, इसलिए वह और भी गोल-मटोल लगता था। वह पहिये के निकट आकर खड़ा हो गया और बोला, "ओ गाड़ीवान

भाई ! क्या माल लाये हो ?" वह अपने मटके-जैसे पेट को खुज-
लाते हुए पासमान को देख रहा था।

पासमान ने इस अद्भुत व्यक्ति की ओर देखने का यत्न नहीं
किया। गाड़ी के नीचे से ही उसने कह दिया, "नहीं, भइया
हमें कोई माल-वाल नहीं बेकना। सात्थ के साथ तक्खसिला
जायेंगे..."

मूली चित्तक पर बैठी कनखियों से उसकी ओर देख रही थी।
मोटा व्यापारी जैसे पासमान की बात सुन अचम्भे में पड़ते हुए
बोला, "तुम्हें किसने बहका दिया कि सात्थ तक्कसिला जायेगा!"
और कहते-कहते वह बैठ गया कि गाड़ी के नीचे लेटे पासमान
का मुख देखकर उससे वार्तालाप कर सके।

पासमान ने सुना, तो चौंक पड़ा। जल्दी से सरककर निकल
आया और उस मोटे व्यापारी की आँखों में आँखें डालकर
अविश्वास के स्वर में पूछने लगा, "क्यों, यह सात्थ तक्खसिला
क्यों नहीं जायेगा ?"

वह बोला, "बड़े बुरे समय आये हो, गाड़ीवान भाई ! बहुत
बुरी वेला में आये हो..."

पासमान बैठा उसका मुँह देख रहा था कि यह विचित्र व्यक्ति
कैसी पहेलियाँ बुझा रहा है। मूली भी जैसे डरी-डरी आँखों से
देख रही थी। विचक्खण भी पानी लेकर आ गया था। मोटा
व्यापारी बड़ी सहानुभूति के स्वर में कह रहा था, "हाँ, भाई
लोगो ! बड़ी बुरी वेला में आये हो। सात्थ कब उट्ठेगा,
उट्ठेगा भी या नहीं उट्ठेगा, यह कोई नहीं जानता, कोई
ठिकाना नहीं..."

विचक्खण ने अचरज से पूछा, "क्यों, सात्थ क्यों नहीं
उट्ठेगा ?"

व्यापारी बोला, "बचवा, सुनते हैं, तक्कसिला में गड़बड़

गयी है। तक्कसिला का बूढ़ा राजा मारा गया है और सिंहासन के लिए लट्ठ चल रहे हैं। कोई सुरक्षा नहीं है वहाँ। ऐसे में काले कुत्ते ने काटा है कि सात्थ उधर मुँह करेगा!"

पासमान एकाएक घबरा गया। विचक्खण मोटे व्यापारी की ओर बिटर-बिटर देख रहा था। सचमुच, बड़ी भयप्रद सूचना थी।

मोटे व्यापारी का नाम विन्दक था। वह सुगन्धियों का धन्धा करता था। सब लोग उसे 'गन्धी' ही पुकारते थे। गन्धी यह सब बताकर चला तो गया, परन्तु इन्हें भारी चिन्ता में छोड़ गया। पासमान को लगा जैसे उसके सारे सपनों का महल धराशायी हो गया है। मूली डबडबाई आँखों से देख रही थी। कहाँ वे सोच बैठे थे कि तक्कसिला जाते ही उनके सब दुख-क्लेश मिट जायेंगे, और कहाँ यह दुखजनक समाचार देकर वह गन्धी उन्हें तत्ते तेल के कढ़ाहे में डाल गया था। पासमान तो वहीं सिर पकड़कर बैठ गया और जैसे शोक के गहरे सागर में डूबते हुए बोला, "भवनी! भाग्य ही खोटे हों, तो किसे दोष दें..."

अँधेरा घिरता आ रहा था। विचक्खण दो-चार लोगों से बात कर आया। गन्धी की बात सच थी। सार्थ के व्यापारी असुरक्षित राजधानी में जाकर मृत्यु को न्यौता ही देते। स्थिति यह थी कि यदि संकट बढ़ गया, तो सार्थ कुलगाम से ही लौट जायेगा।

मूली और पासमान तथा विचक्खण के लिए इससे अधिक दुखदायी बात और क्या हो सकती थी!

०

सड़क के उस पार दायीं ओर बड़ा पोखर था। पासमान धीरे-धीरे उठा और बैलों को खोलकर पोखर की ओर उतर गया। बैलों को पानी के निकट छोड़कर वह एक टीले पर बैठा बिसूरने

लगा ।

तभी एक कुम्हार आता दिखायी दिया । वह अपने गध
कर्दम अर्थात पोखर के नीचे की काली मिट्टी लादकर ला
था । कुम्हार निकट आया, तो अचानक पासमान ने उससे पू
"ओ हो ! यह सात्थ कब उठेगा ?"

कुम्हार टीले के नीचे आकर खड़ा हो गया और ऐसे बो
लगा जैसे बड़ा कटु हो, "अरे, कल उठता है, तो आज उठे
सारे कुलगाम के प्राण साँसत में आ गये हैं । कुछ दिन और
गया, तो यहाँ पानी नहीं, कीच ही कीच दिखायी देगी..."

कुम्हार ने भी गन्धी की बात का समर्थन किया और फिर
सार्थ के व्यापारियों को कोसने लगा, "अरे, क्या पूछते हो
वह बोला । "दिन-भर इनके ढोर-डंगर पानी को गहडोरते
हैं । गाँव के आसपास की ग्वैंडा भूमि इन्होंने रौंदकर रख दी
और इनके पशु सारी गउंथ चर गये हैं..."

कुम्हार का गधा उलट दिशा में चल पड़ा था । कुम्हार अ
भड़ास निकालना चाहता था, "यह सात्थ कल लौटता है,
आज लौटे !" वह बोला । "कुलगाम का सत्यानास तो न क
सारे कस्बे का जीना कठिन कर दिया है...काशी का एक कु
घड़े-भाँडे बेचने यहाँ तक आ गया । अरे, पूछो, यदि काशी
कुलाल यहाँ आने लगेंगे, तो हमारा पेट कैसे भरेगा...?"

कुम्हार दौड़कर गया और गधे को मोड़ने लगा । पास
टीले से उतरा और बैलों को हाँककर कस्बे की ओर चल प

मूली और विचक्खण उदास-उदास बैठे थे । पासमान अ
चुपचाप मूली के निकट बैठ गया । मूली बोली, "त्रिकाल
में इस तरह उदास न होओ । उठो, हाथ-मुँह धोकर थोड़ा

लो !"

मूली ने जब बहुत हठ किया, तो पासमान ने गुड़ का बना लड्डू (मरुंडा) लिया और धीरे-धीरे मुँह चलाने लगा। मूली ने एक मरुंडा विचक्खण को भी दिया। दिन-भर की यात्रा से वे थके हुए थे। अब इस दुखद समाचार ने जैसे उनका सारा उत्साह ही तोड़कर रख दिया था। रात होते ही वे लेटने की तैयारी करने लगे। मूली और पासमान गाड़ी के भीतर और विचक्खण गाड़ी के नीचे कपड़ा बिछाकर लेट गया।

सार्थ का कोलाहल भी धीरे-धीरे शान्त होने लगा। पासमान चुपचाप लेटा हुआ था और टप्पर की चटाइयों को निर्निमेष दृष्टि से देख रहा था। मूली कहने लगी, "चिन्ता न करो। यही समझो कि स्यात इसी में कोई भलाई है..." मूली यह सब कह तो रही थी, परन्तु भीतर से वह बहुत चिन्तित थी। अन्धविश्वासी तो वह पहले से ही थी। अब जब से साँप की दुर्घटना हुई थी, वह और व्याकुल रहने लगी थी और समझती थी कि यह सारी विपदा सप्पहत्या के कारण ही आयी है।

ऐसी दशा में पासमान को नींद कैसे आती। एक तो उसका कलेजा डूब रहा था, फिर निकट ही व्यापारियों का एक दल बैठा कोलाहल कर रहा था। जब पासमान से लेटा नहीं गया, तो वह उठ बैठा और देखने लगा। एक पेड़ के नीचे अलाव जल रहा था और उसके चारों ओर बहुत-से व्यापारी गोल बाँधे बैठे, एक-दूसरे से उलझ रहे थे। पासमान चुपचाप गाड़ी से उतरा और उन लोगों के निकट जाकर खड़ा हो गया।

वे लोग जुआ खेल रहे थे। कलह दो व्यापारियों में थी। एक अधेड़ था, दूसरा तरुण। अधेड़ व्यापारी ने आवेश में आकर पगड़ी उतारी और उसकी गद्दी बनाकर बूठते हुए तुनककर कहा, "बोल, तेरे पल्ले है कितना माल ? गिनकर तो बता !"

तरुण व्यापारी बोला, "ऐ, माल की धौंस मत दिखाना।
जैसे पचैए को खड़े-खड़े मोल ले सकता हूँ।"

वह भड़क उठा। बोला, "अरे, देखा है तुम्हारा व्यापा
इतना बड़ा व्यापारी था, तो मारा-मारा क्यों फिरता है।
काशी में गंगा में डूब मरता।"

एक व्यापारी ने बीच-बचाव करते हुए कहा, "देखो भा
आप लोग एक-दूसरे की पगड़ी न उछालो।"

अधेड़ व्यापारी बोला, "इससे कहो, अपना माल गिनाये
नहीं तो उठकर जाये…या हम ही उठकर चले जायेंगे।"

तरुण व्यापारी हारा हुआ था। वह उसे उठने कैसे देता
झख मारकर उसे अपना माल गिनाना पड़ा।

वह काशी का व्यापारी था। कपड़े की गाँठों से लदी उस
बैलगाड़ी पीछे खड़ी थी। उसे दिखाते हुए बोला, "यह स
माल लगा दूँगा, पर तेरे आगे हाथ नहीं पसारूँगा, समझ
बचवा!"

अधेड़ व्यापारी हाथीदाँत की वस्तुओं का व्यापार करता
उसने भी अपना माल गिनाया और चिढ़ाते हुए कहा, "
दस गाँठ कपड़े का मूल्य उतना नहीं होगा जितना हाथीदाँत
एक मूर्ति का। है किस फेर में?"

कपड़े का व्यापारी कैसे पीछे रहता! हेकड़ी दिखाते
बोला, "अरे, हाथीदाँत की बात करता है! हमारे जंगल में इ
हाथीदाँत होता है; बगिया की चारदीवारी उसी की बनवाते
समझा, बचवा!"

इस पर सब लोग खिलखिलाकर हँस पड़े।

जुआ फिर आरम्भ हुआ। हाथीदाँत का व्यापारी बो
"अब आप लोग सब साक्षी हैं।" और कहते-कहते उसने अ
के नख पर एक सिक्का रखा और उसे ढककर उछालने के

तैयार हो गया। बोला, "चित या पट ?"

कपड़े का व्यापारी तनिक झिझका। उसके माथे पर पसीना चुहचुहा आया। उसकी यह विकलता-व्याकुलता छिपाये नहीं छिप रही थी। अनिश्चय की दशा में पसीना पोंछते हुए बोला, "पट..."

सिक्का गिरते ही हाथीदाँत का व्यापारी उछल पड़ा, "चित! चित कर दिया! यह दाँव भी मेरा रहा। लगा और माल, बचवा..."

कपड़े के व्यापारी का मुख धुनी हुई रुई की तरह श्वेत पड़ गया। वह पहले ही बहुत हार चुका था। इस गति से तो वह कंगाल हो जायेगा। परन्तु मैदान से भागकर वह हेठी नहीं करवाना चाहता था। उसने फिर दाँव लगाया, फिर हार गया।

उसके मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। तभी किसी ने उसके कान में फूँका। सुनते ही उसकी आँखों में रक्त उतर आया। आग में डाली गयी नमक की डली की तरह क्रोध से चिट चिट करने लगा और फिर उछलकर अपने प्रतिद्वन्द्वी पर टूट पड़ा। उसका टेंटुआ दबाते हुए बोला, "कपटी! भुजंग!! छल करता है..."

एकाएक जैसे उपद्रव हो गया। सब लोग उसे पकड़ रहे थे। रन्तु वह वश में ही नहीं आता था और चिल्ला-चिल्लाकर ालियाँ बक रहा था। सब लोग उसे समझाने का यत्न कर रहे । वह चिल्लाये ही जा रहा था, "विश्वासघाती, भुजंगे, पटी! छल करता है, और मुझसे! नहीं तो क्या मैं एक दाँव ी न जीतता..."

देखते-देखते दो धड़ बन गये। कुछ लोग हारनेवाले जुआरी पक्ष ले रहे थे, कुछ जीतनेवाले के साथ थे। अधिकतर लोग तनेवाले का पक्ष ले रहे थे और कपड़ेवाले व्यापारी की

भर्त्सना करते थे। कोई बोल उठा, "यह लुगांडा हारकर इ
तरह उत्पात मचाता है।"

विजयी जुआरी को जैसे बल मिल गया। बोला, "अब रो
क्यों है? माल है, तो लगा! मुँह क्या देखता है?"

इस बात ने जलती पर घी का काम किया। यदि हारने
जुआरी को वे पकड़कर न रखते, तो अनर्थ हो जाता।

यह उपद्रव हो ही रहा था कि किसी ने सावधान कि
"चुपचाप बैठ जाओ। सात्थवाह आ रहे हैं..."

सात्थवाह अर्थात सार्थ के नेता के आने की बात सुनते
कुछ लोग खिसक गये। जो लोग वहाँ जमे रहे, उन्हें सार्थवा
आकर बड़ा फटकारा और भर्त्सना करते हुए कहा कि यदि
किसी ने कोलाहल करके सार्थ के अनुशासन को भंग किया
वह कठोर दण्ड का भागी होगा। सार्थवाह ने यह कहकर
लज्जित कर दिया कि पहले ही विपत्ति में फँसे हैं, फिर भी
लोग कलह-दंगा की कुटेव नहीं छोड़ते।

सब इस तरह बैठे थे, जैसे उन पर घड़ों पानी पड़ गया
सार्थवाह के जाने के पश्चात एक वृद्ध व्यापारी ने कहा, "
आप लोगों को जुए आदि के व्यसन से दूर रहना चा
दोनों पछताते हैं—हारनेवाला भी और जीतनेवाला भी।
वैर-विरोध की जड़ है। आपसी कलह का कारण है। आक
ढेला फेंको, तो वह नीचे गिरेगा ही। इसी तरह जुआ
हारना अवश्यम्भावी है। नल और युधिष्ठिर भी हारे थे"

हारनेवाला जुआरी जैसे दाँत पीसते हुए देख रहा
उपदेश ने उसके क्रोध में घी का काम किया। परन्तु सार्थवा
लताड़ के कारण भीतर ही भीतर उमड़ते क्रोध को न दबा
के कारण भड़क रहा था। "चुप रह, बुढ़ऊ!" वह दाँत
हुए दबे स्वर में बोला। "किसी और को जाकर उपदेश दे।

इतना बुरा है, तो फिर राजा लोग क्यों खेलते हैं ?"

"तू ठीक कहता है, बेटा !" वह बोला। "अन्धे के गले में माला डालो, तो उसे भी वह साँप समझकर उतार फेंकता है।"

पासमान भयभीत होकर देख रहा था। झाँझर गाँव की वह घटना उसे फिर स्मरण हो आयी थी और वह जैसे सुन्न खड़ा था।

वृद्ध व्यापारी कह रहा था, "कोरउ-पांडउ जुए के कारण ही तो बिपदा में पड़े। इसी से जानो कि जो लोग इतने बलवान थे, उनकी मति भी भ्रष्ट कर दी इस जुए की टेव ने। जुए की लत बहुत बुरी है। गृहस्थ को, और फिर व्यापारी को तो, जुआ खेलना ही न चाहिए।"

हारे हुए व्यापारी पर इस सबका विपरीत ही प्रभाव पड़ रहा था। वह किसी की बात सुनने की मनोदशा में नहीं था। किसी तरह वह अपना खोया हुआ माल वापस पाना चाहता था। इसलिए बार-बार भड़क रहा था।

एकाएक पासमान की दृष्टि ऊपर पेड़ पर गयी। देखते ही वह सन्न रह गया। चौड़े-चौड़े पत्तोंवाले उस पेड़ पर हाथ-हाथ-भर लम्बी ककड़ियाँ-सी ऐसे लटक रही थीं जैसे साँप लटक रहे हों। फिर उसके लिए वहाँ खड़े रहना कठिन हो गया। जल्दी से मुड़ा और अपनी गाड़ी पर लौट आया।

मूली जाग रही थी। पासमान को विलम्ब करते देख वह चिन्तित थी। उसके आते ही बोली, "इतनी रात कहाँ चले गये थे ?"

पासमान आकर लेट गया और जैसे गहरी साँसें लेते हुए बाहर देखने लगा। अभी चन्द्रमा नहीं निकला था। काली-अँधेरी रात थी, जो धीरे-धीरे गहरी होती जा रही थी।

पासमान की आँख खुली, तो प्रातःकालीन उजाला फैलने लगा था। मूली पेड़ की टहनी से टप्पर गाड़ी के आसपास की भूमि झाड़-बुहार रही थी। पासमान लेटे-लेटे झाँझर गाँव की उस घटना को इस तरह देखने लगा जैसे दर्पण में मुख दिखायी देता है। उसे एकाएक लगा कि साँप उसके हाथों में से फिसलता हुआ जा रहा है···और फिर इसके साथ ही पेड़ से लटकती साँप जैसी ककड़ियाँ उसकी आँखों के आगे झूलने लगीं।

विचक्खण बन्दरों को साथ लेकर खेतों की ओर जा रहा था। पासमान भी उठकर नीचे उतरा और बैलों को पोखर पर ले गया। चलते समय मूली ने कहा था कि जलावन के लिए जंगल से सूखी काँटेदार ढिंगरियाँ झाड़ियाँ आदि बटोरते लाना।

व्यापारी लोग मुँह में दातुन दबाये, लोटे उठाये, खेतों में आ-जा रहे थे। पासमान ने बैलों को पानी के निकट छोड़ा और निवृत्त होने चला गया। फिर वह ढिंगरियाँ एकत्र करने लगा। वह बहुत चिन्तित था—"क्या इतनी दूर आना अकारण जायेगा? नहीं, चाहे कैसी भी विपदा आये, मैं एक बार तो तक्कसिला अवश्य जाऊँगा···"

पासमान को विश्वास था कि एक बार वह तक्षशिला पहुँच जाये, तो उसके सारे दुख-क्लेश मिट जायेंगे। उसकी इकलौती बेटी की आँखों में ज्योति आ जाये, इससे बड़ा सुख और क्या हो सकता था।

धूप निकल आयी थी। पासमान ने ढिंगरियों की भरी पीठ पर रखी और बैलों को आगे करके लौट पड़ा।

मूली ने गाड़ी की ओट में पत्थर रखकर चूल्हा बना लिया था और रोटियाँ सेंक रही थी। पासमान आकर बैठ गया और चुपचाप खाने लगा। खाकर वह लेट गया। परन्तु लेटे-लेटे उसका मन नहीं लगा और उठकर उसने गाड़ी के पहियों में

डाला फिर बस्सी को गोद में लेकर वह निरुद्देश्य-सा घूमने लगा।

सब ओर बड़ी चहल-पहल और गहमागहमी थी। जिधर देखो, माल के अम्बार लगे थे। कोलाहल इतना था कि निकट खड़े व्यक्ति की बात सुनायी नहीं पड़ती थी।

वह धीरे-धीरे चलकर कस्बे की हाट-मण्डी की ओर निकल आया। मार्ग सँकरा था। आमने-सामने आनेवाले ऊँटों के किचावे टकरा जाते थे।

हाट लाँघकर वह चौक में आया। वहाँ डौरूँ (डमरू) बजने का स्वर उसके कानों में पड़ा, तो वह उचककर देखने लगा। विचक्खण बैठा खेल दिखा रहा था। उसके एक हाथ में डमरू और दूसरे में बाँसुरी थी। दोनों बन्दर दूल्हा-दुल्हन बने विचक्खण की परिक्रमा कर रहे थे।

पासमान धीरे-धीरे चलकर आया और विचक्खण की पीठ के पीछे दर्शकों में खड़ा हो गया। विचक्खण ने बाँसुरी नीचे रखी, डमरू को एक झटके से बजाया और बन्दरों को अपनी पीठ के पीछे बैठाकर वह कुछ बोल-बोलकर झोला खोलने लगा। झोले में से उसने गलौना—अंजन—निकाला और फिर लगा उसके गुणों का बखान करने। देखकर पासमान को बड़ा अचरज हुआ। विचक्खण अंजन बेचने का भी धन्धा करता है?

अंजन बेचने का उसका ढंग भी निराला था। बँदरिया की रस्सी खींचकर उसने अपने सामने डमरू पर बैठाया और फिर अंजनदानी झोले में छिपाकर उससे पूछने लगा, "बोल, सुलसा रानी! आँखों में क्या लगायेगी?"

बँदरिया झट उठकर गयी और झोला फड़ोलने लगी। उसमें से अंजनदानी निकालकर वह बैठ गयी और विचक्खण बोला, "अच्छा, अंजन लगायेगी!" बस, विचक्खण ने एक सलाई से

उसकी दोनों आँखों में अंजन डाला। सुलसा आँखें मींचे बैठ गयी और फिर टप-टप पानी गिराने लगी। फिर उठी और सिर पर हाथ रखकर और दूसरे हाथ में पूँछ पकड़कर बड़े गर्व से चलने लगी, जैसे अंजन लगाने से उसकी आँखें निर्मल हो गयी हों।

सबके लिए यह बड़े कौतुक की बात थी। लोग देख-देखकर प्रसन्न हो रहे थे। विचक्खण बड़ी रसभरी वाणी में अपने अंजन के गुणों का बखान कर रहा था। फिर बँदरिया ने अंजनदानी और एक सलाई ली और एक-एक दर्शक के पास जाने लगी, जैसे सबको अंजन लगाने का निमन्त्रण दे रही हो। परन्तु किसी ने हाथ बढ़ाकर अंजनदानी नहीं ली।

विचक्खण के लिए यह बड़ी दुखदायी बात थी। एक बार डौरूँ बजाकर वह फिर अपने अंजन का गुणगान करने लगा। बोला कि एक बार एक राजा ने एक कठवैद का सिद्धांजन लगाया था और उसकी आँख फूट गयी थी। जब उसने यह अंजन लगाया, तो उसकी आँख की ज्योति लौट आयी···

इतने पर भी जब किसी ने हाथ नहीं बढ़ाया, तो वह निराश स्वर में बोलने लगा, "क्यों, विश्वास नहीं होता! कैसे आये? पेट काटूँ या गला काटूँ···"

ये शब्द उसके मुँह में ही थे कि एकाएक कुछ जन हाथों में लाठियाँ लिये दौड़कर आये और भीड़ में घुसकर विचक्खण को पकड़ने लगे। विचक्खण उनसे हाथ छुड़ाने के लिए चिल्ला रहा था, परन्तु वे उसकी एक नहीं सुन रहे थे।

पासमान खड़ा अचरज से देख रहा था। एक लठैत ने विचक्खण को टेंटुए से पकड़ा और कहा, "चुपचाप सारा सामान निकाल धर, नहीं तो तेरा टेंटुआ दबा दूँगा।"

सब लोगों ने बीच-बचाव किया, तो उन्होंने विचक्खण को छोड़ा। विचक्खण बैठा-बैठा हाथ जोड़कर दुहाई देने लगा।

परन्तु वे कहते थे कि इसने बन्दरों को सिखा रखा है और वे उनकी रोटियाँ निकाल लाये हैं। परन्तु विचक्खण विनती करते हुए बोल रहा था कि वह चोर नहीं है, उन लोगों को भ्रम हुआ है।

परन्तु उनमें से एक व्यक्ति, जिसकी दाढ़ी हरी रँगी हुई थी, सबको सुनाते हुए बोला, "इसने बन्दरों को सिखा रखा है। ये सामान और खाने-पीने की वस्तुएँ चुराकर इसे देते हैं।"

विचक्खण ने पासमान को अभी तक नहीं देखा था। हरी दाढ़ीवाला जब विचक्खण को मारने पर उतारू हुआ, तो पासमान बीच में आ गया और बोला, "मारिए नहीं।"

पासमान को देखते ही विचक्खण जैसे बिलख-बिलखकर रोने लग गया। बोला, "हम सौगन्ध खाकर कहते हैं, हमारे बन्दर चोर नहीं हैं। विश्वास न हो, तो इनसे पूछ लो।"

पर वे उसकी एक नहीं सुनना चाहते थे। जब उन्होंने फिर हाथ छोड़ा, तो एक दर्शक बोला, "नहीं, मारो मत। पहले इसका झोला देखो···"

परन्तु विचक्खण झोला दिखाने को तैयार नहीं था। वह बार-बार दुहाई देता था कि वह चोर नहीं है, उसने आज तक परायी वस्तु को हाथ नहीं लगाया···

"फिर तू अपना झोला दिखाने में आनाकानी क्यों करता है, भलेमानुस ?" किसी ने कहा।

विचक्खण आँसू बहाते हुए बोला, "क्योंकि हम चोर नहीं हैं !"

"हम चोर नहीं हैं।" हरी दाढ़ीवाला व्यंग्य करते हुए बोला, "फिर डरता क्यों है ? झोला खोल, दिखा !"

जब वह तैयार नहीं हुआ, तो उन्होंने उसका झोला छीनकर उलट दिया। झोले में अंजनदानियाँ, लकड़ी की पतली सलाइयाँ, बन्दर-खेल का दूसरा सामान और एक पोटली में बँधी ठुडियाँ

निकलीं । इस पर एक व्यक्ति बोला, "चील के घोंसले में मां
खोजते हो । इसे जातक मत समझो । यह जितना ऊपर है, उत
ही धरती के नीचे भी । इसके पेट में दाढ़ी है । रोटियाँ खा
कपड़ा फेंक आया होगा ।"

विचक्खण की दशा देखी नहीं जाती थी । वह जैसे भीड़
आश्वासन देते हुए बोल रहा था, बड़े ही व्याकुल स्वर
"हमने कभी चोरी नहीं की । हम भूखों रह लेंगे, परायी व
को हाथ नहीं लगायेंगे । आप इसे छोटा मुँह बड़ी बात
समझिए । हवा परबत को उड़ा सकती है, नीला आकाश
सकता है, समुद्र सूख सकता है, पर हम झूठ नहीं बोलेंगे..."

उसकी इस बात को सुनकर बहुत-से लोग हँसने और उ
खिल्ली उड़ाने लगे ।

विचक्खण के साथ बहुत हो चुकी थी । सम्भवतः यही सोच
वे चले गये । भीड़ भी खिडने लगी । विचक्खण की आँख
उठती थी, लज्जा से जैसे वह गढ़ा जा रहा था । पास
को अपनी निर्दोषता का विश्वास दिलाने के लिए बोला, "
सौगन्ध खाकर कहते हैं, हमने बन्दर को सिखाया नहीं है !" उ
आँखों से टप-टप आँसू बहने लगे, "सवेरे गव रस्सी छुड़ाकर
गया था । तब इसने कुछ किया हो, तो उसकी सौगन्ध हम
खाते । हमारा क्या दोष ?"

पासमान ने सामान बटोरने में उसकी सहायता की ।
वह उसे समझा-बुझाकर अपने साथ ले आया ।

मूली विचक्खण की दशा देखकर चौंक पड़ी । पासमान
सारा वृत्तान्त सुनाया, तो झिड़ककर बोली, "तू अपने बन्दरों
समझाकर रख । हमारी रोटियाँ नहीं खा गया था उस ग

में ! अब जा, कुएँ पर जाकर मुँह-हाथ धो आ···"

विचक्खण ने बन्दरों को पेड़ के नीचे बाँधा और चुपचाप चल पड़ा। मूली ने कहा, "हो न हो, बन्दरों ने रोटी चुरायी होगी !"

सहसा आकाश पर बादल घिर आये थे। सूरज कभी छिप जाता, कभी गरमी बरसाने लगता। फिर भी मौसम में अचानक फिर ठण्डक आ गयी थी और ऐसा प्रतीत होता था जैसे पानी बरसेगा। निकट ही खण्ड का व्यापारी घबराया हुआ कभी आकाश की ओर देखता था, कभी अपने माल को। उसे डर था कि पानी बरस गया, तो सारा गुड़ गोबर हो जायेगा। वह भाग-भागकर खण्ड के थैलों-बोरों पर चमड़े की त्रिपालें बिछा रहा था। पासमान की ओर देखते हुए बोला, "परतीत होता है छाजों में बरसेगा !"

विचक्खण लौट आया। मूली ने उसे रोटी दी। पहले तो वह नहीं माना, फिर लेकर पेड़ के नीचे बैठ गया और धीरे-धीरे खाने लगा। बड़ा भारी अपमान हुआ था उसका। भरी हाट में उस पर चोर होने का दोष लगाया गया था···अब कुल-गाम में सब लोग हमें चोर समझकर फटकारेंगे, पास नहीं फटकने देंगे। कितनी हेठी हुई आज हमारी। अब हम कुलगाम में किसी को मुँह नहीं दिखा सकते। अपजस लेकर यहाँ रहना किस काम···"

किसी तरह रोटी निगलकर वह वहीं पेड़ के नीचे पसर गया। अपमान की अग्नि में उसका सारा शरीर झुलस रहा था—'हमारे मत्थे इतना बड़ा कलंक !'

बादल गरजे, तो व्यापारियों के हृदय धड़कने लगे। सब दौड़-दौड़कर अपने माल को सुरक्षित रखने की चिन्ता में लग गये।

मूली और पासमान टप्पर गाड़ी में बैठे देख रहे थे। विचक्खण ने निश्चय कर लिया था कि अब वह कुलगाम में नहीं

रहेगा। जाने से पहले वह एक बार बस्सी को गाद में ले
चाहता था। परन्तु उसे डर था कि मूली और पासमान
भनक न पड़ जाये। इसलिए अवसर देखकर वह चुपके से
और बन्दरों के साथ एक ओर निकल गया। मूली ने उसे जा
हुए देखा, परन्तु उसने सोचा तक नहीं कि वह अब लौटकर न
आयेगा।

हवा का वेग बढ़ता जा रहा था। पेड़ों के पत्ते झड़-झड़
गिर रहे थे। पवन इन पत्तों को धकेल-धकेलकर खाली कोन
स्थलों में भर देता था। यह ऋतु ही ऐसी थी कि प्रकृति
अद्भुत लीला दिखायी पड़ती थी। मैदान के एक कोने में
पीपल का ऊपरी भाग पत्तों से शून्य था और नीचे का भाग
से भरा हुआ। पीपल के पत्ते सर-सर करते हुए थिरक रहे
उसके सामने ही दो और पीपल थे—एक पत्तों से बिल्कुल
और रूखा-सूखा, रुंड-मुंड और दूसरे पर पत्तों का भारी फुटाव
आया था। उनके निकट ही दो अन्य ठूँठ खड़े थे। एक पर
दो हाथ टहनियाँ निकल आयी थीं। दूसरा ठूँठ जैसे दो
फैलाये कह रहा था कि उसने क्या पाप किया है कि उस पर
पत्ता नहीं आया।

सूरज की फीकी धूप बादलों को चीरकर चारों ओर बि
रही थी। फिर देखते ही देखते सूरज बादलों से ढक गया। अ
भी चलने लगा। निश्चय ही अब पानी बरसेगा। यह देख-देख
व्यापारी व्याकुल हो रहे थे।

परन्तु पानी नहीं बरसा। पवन के झोंके एक-एक बादल
उड़ाकर ले गये। टप्पर गाड़ी के पहियों के साथ पत्तों के
इकट्ठे हो गये थे।

वे पछाहीं खाने बैठे, तो उन्होंने विचक्खण को भी बुला
लिए बाहर देखा। परन्तु वह लौटकर नहीं आया था।

फिर जल्दी ही सन्ध्या घिर आयी। एकाएक बादल गरजे, तो मूली बोली, "पीछे गाँव में बरखा हो गयी, तो कोई छत पर चढ़कर मोरी नहीं मारेगा। कहीं ऐसा न हो कि घर पहुँचें और सिर छिपाने को ठौर न हो..."

व्यापारियों के चूल्हे जलने लगे थे। अभी तक विचक्खण लौटकर नहीं आया था। धीरे-धीरे अँधेरा घिरने लगा और फिर रात हो गयी। मूली और पासमान बड़ी देर तक विचक्खण की राह देखते रहे, परन्तु वह लौटकर नहीं आया।

भोर वेला में पासमान की आँख खुली। चन्द्रमा अभी-अभी निकला था और पोखर के ऊपर पेड़ों पर खड़ा था। विचक्खण रात को नहीं लौटा था। वह किंचित चिन्तित हुआ। फिर बैलों को खोलकर पोखर की ओर उतर गया और ढिगरियाँ एकत्र करने लगा।

उजाला होते-होते उसने एक भरी (बोझा) ढिगरियाँ बटोर लीं। फिर बैलों को आगे करके वह सड़क पर आया। अभी वह अधबीच में ही था कि अपनी टप्पर गाड़ी के निकट उसे भीड़-सी दिखायी दी। पहले तो वह चौंका, फिर घबराकर जल्दी-जल्दी चलने लगा। अभी गाड़ी से कुछ ही अन्तर पर था कि मूली के रोने का स्वर सुनायी पड़ा। पासमान के हाथ-पैर फूलने लगे और वह दौड़ा-दौड़ा आया। मूली गाड़ी के नीचे बैठी विलाप कर रही थी और उसके सामने बहुत-सारा सामान बिखरा पड़ा था।

ढिगरियों को नीचे फेंक वह बोला, "क्यों, क्या हुआ?"

पासमान को देखते ही मूली पेट पर हाथ मारकर बोली, "हाय, कोई गोखरू निकाल ले गया है?"

पासमान का कलेजा धक्-से रह गया। वह मूली के निकट

बैठ गया। बाला, "क्या बकती हो ! कहाँ रखा था ?"

मूली रो-रोकर बता रही थी। उसने गोखरू एक पोटली रखा था। सवेरे, पासमान के जाने के पश्चात वह उठी, पोटली गाड़ी के नीचे बिखरी पड़ी थी।

मूली की दशा देखते नहीं बनती थी। स्त्री को वैसे ही चाँदी, गहने-गट्टे से लगाव होता है। फिर यह गोखरू तो अपनी दादी से मिला था और उसे वह प्राणों से भी अधि सँभालकर रखती थी। पासमान जल्दी-जल्दी पोटली का सा अलग-अलग करके देखने लगा। गाड़ी के भीतर भी उसने एक वस्तु को उलट-पलटकर देखा। जब गोखरू कहीं नहीं मिला, बोला, "भवनी ! सोचकर बता, कहीं और तो नहीं धर दिया

मूली को कोई भ्रम नहीं था। उसे भली-भाँति स्मरण था रात को सोने से पहले उसने उतारकर इसी पोटली में रखा

सबकी सहानुभूति उनके साथ थी। वे मूली को सान्त्व देने का यत्न कर रहे थे। मूली की आँखों से अश्रु-धा निरन्तर बह रही थीं। गोखरू वह सदा पहने रखती थी। को पता नहीं उसे क्या सूझी कि उतारकर पोटली में धर दि इस बात का उसे बड़ा दुख था। जैसे विलाप करते हुए बो "हाय ! मैं क्या जानती थी कि किसी खुरचाली की आँख पर लगी है। सब कुछ धरा है। गोखरू ही नहीं हैं..."

विन्दक गन्धी भी आ गया और दोनों को ढाढ़स बँधाने ल "हो न हो," वह बोला, "यह करतूति उसी बन्दरवाले की वह साँटिया ही निकालकर ले गया होगा।"

मूली और पासमान उसका मुँह देखने लग गये। उन्हों कल्पना भी नहीं की थी कि विचक्खण भी ऐसा कुकर्म कर सक है। विन्दक कह रहा था, "यह काम किसी भेदी का ही सकता है। बन्दरवाले को छोड़कर और किसे पता कि तुम्ह

पोटली में गोखरू धरा है…”

पासमान को विश्वास ही नहीं होता था, परन्तु मूली को सहज विश्वास हो गया कि विचक्खण ही गोखरू चुराकर ले गया है। तभी तो रात को लौटकर नहीं आया।

सब लोग समझा-बुझाकर चले गये, परन्तु मूली के आँसू थमते ही नहीं थे। वह बार-बार स्वयं को कोसती थी कि क्यों उसने गोखरू उतारकर पोटली में धर दिया।

अब दोनों बैठकर विचार करने लगे। विन्दक का अनुमान सत्य हो सकता था। परन्तु विचित्र बात तो यह थी कि विचक्खण दोपहर के पश्चात यहाँ से चला गया था और फिर लौटकर नहीं आया था। और मूली ने गोखरू रात को, सोने से कुछ ही पहले, पोटली में रखा था।

पासमान के मन के एक कोने से सन्देह सिर उठा रहा था। एकाएक उसे ध्यान आया कि रात को कुछ खटका हुआ था। नींद में उसने समझा था कि कोई बिल्ली या कुत्ता घुस आया है और मुँह मार रहा है। घुप्प अँधेरा था, दिखायी कुछ देता नहीं था और पासमान गूढ़ निद्रा में था। लेटे-लेटे ही उसने “दुरै-दुरै” कहकर दुत्कारा और फिर सो गया।

इसके पश्चात उसे कुछ स्मरण नहीं।

सोच-सोचकर उसका माथा चकराने लगा। धूप चढ़ आयी थी। फिर एकाएक उसे कलवाली घटना भी स्मरण हो आयी जब विचक्खण को भरी हाट में उन लोगों ने अपमानित किया था। अब पासमान को भी विश्वास हो चला कि विचक्खण ने अपने बन्दरों को सिखा रखा है और वे सामान चुराकर उसे देते हैं। यह बात मन में आते ही उसका क्रोध भड़कने लगा—‘कहीं, सचमुच, विचक्खण ने अपने बन्दर को भेजकर तो पोटली में से गोखरू नहीं निकाल लिया? हो न हो, किसी समय रात को

बन्दर आया होगा और गोखरूवाली पोटली में से गो
निकाल ले गया होगा...'

सोचते-सोचते उसके नथुने फड़कने लगे और उसकी आं
में रक्त उतर आया। उसका विश्वास दृढ़ हो गया कि विचक्ख
ही चोर है और गोखरू भी वही चुराकर ले गया है 'तभी
अभी तक लौटकर नहीं आया। अब क्यों अपना काला
दिखाने आयेगा? परन्तु भागकर जायेगा भी कहाँ! अभी
नहीं गया होगा...' बस, पासमान मूली को बिना बताये चुप
गाड़ी से उतरा और चलने लगा। मूली ताड़ गयी, बोली, "
जा रहे हो?"

पासमान के तन-मन में जैसे अग्नि भड़क उठी थी--'कल
उसे निर्दोष समझा था, पर क्या पता था कि वह इतना
और कृतघ्न है। अभी दूर नहीं गया होगा। हाथ में आ
तो जीता नहीं छोड़ूँगा उसे...'

मूली चिल्लाती रह गयी, पर पासमान ने एक नहीं सुनी

जल्दी-जल्दी जा रहा था पासमान। सार्थवाला मैदान
करके वह उसी स्थान पर गया जहाँ कल विचक्खण की
हुई थी। परन्तु अगले ही क्षण उसे अपनी मूढ़ता पर पछ
हुआ...यदि विचक्खण ने गोखरू चुराया होगा तो फिर वह
क्यों आयेगा? रात को ही कहीं निकल नहीं गया होगा...

पासमान निराशा की अतल गहराइयों में डूबने-उतर
लगा। उसका अंग-अंग ढीला हो रहा था। फिर वह धीरे
उठा और एक टूटी हुई हट्टी के आगे आकर बैठ गया, जिस
छत की कड़ियाँ भीतर लटक रही थीं।

अब दौड़-भाग करना व्यर्थ था। पासमान दोनों हाथों में

पकड़कर बैठ गया। फिर जैसे उद्विग्न होकर उठा और निरुद्देश्य-सा चल पड़ा। हाट से निकलकर वह भटकने लगा। चलते-चलते वह एक ढलवाँ गली में आ गया जहाँ भड़भूँजों के घर थे। सुरंग-जैसी सँकरी गली में माल से लदे घोड़ों, गधों, ऊँटों और दूसरे ढोर-डंगरों का ताँता लगा हुआ था। पासमान एक बूढ़ी भटियारिन के निकट गया और उससे पूछने लगा कि किसी बन्दर-वाले को इधर जाते हुए तो उसने नहीं देखा!

भटियारिन चने भून रही थी। परुई में दाने तड़-तड़ उछल रहे थे। बुढ़िया ने धुएँ-भरी आँखों से पासमान की ओर देखा। फिर चलनी से परुई को ढक उसने अपने काले चेहरे का ढेर सारा पसीना पोंछते हुए कहा, "बन्दरवाला!...सवेरे एक बन्दरवाला जातक इधर आया था..."

पासमान के हृदय की धड़कन एकाएक तीव्र हो गयी। बुढ़िया चलनी में दाने छानते हुए कह रही थी, "नीचे रहट पर मैं जलावन बटोरने गयी थी। सवेरे। वहीं देखा था मैंने, दो बन्दर उसके पास थे। पतला-सा जातक..."

'...अब बचकर नहीं जायेगा...' एकाएक पासमान का रक्त खौल उठा—एक बार हाथ में आ जाये विड्ज,[1] तो उसके प्राण ही ले लूँगा।...'

पासमान जल्दी-जल्दी चल पड़ा। गली में गधों का झुण्ड आ रहा था। किसी तरह राह बनाते हुए वह रहट की ओर भागा। आगे मोड़ पर तेलियों का टोला था। एक व्यक्ति को इस तरह भागते हुए देखकर तेली बड़े चकित हुए।

तेलियों के टोले के साथ ही खेत थे और बायीं ओर वह रहट था जहाँ बुढ़िया भटियारिन ने विचक्खण को देखा था। पासमान

1. बीठ में जनमा कीड़ा।

दौड़कर गया और पेड़ों के नीचे देखने लगा। उसने चप्पा-च
छान मारा, परन्तु विचक्खण कहीं दिखायी नहीं दिया। फिर
बाहर निकल आया और थकी-थकी आँखों से देखने लगा।

दूर उसे एक ओट्ठी आता दिखायी दिया। पासमान जा
राह में खड़ा हो गया। ओट्ठी के आते ही उसने पूछा कि
किसी बन्दरवाले को तो नहीं देखा!

संयोग की बात कि ओट्ठी को राह में एक बन्दरवाला मि
था। उसने जो हुलिया बताया, तो अब कोई सन्देह नहीं रहा
वह और कोई नहीं, विचक्खण ही था। ओट्ठी बोला कि
देर पहले उन पेड़ों के नीचे एक बन्दरवाला लेटा था।

पासमान फिर वहाँ रुका नहीं। ओट्ठी खड़ा देखता रह
और वह भागा।

रहट के साथ ही कृषि-भूमि समाप्त हो जाती थी और
साथ धन्व लगता था। सब ओर जैसे रेत का सागर फैला
था। पासमान फुसफुसी रेत में दौड़ रहा था। उसके पाँव
थे, फिर भी वह इतने वेग से दौड़ रहा था जितने वेग से कोई
में दौड़ सकता है।

दोपहर की चिलचिलाती धूप थी और रेत तप रही थी। पा
मान के नंगे पैरों में फफोले पड़ गये, पर इसकी चिन्ता
बिना वह दौड़ रहा था। उसे डर था कि यदि विलम्ब हो गया,
विचक्खण खिसक जायेगा और फिर पकड़ाई नहीं देगा।

आठ-दस पेड़ों का वह झुरमुट था। वहाँ पहुँचते-पहुँचते उ
साँस फूलने लगी थी। प्यास के मारे गला भी सूख रहा था, प
वह जैसे प्राणों की बाजी लगाकर भी विचक्खण को पक
चाहता था।

पेड़ों की छाया के नीचे जाकर वह बुरी तरह खाँसने लगा। ह नीचे बैठ गया और बड़ी देर तक खाँसता रहा। आँखों के ामने तारे दिखायी पड़ने लगे। लगता था जैसे खाँसते-खाँसते सकी आँखें ही बाहर निकल आयेंगी। थोड़ी देर में जब उसकी ाँस में साँस आयी, तो वह उठकर खड़ा हो गया और पेड़ों के ोचे देखने लगा। परन्तु विचक्खण कहीं भी दिखायी नहीं दिया। हाँ छिपने का कोई स्थान भी नहीं था। पासमान आँखें फाड़े ड़ों की सघन पत्तियों में देखते हुए झुण्ड से बाहर निकला और त के टीले पर चढ़कर देखने लगा। दूर रेत के विस्तृत सागर में ो उसने दृष्टि दौड़ायी तो एकाएक जैसे उसके हृदय की धड़कन न्द हो गयी। दूर, विचक्खण जल्दी-जल्दी चलते हुए जा रहा था ौर उसके पैरों के चिह्न रेत में दिखायी पड़ते थे।

पासमान ने सिर से पगिया उतारकर फिर बाँध ली और टीले उतरकर विचक्खण के पीछे भागा।

वह विचक्खण ही था और अपनी धुन में जा रहा था। अभी क उसने मुड़कर नहीं देखा था। स्पष्ट था कि उसे ज्ञात नहीं था क कोई उसके पीछे दौड़कर आ रहा है। धूप से बचने के लिए सने सिर पर काला कपड़ा बाँध रखा था''वह जल्दी-जल्दी डग रते हुए जा रहा था।

जब दोनों के बीच लगभग पचास धनुष का अन्तर रह गया, ो पासमान ने चिल्लाकर पुकारा। विचक्खण ने तत्काल पीछे खा और फिर हतप्रभ-सा देखता रह गया। उसने सोचा भी नहीं ा कि पासमान उसका पीछा करते हुए यहाँ तक आ पहुँचेगा। ह जल्दी-जल्दी आया और हाँफते हुए पासमान के निकट खड़ा कर बोला, "भैया, क्या बात है?"

पासमान खड़ा-खड़ा खाँस रहा था। धूल पसीने से उसकी देह थपथ थी और साँस जैसे उखड़ रही थी। विचक्खण चकित,

भयभीत आँखों से देखने लगा। तभी एकाएक पासमान ने
से अपनी पगिया उतारकर पसीना पोंछा और फिर आग्नेय
से उसकी ओर देखते हुए कहा, "निकाल धर हमारा गोखरू
विचक्खण तो उसका मुँह ही देखता रह गया। बोला,
कह रहे हो, भैया..."

पासमान ने आव देखा न ताव, लपककर विचक्खण का
पकड़ लिया और फिर चीखकर कहा, "पाजी, कृतघ्न,
स्थाली में खाता है, उसी में छेद करता है..." कहते-कहते
विचक्खण का गला दबाया, तो विचक्खण बाँ-बाँ करने लगा।
उसकी आँखें बाहर निकल आयीं। बन्दर भी भयभीत होकर
चिपर करने लगे और जैसे रस्सियाँ तुड़ाने पर तुल गये।

परन्तु विचक्खण का गला पासमान ने नहीं छोड़ा।
उसने तनिक और दबाया, तो विचक्खण के हाथ-पैर ढी
गये और बन्दरों की रस्सियाँ छूट गयीं और दोनों बन्दर
में भाग गये।

जब विचक्खण के प्राणों पर आ बनी, तो पूरी शक्ति
कर उसने झटका मारा और वह पासमान के हाथों से
दूर जा खड़ा हुआ और हाँफने लगा। पासमान जैसे उसे द
के लिए फिर लपककर आया और पंजे फैलाकर बोला, "
हमारा गोखरू निकाल धरो, नहीं तो रक्त पी जाऊँगा..."

विचक्खण का हृदय धौंकनी की तरह चल रहा था। वह
बार पूछता था, किसका गोखरू, कैसा गोखरू? ...

ऊपर से सूरज तप रहा था और नीचे से रेत। पासमा
रहा था कि विचक्खण इस तरह नहीं उगलेगा। इसलिए
उठाकर चेतावनी देते हुए बोला, "देख, विचक्खण, अब तू
नहीं जा सकता। तू गोखरू चुराकर भागा है। भलाई इस
कि चुपके से निकाल धर, नहीं तो प्राण ही ले लूँगा।"

विचक्खण सूनी-सूनी आँखों से देख रहा था। बोला, "भइया! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं। तुम्हें भ्रम तो नहीं हो गया!"

पासमान दाँत पीसते हुए बोला, "भ्रम हो गया है! अभी बताता हूँ—रेत में मुँह रगड़ूँगा, तो सब उगल दोगे..."

पासमान उसे पकड़ने के लिए फिर लपका, किन्तु विचक्खण छिटककर दूर जा खड़ा हुआ और डरते-डरते बोला, "भैया, यह कैसा दोष लगा रहे हो! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं।"

पासमान ने तड़पकर कहा, "कल तक तो मैं यही मानता था कि तू एक अनाथ जातक है, पर अब समझा कि वे लोग झूठ नहीं कहते थे। तेरे जैसे कृतघ्न जन को चक्करवरती राज भी दे दो, तो भी उसका पेट नहीं भरेगा। तूने उन्हीं के साथ छल किया जिन्होंने तेरे पेट में रोटी डाली। उसी स्थाली में छेद किया जिसमें खाता था... बन्दरों को सिखाकर चोरी करवाता है..."

अब जाकर थोड़ी बात उसकी समझ में आयी। तड़पकर बोला, "भैया! तुम भी उन लोगों की बातों में आ गये! इसीलिए हम पर दोष लगाते हो! हम सच कहते हैं, हम चोर नहीं। हम सच कहते हैं, हम किसी परायी वस्तु को छूते तक नहीं। धरती माता का स्पर्श करके कहते हैं, हम किसी की वस्तु को हाथ तक नहीं लगाते। विश्वास न हो, तो हमारा झोला देख लो, हमारे वसन उतरवाकर देख लो!" और फिर अगले क्षण उसने अपना झोला रेत पर उलट दिया। फिर एक-एक सामान बिखेरकर वह दिखाने लगा। साथ-साथ आँसू बहाता था और बोलता था। रेत पर बाँस की नलकियों, अंजनदानियों और सलाइयों का ढेर लग गया। कछुवे की खोपड़ी से बना कटाह भी उसने औंधा फेंककर उठाया, "लो, देख लो..." वह बोला, "है तुम्हारा गोखरू इसमें?"

भयभीत आँखों से देखने लगा। तभी एकाएक पासमान ने झटके से अपनी पगिया उतारकर पसीना पोंछा और फिर आग्नेय आँखों से उसकी ओर देखते हुए कहा, "निकाल धर हमारा गोखरू..."

विचक्खण तो उसका मुँह ही देखता रह गया। बोला, "क्या कह रहे हो, भैया..."

पासमान ने आव देखा न ताव, लपककर विचक्खण का गला पकड़ लिया और फिर चीखकर कहा, "पाजी, कृतघ्न, जिस स्थाली में खाता है, उसी में छेद करता है..." कहते-कहते उसने विचक्खण का गला दबाया, तो विचक्खण बाँ-बाँ करने लग गया। उसकी आँखें बाहर निकल आयीं। बन्दर भी भयभीत होकर चिपर-चिपर करने लगे और जैसे रस्सियाँ तुड़ाने पर तुल गये।

परन्तु विचक्खण का गला पासमान ने नहीं छोड़ा। फिर उसने तनिक और दबाया, तो विचक्खण के हाथ-पैर ढीले पड़ गये और बन्दरों की रस्सियाँ छूट गयीं और दोनों बन्दर मरुथल में भाग गये।

जब विचक्खण के प्राणों पर आ बनी, तो पूरी शक्ति लगा-कर उसने झटका मारा और वह पासमान के हाथों से छूटकर दूर जा खड़ा हुआ और हाँफने लगा। पासमान जैसे उसे दबोचने के लिए फिर लपककर आया और पंजे फैलाकर बोला, "चुपचाप हमारा गोखरू निकाल धरो, नहीं तो रक्त पी जाऊँगा..."

विचक्खण का हृदय धौंकनी की तरह चल रहा था। वह बार-बार पूछता था, किसका गोखरू, कैसा गोखरू?...

ऊपर से सूरज तप रहा था और नीचे से रेत। पासमान देख रहा था कि विचक्खण इस तरह नहीं उगलेगा। इसलिए उँगली उठाकर चेतावनी देते हुए बोला, "देख, विचक्खण, अब तू बचकर नहीं जा सकता। तू गोखरू चुराकर भागा है। भलाई इसी में है कि चुपके से निकाल धर, नहीं तो प्राण ही ले लूँगा।"

विचक्खण सूनी-सूनी आँखों से देख रहा था। बोला,
इया ! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं। तुम्हें भ्रम तो नहीं
गया !"

पासमान दाँत पीसते हुए बोला, "भ्रम हो गया है ! अभी
ता हूँ —रेत में मुँह रगड़ूँगा, तो सब उगल दोगे..."

पासमान उसे पकड़ने के लिए फिर लपका, किन्तु विचक्खण
कक्कर दूर जा खड़ा हुआ और डरते-डरते बोला, "भैया, यह
दोष लगा रहे हो ! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं।"

पासमान ने तड़पकर कहा, "कल तक तो मैं यही मानता था
तू एक अनाथ जातक है, पर अब समझा कि वे लोग झूठ नहीं
ते थे। तेरे जैसे कृतघ्न जन को चक्करवरती राज भी दे दो, तो
उसका पेट नहीं भरेगा। तूने उन्हीं के साथ छल किया जिन्होंने
पेट में रोटी डाली। उसी स्थाली में छेद किया जिसमें खाता
...वन्दरों को सिखाकर चोरी करवाता है..."

अब जाकर थोड़ी बात उसकी समझ में आयी। तड़पकर बोला,
या ! तुम भी उन लोगों की बातों में आ गये ! इसीलिए हम
दोष लगाते हो ! हम सच कहते हैं, हम चोर नहीं। हम सच
ते हैं, हम किसी परायी वस्तु को छूते तक नहीं। धरती माता
स्पर्श करके कहते हैं, हम किसी की वस्तु को हाथ तक नहीं
ाते। विश्वास न हो, तो हमारा झोला देख लो, हमारे वसन
रवाकर देख लो !" और फिर अगले क्षण उसने अपना झोला
पर उलट दिया। फिर एक-एक सामान बिखेरकर वह
ाने लगा। साथ-साथ आँसू बहाता था और बोलता था।
पर वाँस की नलकियों, अंजनदानियों और सलाइयों का ढेर
गया। कछुवे की खोपड़ी से बना कटाह भी उसने औंधा
कर उठाया, "लो, देख लो..." वह बोला, "है तुम्हारा
खरू इसमें ?"

कहते-कहते वह खड़ा हो गया और सिर का पटका झाड़कर दिखाने लगा, "यहाँ भी देख लो। है तुम्हारा गोखरू इसमें ?"

पासमान हतप्रभ-सा खड़ा देख रहा था। विचक्खण रोते हुए कह रहा था, "अब भी विश्वास नहीं होता। गला काटूँ या पेट काटूँ, तब विश्वास आयेगा..."

पासमान की बुद्धि जैसे चकरा गयी। विचक्खण बोले जा रहा था, "जो मित्र से द्रोह करता है, उसे पापरोग होता है।...तुम सोचते होगे कि विचक्खण इस तरह क्यों चला गया। इसीलिए तुमने सोचा कि विचक्खण तुम्हारा गोखरू चुराकर भाग गया है। हम क्यों न भागते ? तुम ही बताओ, भरी हाट में कोई अपमान करे, मारे-पीटे, चोर कहे, तो तुम वहाँ एक पल भी रहोगे, वहाँ का पानी भी पिओगे ? बोलो ! उन लोगों ने भरी हाट में हमें चोर कहा। इसीलिए हम किसी को बताये बिना ही चले आये। सोचा कि इतनी बड़ी धरती है, जहाँ सींग समायेंगे, चले जायेंगे..." उसकी आँखों से टप-टप आँसू बह रहे थे—"हम चले आये इसीलिए आप लोगों ने समझा कि हम चोरी करके भागे ! हम चले आये, इसलिए कि अपमान सहकर वहाँ नहीं रह सकते थे। पर आप लोगों ने समझा कि विचक्खण चोर है, बटमार है, गोखरू चुराकर भागा है..."

पासमान को लगा कि विचक्खण के एक-एक शब्द से उसकी निर्दोषता टपक रही है। वह सोचने लगा कि, सचमुच, अपमान से बचने के लिए ही विचक्खण कुलगाम से भागा। सोच-सोचकर पासमान को अपने ऊपर ग्लानि हुई। वह सिर पकड़कर वहीं बैठ गया। विचक्खण आया और उसके निकट बैठते हुए बोला, "भइया ! किस गोखरू की बात करते हो ?"

पासमान जैसे विचक्खण से आँखें मिलाने का साहस नहीं कर रहा था। पैर के अँगूठे से रेत कुरेदते हुए धीरे-धीरे बताने लगा

किस तरह मूली ने अपना गोखरू पोटली में धर दिया था
से रात को कोई निकालकर ले गया।

सुनते ही विचक्खण रुँधे गले से बोला, "भइया! मैं तो दिन
ही वहाँ से चला आया था! गोखरू तुम्हारा रात को
कला..." वह फफक-फफककर रो पड़ा। "फिर दोष मेरे मत्थे
ों मढ़ते हो?"

अभी तक उसे पता नहीं चला था कि उसके बन्दर भाग गये
। अचानक उसने देखा, तो घबराकर खड़ा हो गया, "हाय!
ारे बन्दर?" और वह इधर-उधर देखने लगा। उसके मुख
चीख-सी निकल गयी।

पासमान भी उठकर खड़ा हो गया। विचक्खण बोला,
भइया! हमारे बन्दर भाग गये। दूर नहीं गये होंगे अभी। तुम
ौट जाओ। हम उन्हें पकड़कर तुम्हारे पास कुलगाम आयेंगे..."

फिर विचक्खण वहाँ ठहरा नहीं। जल्दी से सारा सामान झोले
समेटकर भागा। पासमान खड़ा देखता रह गया और विचक्खण
ोड़ी ही देर में नरकुलों और झाड़ियों के पीछे ओझल हो गया।

पासमान ने रेत पर से अपनी पगिया उठायी, रेत झाड़ी और
सर पर बाँध ली। उसे विश्वास हो गया था कि विचक्खण निर्दोष
। गोखरू उसने नहीं चुराया।

पीछे विन्दक आदि मूली को ढाढ़स बँधा रहे थे। सभी चकित थे
कि पासमान चला कहाँ गया! मूली दुख के अथाह सागर में डूबी
आँसू बहा रही थी। तभी दूर से पासमान आता दिखायी दिया।

देखते ही मूली का कलेजा धक से रह गया। पासमान का
मुंह-सिर धूल-धूसरित था। मूली फिर आँसू बहाने लगी। वह
उठकर खड़ी हो गयी और पासमान को जैसे आड़े हाथों लेते हुए

दौड़कर गया और पेड़ों के नीचे देखने लगा। उसने चप्पा-चप्पा छान मारा, परन्तु विचक्खण कहीं दिखायी नहीं दिया। फिर वह बाहर निकल आया और थकी-थकी आँखों से देखने लगा।

दूर उसे एक ओट्ठी आता दिखायी दिया। पासमान जाकर राह में खड़ा हो गया। ओट्ठी के आते ही उसने पूछा कि आगे किसी बन्दरवाले को तो नहीं देखा!

संयोग की बात कि ओट्ठी को राह में एक बन्दरवाला मिला था। उसने जो हुलिया बताया, तो अब कोई सन्देह नहीं रहा कि वह और कोई नहीं, विचक्खण ही था। ओट्ठी बोला कि थोड़ी देर पहले उन पेड़ों के नीचे एक बन्दरवाला लेटा था।

पासमान फिर वहाँ रुका नहीं। ओट्ठी खड़ा देखता रह गया और वह भागा।

रहट के साथ ही कृषि-भूमि समाप्त हो जाती थी और उसके साथ धन्व लगता था। सब ओर जैसे रेत का सागर फैला हुआ था। पासमान फुसफुसी रेत में दौड़ रहा था। उसके पाँव धँसते थे, फिर भी वह इतने वेग से दौड़ रहा था जितने वेग से कोई रेत में दौड़ सकता है।

दोपहर की चिलचिलाती धूप थी और रेत तप रही थी। पासमान के नंगे पैरों में फफोले पड़ गये, पर इसकी चिन्ता किये बिना वह दौड़ रहा था। उसे डर था कि यदि विलम्ब हो गया, तो विचक्खण खिसक जायेगा और फिर पकड़ाई नहीं देगा।

आठ-दस पेड़ों का वह झुरमुट था। वहाँ पहुँचते-पहुँचते उसकी साँस फूलने लगी थी। प्यास के मारे गला भी सूख रहा था, परन्तु वह जैसे प्राणों की बाजी लगाकर भी विचक्खण को पकड़ना चाहता था।

पेड़ों की छाया के नीचे जाकर वह बुरी तरह खाँसने लगा। वह नीचे बैठ गया और बड़ी देर तक खाँसता रहा। आँखों के सामने तारे दिखायी पड़ने लगे। लगता था जैसे खाँसते-खाँसते उसकी आँखें ही बाहर निकल आयेंगी। थोड़ी देर में जब उसकी साँस में साँस आयी, तो वह उठकर खड़ा हो गया और पेड़ों के नीचे देखने लगा। परन्तु विचक्खण कहीं भी दिखायी नहीं दिया। वहाँ छिपने का कोई स्थान भी नहीं था। पासमान आँखें फाड़े पेड़ों की सघन पत्तियों में देखते हुए झुण्ड से बाहर निकला और रेत के टीले पर चढ़कर देखने लगा। दूर रेत के विस्तृत सागर में जो उसने दृष्टि दौड़ायी तो एकाएक जैसे उसके हृदय की धड़कन बन्द हो गयी। दूर, विचक्खण जल्दी-जल्दी चलते हुए जा रहा था और उसके पैरों के चिह्न रेत में दिखायी पड़ते थे।

पासमान ने सिर से पगिया उतारकर फिर बाँध ली और टीले से उतरकर विचक्खण के पीछे भागा।

वह विचक्खण ही था और अपनी धुन में जा रहा था। अभी तक उसने मुड़कर नहीं देखा था। स्पष्ट था कि उसे ज्ञात नहीं था कि कोई उसके पीछे दौड़कर आ रहा है। धूप से बचने के लिए उसने सिर पर काला कपड़ा बाँध रखा था···वह जल्दी-जल्दी डग भरते हुए जा रहा था।

जब दोनों के बीच लगभग पचास धनुष का अन्तर रह गया, तो पासमान ने चिल्लाकर पुकारा। विचक्खण ने तत्काल पीछे देखा और फिर हतप्रभ-सा देखता रह गया। उसने सोचा भी नहीं था कि पासमान उसका पीछा करते हुए यहाँ तक आ पहुँचेगा। वह जल्दी-जल्दी आया और हाँफते हुए पासमान के निकट खड़ा होकर बोला, "भैया, क्या बात है ?"

पासमान खड़ा-खड़ा खाँस रहा था। धूल पसीने से उसकी देह लथपथ थी और साँस जैसे उखड़ रही थी। विचक्खण चकित,

भयभीत आँखों से देखने लगा। तभी एकाएक पासमान ने झटके से अपनी पगिया उतारकर पसीना पोंछा और फिर आग्नेय आँखों से उसकी ओर देखते हुए कहा, "निकाल धर हमारा गोखरू..."

विचक्खण तो उसका मुँह ही देखता रह गया। बोला, "क्या कह रहे हो, भैया..."

पासमान ने आव देखा न ताव, लपककर विचक्खण का गला पकड़ लिया और फिर चीखकर कहा, "पाजी, कृतघ्न, जिस स्थाली में खाता है, उसी में छेद करता है..." कहते-कहते उसने विचक्खण का गला दबाया, तो विचक्खण वाँ-वाँ करने लग गया। उसकी आँखें बाहर निकल आयीं। वन्दर भी भयभीत होकर चिपर-चिपर करने लगे और जैसे रस्सियाँ तुड़ाने पर तुल गये।

परन्तु विचक्खण का गला पासमान ने नहीं छोड़ा। फिर उसने तनिक और दबाया, तो विचक्खण के हाथ-पैर ढीले पड़ गये और बन्दरों की रस्सियाँ छूट गयीं और दोनों बन्दर मरुथल में भाग गये।

जब विचक्खण के प्राणों पर आ बनी, तो पूरी शक्ति लगाकर उसने झटका मारा और वह पासमान के हाथों से छूटकर दूर जा खड़ा हुआ और हाँफने लगा। पासमान जैसे उसे दबोचने के लिए फिर लपककर आया और पंजे फैलाकर बोला, "चुपचाप हमारा गोखरू निकाल धरो, नहीं तो रक्त पी जाऊँगा..."

विचक्खण का हृदय धौंकनी की तरह चल रहा था। वह बार-बार पूछता था, किसका गोखरू, कैसा गोखरू?...

ऊपर से सूरज तप रहा था और नीचे से रेत। पासमान देख रहा था कि विचक्खण इस तरह नहीं उगलेगा। इसलिए उँगली उठाकर चेतावनी देते हुए बोला, "देख, विचक्खण, अब तू बचकर नहीं जा सकता। तू गोखरू चुराकर भागा है। भलाई इसी में कि चुपके से निकाल धर, नहीं तो प्राण ही ले लूँगा।"

विचक्खण सूनी-सूनी आँखों से देख रहा था। बोला, "भइया! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं। तुम्हें भ्रम तो नहीं हो गया!"

पासमान दाँत पीसते हुए बोला, "भ्रम हो गया है! अभी बताता हूँ—रेत में मुँह रगड़ूँगा, तो सब उगल दोगे..."

पासमान उसे पकड़ने के लिए फिर लपका, किन्तु विचक्खण छिटककर दूर जा खड़ा हुआ और डरते-डरते बोला, "भैया, यह कैसा दोष लगा रहे हो! हमने तुम्हारा गोखरू देखा तक नहीं।"

पासमान ने तड़पकर कहा, "कल तक तो मैं यही मानता था कि तू एक अनाथ जातक है, पर अब समझा कि वे लोग झूठ नहीं कहते थे। तेरे जैसे कृतघ्न जन को चक्करवरती राज भी दे दो, तो भी उसका पेट नहीं भरेगा। तूने उन्हीं के साथ छल किया जिन्होंने तेरे पेट में रोटी डाली। उसी स्थाली में छेद किया जिसमें खाता था...बन्दरों को सिखाकर चोरी करवाता है..."

अब जाकर थोड़ी बात उसकी समझ में आयी। तड़पकर बोला, "भैया! तुम भी उन लोगों की बातों में आ गये! इसीलिए हम पर दोष लगाते हो! हम सच कहते हैं, हम चोर नहीं। हम सच कहते हैं, हम किसी परायी वस्तु को छूते तक नहीं। धरती माता का स्पर्श करके कहते हैं, हम किसी की वस्तु को हाथ तक नहीं लगाते। विश्वास न हो, तो हमारा झोला देख लो, हमारे वसन उतरवाकर देख लो!" और फिर अगले क्षण उसने अपना झोला रेत पर उलट दिया। फिर एक-एक सामान बिखेरकर वह दिखाने लगा। साथ-साथ आँसू बहाता था और बोलता था। रेत पर बाँस की नलकियों, अंजनदानियों और सलाइयों का ढेर लग गया। कछुवे की खोपड़ी से बना कटाह भी उसने औंधा फेंककर उठाया, "लो, देख लो..." वह बोला, "है तुम्हारा गोखरू इसमें?"

कहते-कहते वह खड़ा हो गया और सिर का पटका झाड़कर दिखाने लगा, "यहाँ भी देख लो। है तुम्हारा गोखरू इसमें ?"

पासमान हतप्रभ-सा खड़ा देख रहा था। विचक्खण रोते हुए कह रहा था, "अब भी विश्वास नहीं होता। गला काटूँ या पेट काटूँ, तब विश्वास आयेगा..."

पासमान की बुद्धि जैसे चकरा गयी। विचक्खण बोले जा रहा था, "जो मित्र से द्रोह करता है, उसे पापरोग होता है।...तुम सोचते होगे कि विचक्खण इस तरह क्यों चला गया। इसीलिए तुमने सोचा कि विचक्खण तुम्हारा गोखरू चुराकर भाग गया है। हम क्यों न भागते ? तुम ही बताओ, भरी हाट में कोई अपमान करे, मारे-पीटे, चोर कहे, तो तुम वहाँ एक पल भी रहोगे, वहां का पानी भी पिओगे ? बोलो ! उन लोगों ने भरी हाट में हमें चोर कहा। इसीलिए हम किसी को बताये बिना ही चले आये। सोचा कि इतनी बड़ी धरती है, जहाँ सींग समायेंगे, चले जायेंगे..." उसकी आँखों से टप-टप आँसू बह रहे थे—"हम चले आये इसीलिए आप लोगों ने समझा कि हम चोरी करके भागे ! हम चले आये, इसलिए कि अपमान सहकर वहाँ नहीं रह सकते थे। पर आप लोगों ने समझा कि विचक्खण चोर है, बटमार है, गोखरू चुराकर भागा है..."

पासमान को लगा कि विचक्खण के एक-एक शब्द से उसकी निर्दोषता टपक रही है। वह सोचने लगा कि, सचमुच, अपमान से बचने के लिए ही विचक्खण कुलगाम से भागा। सोच-सोचकर पासमान को अपने ऊपर ग्लानि हुई। वह सिर पकड़कर वहीं बैठ गया। विचक्खण आया और उसके निकट बैठते हुए बोला, "भइया ! किस गोखरू की बात करते हो ?"

पासमान जैसे विचक्खण से आँखें मिलाने का साहस नहीं कर रहा था। पैर के अँगूठे से रेत कुरेदते हुए धीरे-धीरे बताने लगा

कि किस तरह मूली ने अपना गोखरू पोटली में धर दिया था जिसे रात को कोई निकालकर ले गया।

सुनते ही विचक्खण रुँधे गले से बोला, "भइया! मैं तो दिन को ही वहाँ से चला आया था! गोखरू तुम्हारा रात को निकला..." वह फफक-फफककर रो पड़ा। "फिर दोष मेरे मत्थे क्यों मढ़ते हो?"

अभी तक उसे पता नहीं चला था कि उसके बन्दर भाग गये हैं। अचानक उसने देखा, तो घबराकर खड़ा हो गया, "हाय! हमारे बन्दर?" और वह इधर-उधर देखने लगा। उसके मुख से चीख-सी निकल गयी।

पासमान भी उठकर खड़ा हो गया। विचक्खण बोला, "भइया! हमारे बन्दर भाग गये। दूर नहीं गये होंगे अभी। तुम लौट जाओ। हम उन्हें पकड़कर तुम्हारे पास कुलगाम आयेंगे..."

फिर विचक्खण वहाँ ठहरा नहीं। जल्दी से सारा सामान झोले में समेटकर भागा। पासमान खड़ा देखता रह गया और विचक्खण थोड़ी ही देर में नरकुलों और झाड़ियों के पीछे ओझल हो गया।

पासमान ने रेत पर से अपनी पगिया उठायी, रेत झाड़ी और सिर पर बाँध ली। उसे विश्वास हो गया था कि विचक्खण निर्दोष है। गोखरू उसने नहीं चुराया।

पीछे विन्दक आदि मूली को ढाढ़स बँधा रहे थे। सभी चकित थे कि पासमान चला कहाँ गया! मूली दुख के अथाह सागर में डूबी आँसू बहा रही थी। तभी दूर से पासमान आता दिखायी दिया।

देखते ही मूली का कलेजा धक से रह गया। पासमान का मुँह-सिर धूल-धूसरित था। मूली फिर आँसू बहाने लगी। वह उठकर खड़ी हो गयी और पासमान को जैसे आड़े हाथों लेते हुए

बोली, "सवेरे से कहाँ मारे-मारे फिरते हो ? अपना ध्यान नहीं था, तो हम लोगों का तो कर लिया होता ! गोखरू के पीछे क्या प्राण दे दोगे ?"

पासमान गाड़ी के साये में आकर बैठ गया । उसकी पलकों में रेत के कण किरकिरा रहे थे और पैरों में पड़े फफोले पीड़ा दे रहे थे । विन्दक गन्धी उसके निकट आकर बैठ गया और बोला, "बताकर तो जाते ! सवेरे से आँसू बहा रही है !" उसके कानों में सुगन्धी के फाहे रखे थे और सुगन्ध की लपटें निकल रही थीं।

मूली बोली, "मैं बार-बार कहती थी कि कुल-सील नहीं जानते उसका, खुरचाली को अपने साथ मत रखो । अब देख लिया ! आँखों में धूल झोंककर निकल गया है !"

विन्दक बोला, "जो मिट्टी की स्थाली चुराता है, वह काँसे की स्थाली भी चुरा सकता है ! भइया, दोष हम तुम्हें ही देंगे। मूली ने सब बता दिया है । वह राह में तुम लोगों के साथ लग गया था । देखने में कितना भोला-भाला लगता था; पर कितना प्रपंची निकला । पर भइया, हम दोष तुम्हें ही देंगे । जब उसकी राह-रीति नहीं थी, उसे साथ क्यों लगा लिया तुमने ? हमारे हाथ लग जाये भुजंगा, तो धरती में गाड़कर रख दें..."

पासमान चुप बैठा सुन रहा था । मूली भीगी आँखों से उसकी दुर्दशा देख रही थी । गन्धी बार-बार कह रहा था कि विचक्खण ही गोखरू चुराकर ले गया है । शेष लोगों का भी यही कहना था।

जब सब अपनी-अपनी कह चुके, तो पासमान बोला, "लोगो! विचक्खण ने गोखरू नहीं चुराया !"

उसकी बात का प्रभाव ऐसे हुआ जैसे ठहरे हुए ताल में कोई पत्थर फेंक दे । गन्धी तो उसका मुँह ही देखता रह गया । बोला, "क्या कहते हो ! अब भी तुम्हारा भ्रम नहीं टूटा । मैं कहता हूँ, उस जातक के पेट में दाढ़ी थी..."

यह सुन-सुनकर जैसे पासमान के कान पक गये थे। आँखें मूँदकर सिर बायें-दायें हिलाते हुए वह बोला, "नहीं, नहीं, विचक्खण निर्दोष है। चोर यहीं कहीं है।"

विन्दक बोला, "यह कैसी बहकी-बहकी बात करता है तू, पासमान!"

पासमान धीरे-धीरे बोल रहा था। जब उसने सारा बताया कि किस तरह विचक्खण का पीछा करते हुए वह मरुस्थल में जा पहुँचा था, तो सबके अचरज का ठिकाना न रहा। परन्तु गन्धी जैसे तड़पकर बोला, "पासमान! वह तुम्हें मिला था और तुम उसे पकड़कर नहीं लाये! यह कैसी बात कहता है तू!"

पासमान ने एक तिनका हाथ में ले लिया था। उसे तोड़ते हुए बोला, "गोखरू उसके पास नहीं। उसने चुराया भी नहीं। चोर यहीं कहीं है..."

सब भौंचक होकर उसका मुँह देख रहे थे। पासमान बता रहा था कि किस तरह भटकते हुए वह विचक्खण के पीछे गया। बात थी तो अविश्वसनीय, परन्तु पासमान अपने मुख से कह रहा था, इसलिए सबको विश्वास करना पड़ा।

सारी कहानी सुनकर गन्धी उसकी भर्त्सना करते हुए बोला, "फिर चकमा दे गया न वह छोकरा! पासमान, मैं कहता हूँ, जब वह तुम्हारे हाथ लग गया था, तो बाँह पकड़कर ले क्यों नहीं आये! फिर हम निबट लेते, हम उगलवा लेते! अवश्य ही वह गोखरू अमराई में छिपाकर रख गया होगा या..." फिर जैसे कुछ स्मरण करके बोला, "अरे, क्या कहा तूने! बन्दर भाग गये थे? अब समझा! बन्दर भागे नहीं, भगा दिये गये। बन्दर अपनी गलथैली में वस्तु रख लेते हैं। अवश्य ही गोखरू तोड़कर उसने बन्दर के गलौआ में रखा होगा। बस, तुम्हें चकमा देकर बन्दरों को भगा दिया। सारी बात समझ में आ गयी..."

सब लोग गन्धी से सहमत थे। पासमान मूर्खों की तरह उनका मुँह देख रहा था। जिस सहज ढंग से उसे विश्वास हो गया था कि विचक्खण निर्दोष है, उसी सहजता से अब उसे यह भी विश्वास हो गया कि गोखरू-चोर विचक्खण ही है और उसे चकमा देकर निकल गया है...

गन्धी बोला, "पासमान! तूने अवसर खो दिया। उसे पकड़कर यहाँ ले आते, तो चमरौंधा मार-मारकर बकवा लेते। गोखरू जा नहीं सकता था इस तरह!"

सब लोग चले गये। पासमान जैसे अपने-आपको दोष देते हुए बड़बड़ा रहा था। तभी मूली ने बताया कि अब सार्थ आगे तक्षशिला नहीं जायेगा। यहीं से लौटेगा।

पासमान ने चुपचाप सुन लिया। मूली जैसे दुखी होकर अपने आपसे कह रही थी, "हाय! क्या सोचकर घर से निकले थे और क्या हो गया..."

गन्धी फिर उनके निकट आ बैठा। बोला, "तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करो, पासमान! गाँव-गाँव घूमकर सुगन्धी बेचना हमारा धन्धा है। हम चौकन्ने रहेंगे। कहीं भी वह अधम दिखायी पड़ गया, तो पकड़कर तुम्हारे चरणों में डाल देंगे। देखो तो, बारह-तेरह बरस का छोकरा उसकी यह भुजंगाई! ...जो मिट्टी की स्थाली चुराता है, वह काँसे की स्थाली भी चुरायेगा..."

सार्थ के व्यापारी अब इसी जुगत में थे कि किसी तरह उनका अधिक से अधिक माल यहीं बिक जाये और वे हल्के हाथ लौटें। इसलिए वे औने-पौने मूल्यों में अपनी वस्तुएँ बेच रहे थे। आस-पास यह बात निकल गयी थी और झुण्ड के झुण्ड ग्रामीण कुलगाम में आ रहे थे।

इसी तरह कई दिन बीत गये। पासमान बड़ी दुविधा में था कि क्या करे! विचक्खण के आने की कोई सम्भावना नहीं थी। पासमान को अब निश्चय हो गया था कि गोखरू विचक्खण ही चुराकर ले गया है। इसलिए वह क्योंकर लौटकर आयेगा!

उस दिन प्रातःकाल पासमान गाड़ी के साथ ढासना लगाये बैठा था। तभी वह बूढ़ा व्यापारी उधर आ निकला जो उस रात जुआरियों को फटकार रहा था। पासमान को उदास बैठे देख वह उसके निकट चला आया।

इस बूढ़े व्यापारी का नाम सहसाखी था। शरीर से दुबला-पतला, ठिगना था। छोटा मुँह और गाल पिचके हुए। सिर पर पोटा-पोटा लम्बे चाँदी-से घने बाल। दाढ़ी-मूँछ सफाचट। सदा काकरेजा अर्थात लाल और काले रंग के वस्त्र ही पहनता था। उसी वस्त्र की चादर और उसी का उपरला कपड़ा। पासमान की स्थिति से वह परिचित था। उसके पास बैठकर बोला, "बता, तेरे पल्ले कोई ढेर सोना-चाँदी है!"

पासमान ने अचरज से उसकी ओर देखा, बोला, "आपसे क्या छिपा है! एक गोखरू था, वह भी चला गया।"

"कोई हीरा-मोती है?" सहसाखी उसकी आँखों में आँखें डालकर पूछ रहा था, "तू बूढ़ा है?"

यह कैसी बुझौवल पूछ रहा है सहसाखी? पासमान बोला, "यह सब आप क्यों पूछ रहे हैं?"

टप्पर के नीचे बैठी मूली सुन रही थी। सहसाखी कह रहा था, "न तेरे पास सोना-चाँदी है, न हीरा-मोती, न तू बूढ़ा है। फिर बैठा बिसूर क्यों रहा है? तरुण है। शरीर में तेरे शक्ति है। गाड़ी बाँधकर निकल जा। यूँ तक्कसिला पहुँचेगा।"

सचमुच, उसने यह बात तो कभी सोची ही नहीं थी। निराशा के सागर में डूबते-उतराते पासमान को जैसे कगार मिल गया।

उसकी आँखें चमक उठीं। अब तक वह बैठा क्या कर रहा था! बटमारों के उसने छक्के छुड़ाये थे, झाँझर गाँव में विषैले सर्पों को पकड़ा था। अब क्यों डरता है ?

सहसाखी उसे उत्साहित कर रहा था। वह स्वयं कितनी बार मथुरा से तक्षशिला आ-जा चुका था। इसलिए चप्पा-चप्पा मार्ग से परिचित था। राह की सब कठिनाइयों को भी जानता था। फिर कल ही तो बटोहियों का एक दल तक्षशिला से चलकर कुलगाम आया था।

सहसाखी उठकर चला गया और पासमान में एक नया उत्साह ठाठें मारने लगा। उसे लग रहा था जैसे हज़ार घड़ों से स्नान करने से उसकी सारी थकावट, घबराहट दूर हो गयी हो। उसने निश्चय किया कि वह तक्कसिला अवश्य जायेगा।

मूली डरती थी। चाहती थी कि कोई साथ हो, तभी जायें। परन्तु पासमान ने जब एक बार निश्चय कर लिया, तो वह टस से मस नहीं हुआ और सहसाखी से फिर मिल आया। सहसाखी ने उसे सारा मार्ग बताकर एक-एक बात समझायी—कहाँ पड़ाव डाला जा सकता है, कहाँ कुएँ और बावड़ियाँ मिलेंगी, किस क्षेत्र में बटमारों का भय हो सकता है, इत्यादि-इत्यादि।

कुलगाम जैसे पासमान को काटने को आ रहा था। आते ही वह तैयारी में जुट गया और मूली से बोला कि अगले दिन भोर होते ही वे यहाँ से चल पड़ेंगे। मूली डरी-डरी आँखों से देख रही थी, परन्तु पासमान ने उसकी एक न सुनी। उसने गाड़ी के पहियों में तेल डाला और कील-काँटा कसा और अँधेरा घिरने से पहले ही उसने सारा सामान समेटकर रख लिया।

पासमान का एक मन कहता था कि विचक्खण लौटकर आयेगा। रात को वह सोया, तो उसका चित्त बड़ा हलका था।

ऊँटों के बलबलाने से उनकी नींद टूटी। उजास हो रही थी और व्यापारियों का एक दल लौटने की तैयारी कर रहा था।

मूली और पासमान सारा सामान रात को ही बाँधकर सोये थे। इसलिए वे उठे और जल्दी से निवृत्त होकर चलने की तैयारी करने लगे। कुलगाम से निकलते-निकलते सूरज चढ़ आया। बैल बड़ी स्फूर्ति से चल रहे थे। दूर तक सार्थ का कोलाहल सुनायी पड़ता रहा। पासमान बार-बार पीछे देखता था और बार-बार सोचता था कि अगले ही मोड़ पर विचक्खण बैठा दिखायी देगा और टप्पर गाड़ी को देखते ही हाथ हिलाकर कहेगा, "थमो, तनिक थम जाओ, भाई···"

मूली अब भी अशान्त और उद्विग्न थी। झाँझर गाँव में और फिर कुलगाम में उनके साथ जो बीती थी, उसके विषय में सोच-सोचकर आशंकित थी। उसके मन में यह भ्रम घर कर गया था कि सप्पहत्या के कारण ही ये सारी विपदाएँ उन पर आयी थीं। इसलिए वह बार-बार सप्पराज को तुष्ट करने का संकल्प करती थी और मनौतियाँ मनाती थी कि सप्पराज के मन्दिर में जाकर वह माथा रगड़-रगड़कर अपने पापों का प्रायश्चित करेगी।

सवेरे से ही गरमी थी। सूरज ऊपर आ गया था। तपन बढ़ने से पहले ही वे अधिक से अधिक अन्तर पार कर लेना चाहते थे। इसलिए पासमान बार-बार साँटा फटकारता था और बैल दौड़ने लगते थे।

अभी तक मार्ग में उन्हें कोई कठिनाई नहीं आयी थी। यदि मार्ग इसी तरह निरापद रहा, तो कुछ ही दिनों में वे तक्षशिला पहुँच जाएँगे। थोड़े-थोड़े अन्तर पर छोटे-बड़े गाँव थे। मार्ग में लदे हुए ऊँट-घोड़े, बैलगाड़ियाँ, गधे आदि मिलते। ये लोग पासमान की गाड़ी रोककर कुलगाम के सार्थ के विषय में जिज्ञासा

करते और पासमान उनसे आगे का मार्ग पूछता।

साँझ होते-होते वे एक गाँव में पहुँचे। वैसे यह ऋतु रात को यात्रा करने के लिए बड़ी अनुकूल थी। अभी तक मार्ग में कोई भय उपस्थित नहीं हुआ था, किन्तु वे रात को यात्रा करके कोई जोखिम नहीं उठाना चाहते थे। इसलिए वे उसी गाँव में ठहर गये और अगले दिन भोर होते ही फिर चल पड़े।

मौसम का कोई ठिकाना नहीं था। कभी गरमी बढ़ जाती कभी एकाएक आकाश पर बादल छा जाते। फिर आँधी चलने लगती और देखते ही देखते बादल छँट जाते। इसी तरह उन्होंने दो-दिन की यात्रा पूरी की।

तीसरे दिन एक ऐसी घटना घटी कि पासमान तिलमिलाकर उठा। परन्तु अब बहुत देर हो चुकी थी, इसलिए रक्त का घूँट पीकर रह गया।

बात यों हुई—मूली चलने से पहले अपनी पोटलियाँ सँभाल रही थी। अकस्मात उसकी दृष्टि टप्पर में पड़े रुई के फाहे पर गयी। उसने उसे उठाकर देखा और अचरज करने लगी। पासमान को दिखाकर बोली, "देखो तो, यह सुगन्धीवाला फाहा यहाँ कैसे आया?"

पासमान ने फाहा हाथ में लिया। सूँघा तो सचमुच उसमें गन्ध आ रही थी—वैसी ही जैसी गन्धी के निकट से आती थी। उसने सोचा कि कोई अद्भुत बात नहीं है। किसी समय गन्धी के कान से गिर पड़ा होगा।

उस समय तो पासमान ने अधिक ध्यान नहीं दिया, परन्तु दिन को जब वे एक पेड़ के नीचे विश्राम कर रहे थे, तो वह बैठा-बैठा सोच रहा था कि यह फाहा टप्पर में कैसे आया। फिर

एकाएक वह सोचने लगा कि कहीं ऐसा तो नहीं कि गोखरू चुराने गन्धी ही उस रात आया हो और फाहा टप्पर में गिर पड़ा हो ? उसने यह बात मूली से कही, तो वह रुष्ट हो गयी। कोई भी शक्ति उसे विश्वास नहीं दिला सकती थी कि गोखरू विचक्खण के अतिरिक्त किसी और ने चुराया है। गन्धी इतना बड़ा व्यापारी होकर क्योंकर अपना मुँह काला करने आयेगा ?

परन्तु पासमान को जैसे विश्वास हो चला था कि गोखरू विचक्खण ने नहीं चुराया। बार-बार उसका सन्देह गन्धी पर जाता था। गन्धी ने उनके निकट आकर दोनों का विश्वास प्राप्त कर लिया था और अवसर देखते ही हाथ मार गया था। परन्तु अब क्या हो सकता था ! अपने खच्चर पर बैठकर वह न जाने कहाँ से कहाँ पहुँच गया होगा।

ठण्डी वेला में उन्होंने फिर यात्रा आरम्भ की, परन्तु लगता था जैसे पासमान का सारा उत्साह ही मर गया था। निराशा में डूबा मनुष्य बुरी बात ही सोचता है। पासमान कभी-कभी कल्पना करने लगता कि उसका घर, प्यारा घर, बहुत, बहुत पीछे छूट गया है जहाँ वह कभी लौटकर नहीं जा सकेगा···

प्रातः वे चलने की तैयारी कर ही रहे थे कि एकाएक आँधी आ गयी। फिर देखते ही देखते धूल के बवण्डर उठने लगे। राजधानी अब अधिक दूर नहीं थी। इसलिए पासमान आँधी थम जाने की प्रतीक्षा में बैठकर समय नष्ट नहीं करना चाहता था। बस, गाड़ी बाँधकर वह निकल पड़ा।

आँधी क्या थी, जैसे कोई रेत-कंकर मुट्ठी में भर-भरकर मुँह पर मार रहा हो। वे अधिक दूर नहीं गये थे कि आँधी ने इतना प्रचण्ड रूप धारण किया कि लगा टप्पर उड़ ही

जायेगा। विवश होकर उन्हें एक टीले की ओट में रुकना पड़ा
जब तक आँधी का वेग कम नहीं हुआ, वे मुँह-सिर लपेटे बै
रहे।

झक्कड़ अपने साथ प्रातःकालीन उमस को उड़ाकर ले ग
था। मौसम ठण्डा हो गया। निर्बल सूर्य जैसे धीरे-धीरे प
धरता आकाश की विशालता को नाप रहा था।

ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ रहे थे, पासमान की व्याकुलता
बढ़ती जाती थी। उसका मन करता था कि वे उड़कर राजधा
पहुँच जायें। वह बार-बार बैलों को कोंचता था। लगता था
तक्षशिला उन्हें चुम्बक की नाईं अपनी ओर खींच रहा है।

अब कोई डर भी नहीं था। स्थान-स्थान पर बस्ति
मिलतीं। दूर-दूर तक गेहूँ, चना और सरसों के लहलहाते
दिखायी पड़ते। कहीं-कहीं ऊख का खेत भी मिल जाता।

मार्ग में एक बार उन्हें एक लकड़हारा मिला, जो सिर प
लकड़ियों का गट्ठर उठाये आगे-आगे जा रहा था। उसके दुब
पतले और लम्बे शरीर पर लँगोटी के अतिरिक्त और कुछ न था
ऐसा प्रतीत होता था जैसे मनुष्य नहीं, कोई लम्बी टाँगोंवा
सारस सिर पर बोझा उठाये जा रहा हो।

वह जंगल का छोर था। पासमान ने गाड़ी दौड़ायी औ
लकड़हारे के साथ-साथ चलते हुए वह बात करने लगा। लकड़
हारे ने बताया कि साँझ तक वे राजधानी नहीं पहुँच सकते
फिर सिर का बोझ सँभालते हुए वह शून्य-सी आँखों से पासमा
ओर, फिर गाड़ी में बैठी मूली की ओर देखने लगा। बोला
"आगे देवथली है। वहाँ रात को बसेरा करना। सवेरे तक्ष
सिला जाना..." और यह कहते-कहते वह मुड़ा और फिर देख
ही देखते बबूल के पेड़ों के नीचे ओझल हो गया।

जंगल में गाय-बछड़ों और भेड़-बकरियों के स्वर सुनायी पड़ रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे दूऽऽर कहीं कोई बहुत बड़ा अजड़ (रेवड़) जा रहा हो।

थोड़ी देर में वे एक ऐसे स्थान पर जा निकले जहाँ बहुत बड़ा सपाट मैदान था और उसके मध्य लगभग सौ धनुष वर्गाकार कच्ची भीत थी। भीत के बीचोंबीच एक विशाल प्राचीन वटवृक्ष था। स्यात यह वही देवथली थी, जिसका संकेत उस लकड़हारे ने किया था।

टप्पर गाड़ी भीत के निकट पहुँची। एकदम सन्नाटा था। भीत ढाई-तीन हाथ ऊँची थी और वर्षा की तीव्र बौछाड़ों के कारण स्थान-स्थान से ढह गयी थी।

मूली कुछ व्याकुल होकर देखने लगी। बोली, "यहाँ तो कोई पंख-पखेरू भी दिखायी नहीं देता! रात कैसे काटेंगे।"

भीतर ही भीतर पासमान भी डर रहा था। मूली को आश्वस्त करते हुए वह गाड़ी से उतरने को हुआ। एकाएक देवथली के भीतर कहीं पत्थरों पर ठन-ठन की-सी ध्वनि होने लगी।

दोनों के कान खड़े हो गये। पासमान उचक-उचककर देखने लगा। भीतर बायीं ओर कोई छप्पर-सा तना था और उसके नीचे एक मचिया पड़ी थी। मचिया के पीछे दो पुराने किवाड़ भी दिखायी पड़ते थे।

वे देख ही रहे थे कि वटवृक्ष के उस पार पेड़ों के नीचे एक बूढ़ा व्यक्ति बैसाखी के सहारे चलकर आता दिखायी दिया। पासमान अब समझा कि ठक्-ठक् की ध्वनि क्यों हो रही थी। बूढ़े के दूध जैसे श्वेत बाल बड़े घने और बढ़े एहु थे। उसके कन्धों पर फीके पीले रंग का एक वस्त्र था और घुटनों तक उसने कसकर धोती बाँध रखी थी। पासमान समझ गया कि यह इस देवथली का पुरोहित-पुजारी होगा। बस, वह निश्शंक

होकर उतरा और भीत के साथ खड़ा होकर देखने लगा।

बूढ़ा बैसाखी के सहारे सूखे पत्तों के ढेर के ऊपर से चल आ रहा था। आकर वह वटवृक्ष के नीचे कच्चे चबूतरे पर गया और बैसाखी एक ओर रखकर इस तरह देखने लगा बहुत थक गया हो। फिर पासमान की ओर देखते हुए बोल "बटोही हो ?"

पासमान ने हाथ बाँधकर निवेदन किया, "महाराज! लम यात्रा करके आ रहे हैं। साथ घरनी है और बालिका भी रात-भर के लिए ठौर चाहते हैं।"

वह खाँसते-खाँसते बोला, "गाड़ी भीतर ले आओ। पी कुइयाँ है। जगत पर रस्सो-बटलोही धरी है। मुँह-हाथ धो और पशुओं को पानी दिखाओ। भोजन कर लो। फिर बैठ बातें करेंगे।"

उसके स्नेहिल व्यवहार ने पासमान को मोह लिया। जल्दी-जल्दी गया और गाड़ी को मोड़ने लगा। मूली बोल "डर की कोई बात तो नहीं है।"

पासमान ने निश्चिन्त होकर कहा, "देवथली का पुजा पुरोहित लगता है। बड़ा दयालु है।"

वह बार-बार खाँसता और छाती मलता था। पासमान गा को छप्पर के निकट ले आया। मूली को नीचे उतारकर उस बैलों को खोला और कुइयाँ की ओर चल पड़ा। मूली भी बस को गोद में उठाये-उठाये आयी और कुइयाँ की जगत के निक एक पत्थर पर बैठकर उसे दूध पिलाने लगी। पासमान बैलों के लिए पानी द्रोणी में भरने लगा।

मूली बार-बार देखती थी। सब ओर जैसे घना सन्नाटा था।

भीतर ही भीतर वह डर रही थी।

अभी वे मुँह-हाथ धो ही रहे थे कि अचानक किसी शिशु के रोने का स्वर सुनायी पड़ा। सुनते ही मूली और पासमान चौंककर देखने लगे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे छप्पर के नीचे रखी मचिया पर कोई बच्चा रो रहा हो। बैसाखीवाला बुड्ढा उठकर उधर ही जा रहा था। जाकर उसने शिशु को गोद में ले लिया और पुचकारा।

कोई विशेष ध्यान देने योग्य बात नहीं थी। इसलिए मुँह-हाथ धोकर उन्होंने बैलों को चरने के लिए छोड़ दिया और फिर गाड़ी पर लौट आये।

शिशु को गोद में उठाये वह थपथपा रहा था। उन्हें देखते ही बोला, "बिन माँ की कन्या है। मैं ही इसका पालन करता हूँ।" यह संक्षिप्त-सा स्पष्टीकरण देकर वह चुप हो गया।

मूली और पासमान को, बस, यही अचरज हुआ कि इस निर्जन, एकाकी स्थान पर यह इतनी छोटी कन्या का पालन-पोषण कैसे करता होगा! फिर इतने बुढ़ापे में इसे सँभालता कैसे होगा? स्वयं बैसाखी के सहारे चलता है!

जैसे उनके मन की बात भाँपते हुए वह बोला, "यहाँ अकेला रहता हूँ। और कोई नहीं है···" और फिर जैसे बात बदलने के लिए बोला, "तुमने अच्छा ही किया जो यहाँ आ गये। तक्क-सिला अभी दूर है। यहाँ तुम्हें कोई कष्ट नहीं होगा। प्रातः चले जाना। कहाँ से आ रहे हो? किस प्रयोजन से तक्कसिला जा रहे हो?"

पासमान को इसी बात का डर था कि बूढ़ा भी जिज्ञासा करेगा और उसकी दुखगाथा सुनकर सहानुभूति जतायेगा और सौवीं बार उसे फिर अपनी वही क्लेश-कथा सुनानी पड़ेगी। परन्तु और कोई चारा नहीं था। बैठकर वह सब बताने लगा कि वह कहाँ

का वासी है और क्यों इतनी लम्बी यात्रा करके तक्षशिला जा रहा है।

सारी बात सुनकर वह सहानुभूति के स्वर में बोला, "तुमने अच्छा किया जो कन्या को लेकर इधर आ गये। कोई बुरा नहीं किया। तक्कसिला में बड़े-बड़े वैद्य-चिकित्सक हैं। कन्या की आंखें ठीक हो सकती हैं।...." वह बताने लगा कि यहाँ से तक्कसिला कितनी दूर है और किधर से राह जाती है। बोला, "मार्ग निरापद है। सुखपूर्वक पहुँच जाओगे...."

पासमान आँखें नीचे किये बैठा सुन रहा था। मूली के मन में बार-बार एक बात उठती थी। वह उससे पूछना चाहती थी कि वह इस सुनसान देवथली में एक अबोध बालिका के साथ अकेला क्यों रहता है? कन्या की माँ को क्या हुआ? परन्तु बात होंठों पर आते-आते रुक जाती थी। सम्भवतः कोई दुर्घटना हो गयी होगी। इसलिए सारी बात पूछकर वह उसका दुख हरा नहीं करना चाहती थी। चेहरे-मोहरे से वह इतनी अवस्था का नहीं लगता था। अवश्य ही कष्टों ने इसे असमय बूढ़ा कर दिया था।

उसकी गोद में कन्या सो गयी थी। मूलो की ओर देखते हुए वह बोला, "इस मचिया पर दोनों कन्याओं के साथ तुम सोओगी। हम दोनों नीचे बिछौना कर लेंगे। फिर वह उठकर खड़ा हो गया। बगल में उसने बैसाखी लगायी और बोला कि लोग बैठें, वह अभी आता है।

धीरे-धीरे चलकर वह कुइयाँ की ओर गया और ठन-ठन की ध्वनि गूँजने लगी, जो थोड़ी ही देर में विलीन हो गयी।

मूली न जाने क्या सोच रही थी। फिर दोनों बैठकर हौले-हौले बातें करने लगे।

थोड़ी देर ही बीती थी कि मचिया पर सोयी कन्या कु

सुनायी और फिर एकाएक रोने लग गयी। मूली असमंजस में बैठी देखने लगी। फिर उसने बस्सी को चित्तक पर लिटाया और उठकर कन्या को थपथपा दिया। कन्या थोड़ी देर कुनमुनायी और फिर शान्त होकर सो गयी। मूली धीरे-धीरे पीछे हटकर अपने स्थान पर बैठ गयी। बोली, "तीन-चार मास से बड़ी नहीं लगती..."

वे बातें कर ही रहे थे कि बैसाखी की ठन-ठन की ध्वनि फिर गूँजने लगी। वह आ रहा था। निकट आते ही बोला, "क्यों, खेमा रोयी थी?" फिर उसे सोते हुए देखकर जैसे आश्वस्त हो गया और बोला, "सो गयी है..." फिर चुपचाप जाकर वटवृक्ष के चबूतरे पर बैठ गया।

मूली और पासमान भोजन निकालकर खाने लगे। बीच-बीच में उसकी ओर देख लेते। वह जैसे गहरी चिन्ता में डूबा कुछ सोच रहा था।

पासमान भोजन करके उठा और कुइयाँ पर कुल्ला करके अपने साथ बैलों को ले आया। उन्हें गाड़ी के पहियों के साथ बाँध वह सामान ठीक करने लगा।

एकाएक वह बोला, तो पासमान चौंक पड़ा। "एक बात बताओ।" वह कह रहा था। "तुमने सोचा नहीं कि मैं इस सुन-सान, निर्जन स्थान पर अकेला कैसे रहता हूँ? एक अबोध कन्या को मेरे पास देखकर तुम लोगों को अचरज नहीं हुआ?"

मूली और पासमान एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। सचमुच, मूली उस क्षण यही बात सोच रही थी। अब दूसरी बार वह उनके मन की बात ताड़ गया था। कहीं यह ज्योतिष विद्या जानने-वाला कोई पुरोहित-पुजारी तो नहीं है?

वह कह रहा था, "पर अचरज की कोई बात नहीं है। ऐसे में यदि कोई यहाँ आये, तो मुझे देखकर यही सोचेगा। कोई

अचरज की बात है ?" कहते-कहते वह खाँसने लगा। जब उसकी खाँसी रुकी, तो उसने ऐसी बात कही कि मूली और पासमान चकित होकर उसका मुँह देखने लगे। वह चिन्तित मुद्रा में बैठा सम्भवतः इसी ऊहापोह में था कि यह बात उसे कहनी चाहिए या नहीं। बोला, "सच बात बताता हूँ—यह मेरी कन्या नहीं है। मैं इसका पिता नहीं हूँ। कोई कुटुम्ब का भी सम्बन्ध नहीं है इसके साथ मेरा। सचाई यह है कि मैं इसे छिपाये फिरता हूँ। इसके प्राण संकट में हैं। इससे अच्छा, सुनसान और निर्जन स्थान मुझे और दिखायी नहीं दिया..."

मूली और पासमान मुँह-बाये देख रहे थे। अचरज की बात तो थी ही, परन्तु अगली बात जो उसने कही, मूली और पासमान के चेहरे पीले पड़ गये।

"यहाँ कोई नहीं आता," वह कह रहा था। "इसका कारण यह है कि ऐसी किंवदन्ती है कि यह देवथली भुतहा है..."

दोनों के प्राण गले तक आ गये। पासमान फटी-फटी आँखों से देखने लगा। वह जैसे उन्हें आश्वस्त करने के प्रयोजन से बोला, "परन्तु डरने की कोई बात नहीं। मैंने कहा कि किंवदन्ती है। संसार में अन्धविश्वासों और उन पर विश्वास करनेवालों की कोई कमी नहीं। मैं विश्वास नहीं करता। सोचो, यह देवथली भुतहा होती, तो क्या मैं इतने दिन यहाँ रह सकता था ? या तुम देवथली की डँडवारी[1] के भीतर पैर भी रख सकते थे ? यहाँ कोई नहीं आता, इसीलिए मैं यहाँ रहता हूँ, खेमा बिटिया के साथ। परन्तु किसी रहस्य को कहाँ तक रहस्य रखा जा सकता है। यदि रहस्य प्रकट हो गया, तो कन्या के प्राण संकट में पड़ जायेंगे..."

१. किसी स्थान को घेरने के लिए उठायी हुई नीची भीत।

सूर्य धीरे-धीरे नीचे उतर रहा था। पक्षियों का एक बड़ा झुण्ड उड़ारी भरता हुआ आया और वटवृक्ष के सघन पत्तों में बैठ गया। फिर पेड़ पर ऐसा शोर हुआ कि सारा जंगल गूँज उठा।

मूली और पासमान चुपचाप बैठे देख रहे थे। मूली किसी आनेवाले संकट की कल्पना करके काँप रही थी। बार-बार उसकी दृष्टि के आगे झाँझर की सर्पहत्या का दृश्य नाच उठता था।

वटवृक्ष पर भयंकर कोलाहल मचा हुआ था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे सैकड़ों जन बहुत दिनों के पश्चात घर लौटे हों और वहाँ किसी को डेरा जमाये देख उन्हें खदेड़ने के लिए उलझ रहे हों।

तभी वह बोला, "तुम लोग इस कन्या के प्राण बचा सकते हो!"

दोनों ने चौंककर उसकी ओर देखा। वह बोला, "चौंको नहीं। मैं सोच-समझकर ही कहता हूँ। तुम लोग इसके प्राणों की रक्षा कर सकते हो। तुम लोगों से मेरी करबद्ध प्रार्थना है, कन्या को अपने साथ ले जाओ और इसका पालन-पोषण करो। यह कन्या कौन है, किसकी बेटी है, मेरे पास कैसे आयी, यह एक लम्बी और दुखभरी कहानी है। प्रभु की कृपा से जीवित रहा, तो कभी सुनाऊँगा..."

मूली के हृदय में डर समा गया था। जिस अज्ञात भय की उसे आशंका थी, वह जैसे सामने मुँह बाये खड़ा था।

सहसा बूढ़े का गला भर आया। वह बोला, "इसे धरोहर समझकर अपने पास रख लो।..."

पासमान हाथ बाँधकर प्रार्थना करना चाहता था कि वह निर्धन ग्रामीण है, इतना बड़ा दायित्व नहीं सँभाल सकता। और फिर वह किसी उलझन में भी नहीं पड़ना चाहता था। उसकी

अपनी विपदाएँ थोड़ी थीं कि एक और संकट मोल ले ? परन्तु वह बार-बार उनसे आग्रह कर रहा था और कहता था कि अब उनके अतिरिक्त उसे कोई दिखायी नहीं देता, जो कन्या के प्राणों की रक्षा कर सके। उसने बैसाखी उठायी और कहा, "तुम लोग आपस में विचार कर लो। मैं अभी आया..."

वह उठा और चल पड़ा। ठक्-ठक् की ध्वनि फिर गूँजने लगी। कुइयाँ की ओर वह गया और अदृश्य हो गया। मूली और पासमान व्याकुल बैठे उसकी राह देखने लगे। दोनों को कुछ सूझ नहीं रहा था। मूली धीरे से काँपते हुए स्वर में बोली, "मना कर दो। बात निकल गयी, तो प्राणों पर आ बनेगी।"

पासमान भी यही सोच रहा था। उसने ठान ली थी कि वह आयेगा, तो स्पष्ट कह देगा कि वह इतना बड़ा दायित्व निभा नहीं सकता। उसे लग रहा था कि कोई अदृश्य विपदा उनके सिरों पर मँडरा रही है।

तभी वह आता दिखायी दिया। उसके हाथ में एक दीपक था। आकर उसने दीपक चबूतरे के नीचे एक आले में रख दिया और फिर वहीं बैसाखी रखकर बैठ गया। पासमान अपने मन की बात कहने के लिए साहस बटोर रहा था, परन्तु जैसे होंठों पर आयी बात निकलती नहीं थी।

वह बहुत डर गया था।

साँझ उतर आयी थी।

८

जंगल में जीव-जन्तुओं के स्वर उभरने लगे। कोठरी के किवाड़ों के पीछे कोई भीमकाय झींगुर बोल रहा था। बैसाखीवाला बुड्ढा चुपचाप चबूतरे पर बैठा था और सिर लटकाये धरती पर देख रहा था। तभी वह उठा और धीरे-धीरे चलकर अँधेरे

में विलीन हो गया। धीमी-धीमी बयार चलने लगी थी और वृक्षों के पत्ते सर-सर कर रहे थे।

मूली और पासमान उसके लौटने की प्रतीक्षा करने लगे। पासमान ने सोच लिया कि अब वह संकोच नहीं करेगा और मना कर देगा। इस कन्या को अपने पास रखकर वह अपने परिवार का जीवन कष्ट में नहीं डालेगा।

पक्षियों का कोलाहल थमने लगा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कलह करते-करते सब थक गये थे और अब समझौता करके प्रेमपूर्वक बैठे विश्राम कर रहे थे।

मचिया पर कन्या कुनमुनायी। मूली ने हाथ बढ़ाकर उसे थपथपाना चाहा, परन्तु वह रोने लग गयी और फिर रोती ही चली गयी। वे सोच रहे थे कि उसका रुदन सुनकर वह लौट आयेगा, परन्तु जब बहुत देर हो गयी और वह नहीं लौटा, तो पासमान ने उठकर उसे देख आने की सोची। घना अन्धकार था।

कहाँ जाकर देखता!

जब थोड़ा समय और बीता, कन्या चुप नहीं हुई और वह लौटकर नहीं आया, तो दोनों घबराये। उसने अपना नाम सुमद बताया था। पासमान ने सोचा कि कुइयाँ के निकट जाकर वह उसे पुकारे। परन्तु मूली ने उसे जाने नहीं दिया। फिर जब और समय बीता, तो हाथ में लाठी लेकर वह उठकर खड़ा हो गया। पत्तों के ढेर पर धीरे-धीरे चलते हुए वह दस हाथ गया और उसका नाम लेकर पुकारा, "सुमद..."

परन्तु उसका स्वर गूँजकर रह गया। थोड़ा रुककर उसने फिर पुकारा। जब कोई उत्तर नहीं मिला, तो वह चुपचाप लौट आया।

दोनों व्याकुल थे। मूली बोली, "कहीं उसे कुछ हो न गया हो! कितना खाँस रहा था!"

ग्रपनी विपदाएँ थोड़ी थीं कि एक ग्रौर संकट मोल ले ? परन्तु वह बार-बार उनसे ग्राग्रह कर रहा था ग्रौर कहता था कि ग्रब उनके ग्रतिरिक्त उसे कोई दिखायी नहीं देता, जो कन्या के प्राणों की रक्षा कर सके। उसने बैसाखी उठायी ग्रौर कहा, "तुम लोग ग्रापस में विचार कर लो। मैं ग्रभी ग्राया…"

वह उठा ग्रौर चल पड़ा। ठक्-ठक् की ध्वनि फिर गूँजने लगी। कुइयाँ की ग्रोर वह गया ग्रौर ग्रदृश्य हो गया। मूली ग्रौर पासमान व्याकुल बैठे उसकी राह देखने लगे। दोनों को कुछ सूझ नहीं रहा था। मूली धीरे से काँपते हुए स्वर में बोली, "मना कर दो। बात निकल गयी, तो प्राणों पर ग्रा बनेगी।"

पासमान भी यही सोच रहा था। उसने ठान ली थी कि वह ग्रायेगा, तो स्पष्ट कह देगा कि वह इतना बड़ा दायित्व निभा नहीं सकता। उसे लग रहा था कि कोई ग्रदृश्य विपदा उनके सिरों पर मँडरा रही है।

तभी वह ग्राता दिखायी दिया। उसके हाथ में एक दीपक था। ग्राकर उसने दीपक चबूतरे के नीचे एक ग्राले में रख दिया ग्रौर फिर वहीं बैसाखी रखकर बैठ गया। पासमान ग्रपने मन की बात कहने के लिए साहस बटोर रहा था, परन्तु जैसे होंठों पर ग्रायी बात निकलती नहीं थी।

वह बहुत डर गया था।

साँझ उतर ग्रायी थी।

०

जंगल में जीव-जन्तुग्रों के स्वर उभरने लगे। कोठरी के किवाड़ों के पीछे कोई भीमकाय झींगुर बोल रहा था। बैसाखीवाला बुड्ढा चुपचाप चबूतरे पर बैठा था ग्रौर सिर लटकाये धरती पर देख रहा था। तभी वह उठा ग्रौर धीरे-धीरे चलकर ग्रँधेरे

में विलीन हो गया। धीमी-धीमी बयार चलने लगी थी और वृक्षों के पत्ते सर-सर कर रहे थे।

मूली और पासमान उसके लौटने की प्रतीक्षा करने लगे। पासमान ने सोच लिया कि अब वह संकोच नहीं करेगा और मना कर देगा। इस कन्या को अपने पास रखकर वह अपने परिवार का जीवन कष्ट में नहीं डालेगा।

पक्षियों का कोलाहल थमने लगा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कलह करते-करते सब थक गये थे और अब समझौता करके प्रेमपूर्वक बैठे विश्राम कर रहे थे।

मचिया पर कन्या कुनमुनायी। मूली ने हाथ बढ़ाकर उसे थपथपाना चाहा, परन्तु वह रोने लग गयी और फिर रोती ही चली गयी। वे सोच रहे थे कि उसका रुदन सुनकर वह लौट आयेगा, परन्तु जब बहुत देर हो गयी और वह नहीं लौटा, तो पासमान ने उठकर उसे देख आने की सोची। घना अन्धकार था।

कहाँ जाकर देखता !

जब थोड़ा समय और बीता, कन्या चुप नहीं हुई और वह लौटकर नहीं आया, तो दोनों घबराये। उसने अपना नाम सुमद बताया था। पासमान ने सोचा कि कुइयाँ के निकट जाकर वह उसे पुकारे। परन्तु मूली ने उसे जाने नहीं दिया। फिर जब और समय बीता, तो हाथ में लाठी लेकर वह उठकर खड़ा हो गया। पत्तों के ढेर पर धीरे-धीरे चलते हुए वह दस हाथ गया और उसका नाम लेकर पुकारा, "सुमद···"

परन्तु उसका स्वर गूँजकर रह गया। थोड़ा रुककर उसने फिर पुकारा। जब कोई उत्तर नहीं मिला, तो वह चुपचाप लौट आया।

दोनों व्याकुल थे। मूली बोली, "कहीं उसे कुछ हो न गया हो ! कितना खाँस रहा था !"

मूली ने जैसे उसके मुँह की बात छीन ली थी। अब अँधेरी काली रात में कहाँ जाकर देखता। फिर वे यह सोचकर चुप-चाप बैठ गये कि कहीं गया होगा, थोड़ी देर में लौट आयेगा। अबोध खेमा चुपचाप मूली की गोद में लेटी थी। मूली उसके कोमल बालों में हाथ फेर रही थी।

बहुत देर तक वे बैठे देखते रहे। परन्तु न उसे लौटकर आना था, न वह लौटकर आया।

चारों ओर चन्द्रमाविहीन रात्रि की कालिमा फैल गयी थी। आकाश पर ढेरों तारे निकल आये थे, जैसे चन्द्रमा को न देखकर किसी ने आकाश की चादर में असंख्य छेद कर डाले थे। दीपक के मद्धम प्रकाश में सब कुछ भयावह लगता था। उसकी धीमी पड़ती लौ अँधेरे की घनी, लौह दीवार को भेदने का निष्फल प्रयास कर रही थी। वटवृक्ष के हरे कोमल पत्ते ऐसे चमक-चमक उठते थे जैसे कोई राक्षस सहस्त्रों आँखों से उन्हें देख रहा हो।

क्षण काटे नहीं कट रहे थे। पता नहीं क्यों, वह अभी तक लौटकर नहीं आया था। मूली बार-बार कहती थी कि उसे कुछ हो न गया हो, नहीं तो वह लौटकर अवश्य आता।

दोनों चौकन्ने बैठे थे। तनिक भी आहट होती, तो उचककर देखने लगते, पर हवा के झोंके सूखे पत्तों को उड़ाकर ले जाते और फिर सब ओर वैसा ही सन्नाटा हो जाता।

एक तो यात्रा की थकावट, फिर भय, प्रतीक्षा, चिन्ता और व्याकुलता ने मिलकर उन्हें निढाल कर दिया। पासमान का अंग-अंग दुख रहा था। कितना चाहता था कि तनिक लेटकर पीठ सीधी कर ले, किन्तु डर था कि लेटा नहीं कि आँखें लगी नहीं

मूली मचिया पर दोनों कन्याओं को लेकर लेटी थी। उसे झपकी आ रही थी। पासमान नीचे बैठा था। उसने दोनों घुटनों को बाँहों में भरा और पंजों को उठाकर इस तरह हिलने लगा कि नींद न आये। उसका एक मन कहता था कि वह लौटकर नहीं आयेगा।

और यही हुआ भी। सारी रात उसने आँखों ही आँखों में काट दी। परन्तु सुमद लौटकर नहीं आया। एक अज्ञात, अबोध कन्या का भार उन पर डालकर वह चुपचाप खिसक गया था।

भोर होने के साथ आसपास के झाड़-झंखाड़ पर पक्षी बोलने लगे। पासमान इसी प्रतीक्षा में बैठा था कि उजाला हो, तो वह देख-कर आये। कहीं मूली का अनुमान सच हो और वह कुइयाँ के आसपास बेसुध पड़ा हो।

खेमा जाग गयी थी और हाथ-पैर मार रही थी। फिर वह रोने लग गयी। वह कसमसाती और फिर केऊँ-केऊँ करके किंकियाने लगती। एकाएक जैसे मूली का कलेजा काँप गया और वह घबराकर बोली, "हाय! कन्या रात से भूखी है..."

झट उसने अपना दूध उसके मुख में डाला। अचरज कि वह मुँह मार-मारकर पीने लगी—ऐसे जैसे कई दिनों की भूखी हो। मूली को विस्मय इसलिए हुआ क्योंकि कोई बच्चा पहली बार में ही दूसरी माँ का दूध नहीं पीने लगता। परन्तु खेमा थी कि गसक-गसककर दूध पी रही थी। बीच-बीच में स्तन मुँह से निकालकर जैसे अँधेरे में देखने का यत्न करती और फिर मुँह मार-मारकर पीने लगती। देख-देखकर मूली का वात्सल्य जाग उठा और उसने खेमा को अपनी छाती से भींच लिया।

ज्यों-ज्यों उजाला हो रहा था, पासमान की व्याकुलता बढ़ती

जाती थी। उठकर वह आसपास देखने को उत्सुक था, परन्तु डरता भी था कि यदि वह कहाँ बेसुध या मृत पड़ा होगा, तो ऐसी दशा में वह क्या करेगा ?

पासमान उठा और आसपास देखने लगा। कुइयाँ से तनिक परे भी हो आया, परन्तु कहीं कोई दिखायी नहीं दिया। वह लौटना ही चाहता था कि एकाएक उसकी दृष्टि एक पेड़ के साथ टिकी बैसाखी पर गयी। देखते ही वह डर गया। जल्दी-जल्दी चलकर वहाँ पहुँचा, परन्तु आसपास सुमद कहीं नहीं था। फिर थोड़ा और परे जाकर वह देख आया। पर सुमद नामक वह व्यक्ति वहाँ होता, तो मिलता। पासमान को डर लगा और वह जल्दी-जल्दी लौट आया।

इधर, मूली चकित और भयभीत होकर देख ही रही थी। एकाएक उसकी दृष्टि मचिया पर गयी। वहाँ कपड़े के नीचे से कोई लाल-लाल उभरी हुई वस्तु दिखायी दे रही थी। पासमान ने कपड़ा हटाकर जो देखा, तो वह गऊ के थन जितनी बड़ी थैली थी और उसमें धन था।

पासमान डर के मारे आगे-पीछे देखने लगा। मूली क्षण-भर में समझ गयी। अब किसी प्रकार का सन्देह नहीं था। सुमद नामक वह व्यक्ति रात को ही चला गया था और अपनी बैसाखी वहीं छोड़ गया था।

तो क्या वह लँगड़ा नहीं था ? कैसा रहस्य ?

६

उजाला पूरी तरह हो गया था। थोड़ी ही देर में सूर्य निकल आयेगा। मूली और पासमान बैठकर सोच रहे थे। स्पष्ट था कि वह जान-बूझकर चला गया था। ऐसी स्थिति में वहाँ बैठकर उसकी प्रतीक्षा करना व्यर्थ और निष्प्रयोजन था। इसलिए

उन्होंने वहाँ से निकल जाना ही हितकर समझा।

मूली बार-बार खेमा नाम की उस कन्या को देखती, जो चुपचाप मचिया पर सो रही थी।

पासमान जल्दी-जल्दी गाड़ी बाँधने लगा। सामान बटोरते हुए वह बार-बार कनखियों से देख लेता था। उसे लगता था जैसे वह लौटकर कहीं छिपा देख रहा है। यह बात सोचते ही उसके हाथ रुक जाते और हृदय धड़कने लगता। और फिर जब कनखियों से देखते हुए उसने लाल थैली उठायी, तो उसके हृदय की धक-धक तीव्र हो गयी।

मूली ने टप्पर पर बैठकर दोनों कन्याओं को सँभाल लिया। पासमान जल्दी-जल्दी गाड़ी को डंडवारी से बाहर ले आया। जोत पर बैठकर उसने आसपास देखा और फिर बैलों को हाँक दिया। जंगल में बैलों की गलघण्टियाँ गूँजने लगीं।

पासमान की आँखों के सामने बार-बार सुमद का चेहरा आकर खड़ा हो जाता था। भीतर ही भीतर वह आशंकित था। उसने कहा था कि लोग देवथली को भुतहा समझते हैं। कहीं सचमुच देवथली भुतहा तो नहीं है!

उसने पलटकर मूली की गोद में लेटी कन्या को देखा, जो चुपचाप सो रही थी। एक साधारण-सी कन्या थी। पासमान को उसमें कोई अलौकिक या विलक्षण बात दिखायी नहीं दी। बस, प्रति क्षण उसे यही लगता था कि सुमद नामक वह व्यक्ति छिप-छिपकर उनके पीछे-पीछे आ रहा है।

सवेरे वह हड़बड़ी में ठोकर खा गया था और उसके बायें पैर का अँगूठा लौं-लौं कर रहा था। उतरकर जंगल में देखता, तो कहीं न कहीं ब्रह्मबूटी मिल जाती, जिसकी पत्ती चोट पर निचोड़ने से आराम मिलता, परन्तु वह डरता था। सोचता था कि झाड़ियों में ब्रह्मबूटी खोजने जायेगा, तो वहाँ कोई ब्रह्मराक्षस न बैठा हो···

दूसरी लीक

तिराहा ऐसे लगता था जैसे तपस्वी का योगदण्ड (T) हो।

अरण्य से निकलकर टप्पर गाड़ी सड़क पर चढ़ी, तो पासमान रुककर देखने लगा। सड़क के उस पार दूर नदी की धारा चमक रही थी। यह वही 'अरोह' नदी थी जिसका उल्लेख सुमद ने किया था।

इन्हें बायीं ओर जानेवाली सड़क पकड़नी थी। सुमद ने बताया था कि एक स्थान पर उन्हें टीला-सा मिलेगा, जिससे उतरते ही सामने तक्षशिला का परकोटा दिखायी देगा।

दिन तप रहा था। पासमान जल्दी-जल्दी बैलों को हाँकने लगा। टप्पर गाड़ी ऊबड़-खाबड़ और पथरीले मार्ग पर खड़खड़ाकर चल पड़ी। पासमान के भीतर अब जैसे असीम उत्साह हिलोरें ले रहा था। उसका मन करता था कि वह कोई उल्लास-भरा गीत गाये।

सड़क धीरे-धीरे ऊपर उठ रही थी। पासमान जोत पर खड़ा होकर देखने लगा। वह बार-बार साँटा फटकारता था और बैलों को कोंचता था, "एँह, एँह, चले चलो, चले चलो..."

मूली कन्या की छवि देख-देखकर प्रसन्न हो रही थी—कैसे पतले-पतले थे उसके होंठ, घने काले बाल थे, बड़ी-बड़ी आँखें थीं, नाक थी कि सुग्गे की चोंच। वह मन्त्रमुग्ध-सी उसे निहार रही थी और उसका वात्सल्य उमड़ा पड़ता था।

जब सूरज एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर पहुँचा, तो बैल चढ़ाई चढ़कर टीले पर आ गये। वहाँ से उन्होंने जो अद्भुत दृश्य देखा, तो बस, देखते ही रह गये। दूऽऽर सामने खुले आकाश के नीचे तक्षशिला का परकोटा दिखायी पड़ता था। यही वह नगरी थी जहाँ पहुँचने के लिए उन्होंने इतने कष्ट सहे थे, इतनी विपत्तियाँ झेली थीं।

एक क्षण के लिए पासमान को लगा कि वह कोई सपना देख रहा है, किसी कल्पना-लोक में पहुँच गया है। वे इतने भटके थे कि उन्हें विश्वास ही नहीं होता था कि कभी वे तक्षशिला पहुँचेंगे। कोई अज्ञात भय उनके मन में समा गया था। वे यह सोच-सोचकर डरते थे कि वे सदा इसी तरह भटकते रहेंगे और जीवन में न कभी तक्षशिला पहुँचेंगे, न अपने गाँव···

अब उन्हें लगने लगा था कि तक्षशिला की बाँहों में जाकर उनके सारे कष्ट, सारे क्लेश एकाएक मिट जायेंगे।

परकोटे के उस पार दायीं ओर एक नंगी पहाड़ी ऊँट के कूबड़ की नाईं लगती थी। उसकी छाया में ऊँचे-नीचे घर-मकान दिखायी पड़ते थे। मार्ग नीचे उतरकर सीधा कोटद्वार तक जाता था।

कोटद्वार के दायें-बायें जानेवाली दोनों भीतें ऐसे लगती थीं जैसे किसी नटखट बालक ने चिमटे को बहुत अधिक खोल दिया हो। दीवारें स्थान-स्थान से ढह चुकी थीं। इधर कभी भयंकर भुइंडोल आया था और गारे-मिट्टी, पत्थर और अधपकी ईंट की बनी यह रक्षा-दीवार कई स्थलों से हरहराकर गिर पड़ी थी और तब से उसका पुनः निर्माण नहीं किया गया था।

अरोह नदी की दायीं ओर जानेवाली धारा मोड़ काटकर आगे अदृश्य हो जाती थी और फिर हरे-भरे लहलहाते खेतों के बीच उसकी पतली लीक-सी दिखायी देती थी, जो धीरे-धीरे

सरककर सड़क के निकट आने लगती थी।

खेतों में डेढ़-डेढ़ हाथ गेहूँ और बीच-बीच में फूली सर
खड़ी थी। नदी जहाँ से मोड़ लेकर इधर आती थी, वहाँ
घर थे और फिर खेतीहीन भूमि थी, जिस पर बहुत-सी भैंसें
रही थीं। आगे खेत थे, जिनमें भैंसों को जाने से रोकने के लि
झाड़ियों की बाड़ लगी हुई थी। वहीं पर एक छोटे पेड़ के नी
एक युवक हाथ में लम्बी लाठी लिये बैठा था। नदी की धारा
किनारे एक स्त्री सिर पर पोटली रखे धीरे-धीरे जा रही थी
उसके साथ-साथ एक बालक दौड़-दौड़कर चल रहा था।

खेतों के बीच कहीं-कहीं कोई पेड़ छतरी की नाईं ख
दिखायी पड़ता था। स्थान-स्थान पर सियावड़ी (काली हाँडी
टँगी थी और ग्राम-बालाओं के स्वर सुनायी पड़ते थे। इस ऋ
में पर्वतों के उस पार लौटकर जानेवाले पक्षी इसी आका
मार्ग को पकड़ते थे। किसान तनिक भी प्रमाद करें, तो खेतों
एक दाना भी न बचे।

पासमान ने देखा, नदी की धारा के ऊपर सम्भवतः कलहं
बुलंग आदि उड़ते हुए जा रहे थे।

आगे ढक्की थी। पासमान गाड़ी को सँभाल-सँभालक
उतारने लगा।

बायीं ओर विशाल टीला था। टीले के ऊपर एक प्राचीन बरग
असंख्य बाँहें फैलाये खड़ा था। उसके बायीं ओर 'ढन' थी, जिस
जल में भैंसें आकण्ठ डूबी पगुरा रही थीं। किसी समय प
कोटे का निर्माण करने के लिए सहस्रों मोल-मजूरों ने टीले के सा
दूर-दूर तक मिट्टी खोदी थी। इससे वहाँ यह ढन अर्थात तलै
बन गयी थी। जब कभी अरोह नदी किनारे तोड़कर बहती-

जैसा कि प्रायः प्रतिवर्ष होता था—या मूसलाधार वर्षा होती, तो परकोटे तक की सारी धरती में जल भर जाता था। तब दूर-दूर तक केवल बरगदवाला टीला कछुए की पीठ की नाईं खड़ा दिखायी देता था।

सड़क इसी टीले की परिक्रमा करती हुई सीधी कोटद्वार तक पहुँचती थी।

परकोटे के बाहर भेड़-बकरियों का एक रेवड़ चर रहा था। कुछ बकरियाँ दीवार के ध्वस्त भागों पर चढ़ गयी थीं। एक बालक चरवाहा ढेले फेंक-फेंककर उन्हें उतारने का उपक्रम कर रहा था। बायीं ओर की दीवार के साथ-साथ एक ओट्ठी ऊँट की रस्सियाँ पकड़े जा रहा था।

नगर के भीतर का कोलाहल सुनायी पड़ने लगा था। मूली को लगा, सामने का विशाल प्रवेश-द्वार किसी विकराल राक्षस का मुँह है जो उन्हें खाने के लिए खुला है। इसके विपरीत, पासमान यह सोच रहा था कि नगर का द्वार उनके लिए सुख और चैन का मार्ग खोल देगा।

कोटद्वार की चौखट की ऊपरी शिला इतनी ऊँची थी कि हाथी पीठ पर लकड़ी का बड़ा अट्टाल उठाये प्रविष्ट हो सकता था। शिला के ऊपर ही छज्जा था। जब कोई शत्रु बन्द किवाड़ों में आग लगाने का यत्न करता था, तो इस छज्जे से पानी गिराया जाता था अथवा ओलम्बक अर्थात नोकदार लकड़ियाँ गिरायी जाती थीं।

टप्पर गाड़ी धीरे-धीरे कोटद्वार के निकट पहुँच रही थी। द्वार के मुहरे (सामने के भाग) पर बलुवा पत्थर जड़े हुए थे। नगर-द्वार में प्रविष्ट होने के लिए खाई के ऊपर एक पुल (संक्रम) बना हुआ था। टप्पर गाड़ी संक्रम पर पहुँची, तो पासमान और मूली चकित होकर देखने लगे। जीवन में पहली बार वे किसी बड़ी

राजधानी के द्वार में प्रविष्ट होने जा रहे थे।

कोटद्वार का एक ही कपाट था, जो ठेहरी से हटकर दायें ओर के द्वार-प्रकोष्टों (द्वार के भीतर दोनों ओर बनी कोठरियां) के आगे टिका हुआ था। कपाट में हाथी-कील लगे थे और नीचे का भाग जला हुआ था।

टप्पर गाड़ी द्वार के नीचे ऊबड़-खाबड़ पत्थरों पर से होती हुई आगे बढ़ी। पहिए पत्थरों पर टकराये, तो टाँडों में बंद कबूतर गुटरगूं-गुटरगूँ करने लगे। दोनों कन्याएँ भी जाग गयीं और किकियाने लगीं। मूली ने बस्सी को घुटनों पर लिटाया और खेमा को कन्धे से लगाकर वह थपथपाने लगी।

कोटद्वार में प्रविष्ट होते ही वे कुम्हारों की बस्ती में पहुँच गये। बायीं ओर, नगर-दीवार की छाया में, कुम्हारों के घर थे। दायीं ओर पहले चट्टा (वृक्षहीन, धूल भरा मैदान) था और फिर घनी सघन अमराई थी। कुम्हारों ने अनगिनत गधे, जिनकी टाँगों में धगने बँधे थे, यहाँ-वहाँ डोल रहे थे।

पासमान ने बैलों को हाँका। चट्टा पार करके वे अमराई की ओर बढ़े। वातावरण में आम की बौर की गन्ध थी। एकाएक पासमान को फिर उस गन्धी का स्मरण हो आया और वह भींकने लगा चुपचाप। परन्तु पेड़ों की ठण्डी छाया के नीचे पहुँचते ही पासमान फिर स्वस्थ हो गया। मूली प्रसन्न होकर देख रही थी। दोनों के तन-प्राण में जैसे शीतलता भर गयी। पासमान ने एक पेड़ के नीचे सपाट-सी धरती चुनी और वहाँ रुकने का निश्चय किया। बैल प्यासे थे। मूली को नीचे बैठाकर उसने बैलों को खोला और निकट के कुएँ पर ले गया।

बैलों को पानी दिखाकर वह आया और चित्तक पर लेट गया

बहुत थका हुआ था। रात-भर वह सोया नहीं था और कुछ क्षण आँखें मूँद वह विश्राम करना चाहता था। इसलिए दो-चार पिण्ड-खजूर खाकर वह पसर गया। मूली बैठकर दोनों कन्याओं को दूध पिलाने लगी।

थोड़ा ही समय बीता था कि अमराई के परले सिरे पर किसी की चिल्लाहट सुनायी पड़ी। दोनों ने एक साथ उचककर देखा। वहाँ खटिया पर एक बुड्ढा बैठा था और आस-पास एकत्र ढेर सारे कुक्कुट-कुक्कुटियों को कंकर मार रहा था। इतने सारे पक्षी देखकर मूली बड़ी चकित हुई और बोली, "इतने कुक्कड़-कुक्कड़ियाँ कहाँ से आ गयीं···"

उन्होंने उस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। अब उन्हें रात के ठिकाने की चिन्ता हुई। अमराई के नीचे रात बिताना उन्हें अभीष्ट था। बैठे-बैठे वे सोच ही रहे थे कि तभी एक लड़का दबे पाँव चलकर उनके पास आया और नीचे बैठकर फुस-फुस बातें करने लगा। वह बोला कि वह जो खाट पर बुड्ढा लेटा है न, वह उसका दादा है, जो पागल है और पापरोगी (कुष्ठरोगी) भी है। इसीलिए उन्होंने उसकी खाट यहाँ अमराई के नीचे डलवा रखी है··

सुनते ही दोनों घबरा गये। लड़का बोला कि डरने की कोई बात नहीं। वह किसी को कुछ नहीं कहता।

परन्तु उन्होंने निश्चय किया कि तुरन्त कोई और स्थान ढूँढेंगे। एक तो पागल और फिर कुष्ठारोगी। वे जल्दी-जल्दी सामान बटोरने लगे और तुरन्त गाड़ी बाँधकर चल पड़े।

अमराई से निकलकर वे सामने एक गली में पहुँचे, तब कहीं उन्हें चैन पड़ी। डर था कि कहीं गाड़ी की चरमराहट सुनकर वह पागल उठकर उनके पीछे न पड़ जाये।

गली में मिट्टी के ढेरों पर बालक हुड़दंग मचा रहे थे। वहाँ

से निकलते ही एक और गली आयी जिसमें पंसारियों की छोटी-मोटी हट्टियाँ थीं। गली में इतनी दुर्गन्ध थी कि निकलना कठिन हो रहा था। गली के दोनों ओर ध्वस्त-से मकानों में से निकलने-वाली गन्दे पानी की नालियाँ गली में ही गिरती थीं और पानी सड़कर दुर्गन्ध उत्पन्न कर रहा था।

उस गली में से निकलते ही वे एक बड़े ताल पर पहुँचे।

ताल पक्का और चौकोर था। उसके चारों ओर नीम, पीपल, गूलर और जामुन के पेड़ थे। कभी यह ताल मल्लभूमि का का... देता था। उसके भीतर नीचे तक पत्थर की सीढ़ियाँ उतरती जाती थीं। इन सीढ़ियों पर बैठकर नागरिक प्रतियोगिताएँ देखा करते थे, परन्तु अब वहाँ घुटने-घुटने जल भरा हुआ था। पेड़ों के पत्ते झड़-झड़कर पानी पर तैर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि आसपास के घरों के लोग सारा कूड़ा-कचरा भी इसी ताल में डालते थे। एक टूटी बँसखट भी उसमें पड़ी थी।

ताल के चारों ओर घर-द्वार थे। बहुत-से तो मलबे के ढेर मात्र थे। किसी की छत की कड़ियाँ भीतर गिर पड़ी थीं। किसी की चौखट खड़ी थी और दीवारें नहीं थीं। मार्ग में ढेरों मलबा पड़ा था।

पासमान गाड़ी को एक पीपल के नीचे ले आया। यह स्थान उसे उपयुक्त लगा और उसने गाड़ी खोल दी। बैलों को चारा-दाना डालकर वह मूली के साथ टप्पर में बैठ गया।

परन्तु मूली अब भी व्याकुल थी। कभी उस बैसाखीवाले बुड्ढे की और कभी उस कुष्ठरोगी की आकृति उसकी आँखों के सामने नाचने लगती।

साँझ धीरे-धीरे उतर रही थी। मूली ने कहा, "अब सबसे पहला काम यह करो कि किसी वैद्य-चित्तिक (चिकित्सक) का पता-ठिकाना पूछकर कन्या को दिखाओ…"

बैठकर उन्होंने थोड़ा भोजन किया और लेट गये। धीरे-धीरे प्रकाश सिमट रहा था। सामनेवाले टूटे मकान के छज्जे के नीचे सम्भवतः चमगादड़ों का ठिकाना था। आकाश में वे निःशब्द पंख फड़फड़ाते हुए उड़ रहे थे।

अँधेरा उतरने के साथ-साथ टूटे-ध्वस्त मकानों में से विचित्र स्वर उभरने लगे। फिर ऐसा प्रतीत होता था जैसे गलियों में और ताल के आसपास कुत्तों के झुण्ड के झुण्ड निकल आये हों और लड़ रहे हों।

मूली ऊँघने लगी। पासमान अँधेरे में देख रहा था। वह खेमा और सुमद के विषय में सोचने लगा। अचरज की बात तो यह थी कि सुमद इस तरह कन्या उन्हें सौंपकर बिना बताये चला क्यों गया!

इसी ऊहापोह में वह कभी इस करवट लेटता, कभी उस करवट। मूली जैसे दोनों कन्याओं को अपने पंखों के नीचे छिपाये लेटी थी। बाहर घना अँधेरा था। कहीं कोई दीया तक टिम-टिमाता दिखायी नहीं देता था। बस, कुत्ते भौंकते थे। ताल में मेंढ़कों की टरटराहट गूँज रही थी। पानी के भीतर कोई जीव रह-रहकर 'पिटर-पिटर, पिटर-पिटर' बोलता था—कभी इस कोने से, कभी उस कोने से।

पासमान को झपकी आ गयी। परन्तु अभी आँख भी नहीं लगी थी कि बहुत-से कुत्ते भौंकने लग गये। वे जैसे आसपास की गलियों में से निकल-निकलकर आते थे और ताल के चारों ओर लड़ते हुए दौड़ते थे। एक बार तो वे लड़ते-लड़ते टप्पर गाड़ी से आ टकराये। पासमान ने लाठी पहियों पर पटपटाई और हुड़का, तो वे भाग गये और परे जाकर लड़ने लगे।

मूली जाग गयी थी। थोड़ी देर कन्याओं को थपथपाती रही और फिर जैसे पासमान को स्मरण कराने के लिए बोली, "कल

पहला काम यहं करो कि किसी वैद्य-चित्तिक का पता लगाओ..."

पक्षियों के कलरव ने भोर होने की उद्घोषणा की, तो पासमान उठकर बैठ गया। मूली दोनों कन्याओं को दूध पिला रही थी। पेड़ के पत्ते झड़-झड़कर टप्पर पर और ताल के पानी में गिर रहे थे। सड़क के पार एक घर में कलह चल रहा था। किसी नारी के कर्कश वचन सुनायी पड़ते थे। ताल के उस पार दो-चार पुरुषों के खाँस-खाँसकर चलने के स्वर से प्रतीत होता था जैसे वे दातुन करते हुए जा रहे हों।

पासमान ने आकाश की ओर देखा कि उजाला हो और वह बैलों को पानी दिखा लाये। वह बैठा-बैठा देख ही रहा था कि नगर में डिंडिभ की ध्वनि होने लगी। फिर मनुष्यों का कोलाहल सुनायी पड़ा, जो धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था। मूली उठकर बैठ गयी और बोली, "यह कोलाहल कैसा है ?"

पासमान के कान खड़े हो गये। कोलाहल धीरे-धीरे समीप आ रहा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कोई भारी भीड़ चलकर ताल की ओर ही आ रही हो।

ताल के आसपास की गलियों से भी लोग निकल-निकलकर आने लगे। बीच-बीच में किसी का उत्तेजित स्वर भी सुनायी पड़ता था। पासमान धीरे से उतरा और टप्पर गाड़ी के साथ लगकर खड़ा हो गया। स्थान-स्थान पर लोग दल बनाकर बातें कर रहे थे। पासमान के कानों में भनक पड़ी कि किसी अपराधी को वधस्थल की ओर ले जाया जा रहा है।

धीरे-धीरे उजाला उतर रहा था। पासमान ने देखा कि जो कोई जिस वेष में था, उठकर चला आया था और उत्तेजित स्वर

में बातें कर रहा था ।

डिडिभ की ध्वनि अब और निकट सुनायी पड़ने लगी। कोलाहल बढ़ने लगा था । मूली टप्पर के नीचे से उचक-उचककर देख रही थी । थोड़ी ही देर में दायीं ओर ताल के उस पार चौड़ी सड़क पर डिडभ बजानेवाले चाण्डाल आते दिखायी दिये । अंगों पर चिता-भस्म लगाये वे भीड़ के आगे-आगे चल रहे थे । उन्होंने नीली जँघिया और नीली ही बँहकटी पहनी हुई थी । केश उनके छोटे और घुँघराले थे । उनसे घिरा एक हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति धीरे-धीरे चल रहा था जिसके शरीर पर लाल चन्दन पुता हुआ था और दोनों हाथ पीठ के पीछे बँधे थे । एक चाण्डाल आगे-आगे चलते हुए, भीड़ को हटा रहा था, "हट जाइए, हट जाइए, राह छोड़िए···" वह बार-बार इस वाक्य को दुहराते हुए बाँस से लोगों को हटाता था ।

डिडिभ बजने बन्द हुए और कोलाहल शान्त हो गया । लगा कि सारी भीड़ साँस रोककर खड़ी हो गयी थी । एक चाण्डाल ने हाथ का बाँस ऊपर उठाकर घोषणा के स्वर में कहना आरम्भ किया—

"···सब प्रजाजन सुनें और ध्यान से सुनें ।
यह हैं तक्कसिला के कुमार अक्खत, जिन्होंने
शत्रुराजा पोरउ से दुरभिसन्धि करके
अपने सहोदर और उपराज आम्भीक को
विषजुष्ट भोजन देकर हत्या करने का षड्यन्त्र किया।
···सब प्रजाजन सुनें और ध्यान से सुनें ।
धम्मासन से कुमार अक्खत की दोनों आँखें निकालकर
वध करने का दण्ड सुनाया है···
···सब प्रजाजन सुनें और ध्यान से सुनें ।

गोदिप्पिउण[1] उपराज आम्भीक,
जो तक्कसिलाधीश की अकाल मृत्यु से राज्य के
वास्तविक अधिकारी हैं,
शीघ्र ही विधिवत राजसिंहासन पर बैठेंगे।
"...सब प्रजाजन सुनें और ध्यान से सुनें..."

एक बार फिर डिंडिम बज उठे और मूली और पासमान चकित बैठे देखने लगे। आगे-आगे जानेवाला चाण्डाल लोगों को हटा रहा था, "हट जाइए, हट जाइए, राह छोड़िए..."

लोग दो-दो, चार-चार के समूहों में एकत्र होकर चर्चा और वाद-विवाद कर रहे थे। टप्पर गाड़ी के निकट तीन व्यक्ति खड़े थे। उनमें एक तरुण था और दो अधेड़ अवस्था के। तरुण मुंह में दातुन दबाये कह रहा था, "राजकुमार अक्षत पर झूठा आरोप लगाया गया है—राह से हटाने के लिए। उसका कोई दोष नहीं..."

दाढ़ीवाला अधेड़ बोला, "यदि यह बात है, तो धम्मपाल कहाँ थे, जब राजकुमार अक्खत को दण्ड सुनाया जा रहा था?"

तरुण बोला, "धम्मपालकों से जाँच करवाई ही नहीं गयी।"

दूसरा अधेड़ बोला, "यह कैसे हुआ?"

तरुण बोला, "यह अन्याय हुआ। धम्मपालकों से जाँच करवाये बिना किसी को कैसे दण्ड दिया जा सकता है! फिर वह तो राजकुमार है..."

दाढ़ीवाला बोला, "फिर इतना कठोर दण्ड देना कहाँ तक उचित है। कुमार अक्खत युवराज का सहोदर है..."

1. नीतिनिपुण।

"यह भली पूछी आपने !" तरुण बोला। "राजगद्दी के लिए कैसा सहोदर और कैसी दया..."

दाढ़ीवाला बोला, "यदि धम्मपालकों ने न्याय नहीं किया, तो फिर यह न्याय करने का नाटक किसने रचा ?"

दूसरा अधेड़ बोला, "आज तो उपराज ही सबकुछ हैं।"

तरुण दातुन चबाते हुए बोला, "यह कैसे हो सकता है ! अभी वह राजसिंहासन पर बैठा नहीं। फिर धम्मासन पर कैसे बैठ सकता है ! न्याय करने का अधिकार उसे कैसे मिल गया ?"

दूसरा अधेड़ कह रहा था, 'सभासदों का कथन है कि राजा की मृत्यु के पश्चात युवराज ही सिंहासन का वास्तविक अधिकारी है। वही उत्तराधिकारी है। इससे धम्मासन पर बैठने का, न्याय-निर्णय करने का अधिकार उसे अपने आप मिल जाता है..."

तरुण जैसे तड़पकर बोला, "यह सब ढोंग है, असत्य है, अन्याय है। युवराज सिंहासन पर बैठा नहीं, उसका राज्याभिषेक हुआ नहीं, फिर धम्मासन पर वह कैसे बैठ सकता है ! यह राजदण्ड नहीं, राजकोप है, अन्याय है, हत्या है..." और वह जल्दी-जल्दी दातुन चबाने लगा।

दाढ़ीवाला डर गया। बोला, "धीमे बोलो। गुप्तचरों ने सुन लिया, तो बन्दी बना लिये जाओगे। प्राण बचाना कठिन हो जायेगा। इन दिनों किसकी सुनवायी होती है..." और दोनों अधेड़ अपनी-अपनी राह हो लिये। तरुण भी भुनभुनाता हुआ साथवाली गली में चला गया, जिसके कोने पर हट्टीवाला अनाज की टोकरियाँ लगा रहा था।

पासमान और मूली असमंजस में पड़े देख रहे थे। रह-रहकर चन्दन लिपे उस पुरुष की छवि उनकी आँखों के सामने नाच जाती थी। मूली बार-बार सोचती थी कि क्या सचमुच उसकी

ग्राँखें निकाल ली जायेंगी । और वह ममतामयी ग्राँखों से अपनी बस्सी की ग्रोर देखने लगती ।

दोनों का जो खट्टा हो गया था । पासमान निकट के कुएँ पर जाकर पानी ले आया और मूली सत्तू घोलने बैठी । परन्तु पासमान का मन उन्हें छूने तक को नहीं हुआ । बार-बार उसकी आँखों के आगे उस हतभागे की आकृति आ जाती थी । पासमान को लगने लगता जैसे उसके ही परिवार के किसी जीव को वध-स्थल की ओर ले जाया गया था ।

हवा सवेरे से ही ठहरी हुई थी और वायुमण्डल में गरमाहट आने लगी थी । पीपल के सुनहरी पत्ते चुपचाप झड़-झड़कर ताल के पानी में और आसपास की धरती पर गिर रहे थे ।

सूरज निकल आया और चहल-पहल बढ़ने लगी । मूली की गोद में लेटी बस्सी बड़ी व्याकुल थी । पासमान ने उसे उठाया और गाड़ी के निकट इधर से उधर डोलने लगा ।

टप्पर गाड़ी के निकट ही एक व्यक्ति सामने दो मटकैने रखे बैठा था । उसकी बड़ी-बड़ी लटकती मूँछें थीं । दाढ़ी सफाचट थी । उसके वस्त्र···चादर और झगा— मैले-कुचैले थे । खुली छाती के झगे में उसके वक्ष के खिचड़ी बाल दिखायी पड़ते थे । उसकी बायीं गाल की उभरी हुई हड्डी के ऊपर चोट का गहरा चिह्न था । पासमान डोलते हुए उसके निकट आया, तो वह मुँह उठाकर देखने लगा । फिर एकाएक बोला, "परदेस से आये हो ? कहाँ के वासी हो ?"

पासमान ने अचकचाकर संशय की दृष्टि से उसे देखा । पैरों के बल बैठा वह धीरे-धीरे मुस्करा रहा था । पासमान अब सदा सतर्क और सावधान रहने का यत्न करता था, क्योंकि कुछ ही दिनों में उसे बड़े कड़वे अनुभव हुए थे । इसलिए इस अपरिचित

की बात सुनकर पहले तो वह चौंका, क्योंकि गाल के घाव के कारण उसकी आकृति कुछ डरावनी लगती थी। पता नहीं कौन है! पर शीघ्र ही उसका संशय मिट गया। वह और कोई नहीं, मधु बेचनेवाला कोई पर्वतीय ग्रामीण था। एक ग्राहक उसके निकट आ बैठा था और मटकैनों पर बँधे लाल कपड़े उतारकर वह अपने माखू (मधु) का गुणगान कर रहा था। एक मटकैने में छोटी मधुमक्खियों का और दूसरे में बड़ी मधुमक्खियों का मधु था। वह ग्राहक को बता रहा था कि अच्छे मधु की पहचान क्या है। दोनों मटकैनों में उसने एक-एक उँगली डुबोयी और फिर बूँद-बूँद मधु टपकाकर दिखाते हुए वह बोला, "बढ़िया माखू छोटी मक्खियों का होता है और उसमें तनिक ललाई होती है...जैसे देखो यह। घटिया माखू में थोड़ा पीलापन होता है।"

बस्सी बार-बार व्याकुल होकर आँखें मलती थी। पासमान उसे थपथपाकर सुलाने का यत्न रहा था। माखूवाले का ग्राहक चला गया, तो वह उठकर पासमान के निकट आया और उससे बातें करने लगा। पासमान ने उसे बताया कि किस प्रयोजन से वह राजधानी आया है। उसकी दुख-भरी गाथा सुनकर माखूवाला सहानुभूति के स्वर में बोला, "तुमने अच्छा किया जो तक्कसिला आ गये। तक्कसिला तो कुशल वैद्यों का घर है। काशी से लेकर सिन्धु के उस पार तक के लोग यहाँ उपचार करवाने आते हैं। मैं तुम्हें एक कुशल वैद्य का पता बताऊँगा। वह ज्योतिष विद्या भी जानता है..."

पासमान को जैसे तिनके का सहारा मिल गया। परन्तु मूली टप्पर के नीचे बैठी कुढ़ रही थी। पासमान जिस किसी से घुल-मिल जाता था। सहज ही किसी पर विश्वास कर लेने के उसके स्वभाव से मूली सदा दुखी-सन्तप्त रहती थी। जब माखूवाला जाकर एक और ग्राहक को माखू दिखाने लगा, तो मूली ने खेमा

को कन्धे से लगाया और पासमान को आड़े हाथों लिया, "यह फिर किसे मुँह लगा रहे हो! एक बार नहीं, दो-दो बार धोखा खा चुके हो। फिर भी तुम नहीं चेतते! अन्धी भैंस का मांस खाया है क्या! न जान, न पहचान, जिस किसी पर विश्वास कर लेते हो और दुखड़ा रोने लगते हो! मैं पूछती हूँ तुमसे, बिना सोचे-समझे क्यों किसी की बातों में आ जाते हो..."

मूली की फटकार सुनकर पासमान झेंप गया। सकपकाते हुए बोला, "भवनी! धीरे बोल। सुन लेगा।"

मूली का आक्रोश उचित था। दूध का जला छाछ को भी फूँक-फूँककर पीता है। गाँव से निकलने के पश्चात वह बहुत कुछ देख चुकी थी। पहले बटोहियों ने उन्हें उलटी राह पर लगाया। फिर विचक्खण बन्दरवाला उन्हें चकमा देकर गोखरू चुरा ले गया। मूली को यही लगता था कि यह संसार छली, प्रपंची लोगों से भरा है। सभी को वह संशय और सन्देह की दृष्टि से देखती थी।

परन्तु पासमान को सहानुभूति के दो शब्द मिलते, तो वह जैसे हृदय खोलकर रख देता। बोला, "भवनी! हमने कोई थैली खोलकर दे दी है इसे! और फिर हम कोई उजाड़ थल पर थोड़े बैठे हैं! यह राजधानी है, राजधानी! राजाधिराज की नगरी तक्कसिला..."

वे बातें कर ही रहे थे कि एकाएक फिर कोलाहल हुआ और भगदड़ मच गयी। लोग चिल्लाते हुए भाग रहे थे कि दण्डयुधाधर आ रहे हैं। मूली और पासमान की समझ में नहीं आया कि क्या हुआ है और ये दण्डयुधाधर कौन हैं। वे डरे-डरे-से देखने लगे। मूली विकल होकर बोली, "हाय! यह फिर कैसी विपदा

आयी ?"

बस्सी पहले ही रिरिया रही थी। अब खेमा भी जाग गयी और किकियाने लगी।

माखूवाला भयभीत आँखों से खड़ा देख रहा था। तभी उसने मटकैने सँभाले, चिल्लाकर बोला, "जल्दी से निकल जाओ यहाँ से। किसी ने राजा के महल में आग लगा दी है···वो देखो···"

मूली और पासमान ने पलटकर देखा, तो उत्तर दिशा में आकाश पर धुएँ के काले-काले बादल उठ रहे थे। वे घबरा गये।

माखूवाला उनके निकट आया और बोला, "तलवारें, बरछे लेकर दण्डयुधाधर मारेंगे सबको। भाग चलो यहाँ से।" और यह कहते-कहते मटकैने पकड़े वह भागा और भीड़ में अदृश्य हो गया।

सब ओर खलबली मच गयी थी और लोग भागे जा रहे थे। पासमान के हाथ-पैर फूलने लगे। उसकी समझ में नहीं आता था कि क्या करे, किधर जाये। मूली ने दोनों कन्याओं को सँभाला। बस, पासमान भी जल्दी से गाड़ी कर चल पड़ा। सड़क पर दस-पन्द्रह ऊँटोंवाले ओट्ठियों के साथ-साथ चलते हुए पासमान ने पूछना चाहा, परन्तु किसी को बात तक करने का अवकाश नहीं था। सबको जैसे प्राणों के लाले पड़ गये थे और वे जल्दी-जल्दी सुरक्षित स्थान पर पहुँच जाना चाहते थे।

पासमान भी साँटा फटकार-फटकारकर बैलों को दौड़ा रहा था। उसे लगता था कि कोई भारी विपत्ति आनेवाली है और उससे बचने के लिए उन्हें कहीं भी भाग जाना चाहिए।

वह बार-बार बैलों को उकसाता था। भीड़ में गाड़ी को बचा-बचाकर ले जा रहा था। थोड़ी ही देर में वे काठ के एक पुल

पर जा पहुँचे। यह पुल एक नाले के ऊपर था। टप्पर गाड़ी पुल पर चढ़ी, तो वह इस तरह चरमराने लगा जैसे गाड़ी को लेकर नीचे कीच और कूड़े-कचरे में बैठ जायेगा जहाँ सैकड़ों सूअर और कुत्ते लौट रहे थे।

मूली यह देखकर आतंकित हो उठी और प्रार्थना करने लगी, "सब्बे सत्ता, सब्बे पाणा..."

पुल लाँघकर वे सड़क पर आये, तब कहीं उनकी जान में जान आयी। इधर भगदड़ नहीं थी। लोग छतों पर खड़े होकर आकाश में उठते हुए धुएँ के बादलों को देख रहे थे।

बस्सी चुप नहीं हो रही थी। बार-बार मुट्ठियाँ बाँधकर आँखों को मलती और रोती थी। देख-देखकर मूली की आँखों में आँसू आ गये और घबरायी हुई-सी वह देखने लगी।

आगे कसेरहट्टा था। परन्तु यहाँ भी उन्हें कोई स्थान दिखायी नहीं दिया, जहाँ रुककर वे तनिक साँस लेते।

चलते-चलते वे नगर-दीवार के निकट जा निकले। राह दीवार के साथ-साथ थी। टूटी दीवार में से बाहर का जंगल दिखायी पड़ता था। मार्ग के दायीं ओर छीपों के घर थे। दीवार के साथ कई छीपे बैठे थे और पटीमों पर वस्त्र बिछाकर छाप रहे थे। आसपास इतनी धूल और गन्दगी थी कि वहाँ रुकना चाहते हुए भी वे रुक नहीं सके।

थोड़ी ही देर में वे एक नगर-द्वार के निकट जा पहुँचे। वहाँ नीम के घने वृक्ष थे। पासमान गाड़ी को हाँकते हुए वृक्षों के नीचे ले गया और आसपास देखने लगा।

बस्सी रिरिया रही थी और बार-बार मुट्ठियाँ बाँधकर आँखों को मलती थी।

पेड़ों के नीचे बहुत-से लकड़हारे और घसियारे बैठे थे। नगर-द्वार के बाहर से आकर एक लकड़हारे ने बोझ उतारा और

फिर नीम की टहनी तोड़कर पैरों की धूल झाड़ने लगा।

नगर-द्वार के निकट, पीपल के नीचे, एक बुढ़िया चाटियाँ रखे बैठी थी और आने-जानेवालों को पानी पिलाती थी। पासमान ने भी गड़ुवा उठाया और पानी लेने उतरा। जब वह पानी लेने गया, तो बुढ़िया बोली, "क्या बात है? बच्चा रो रहा है! कोई कष्ट है उसे?" जब से टप्पर गाड़ी वहाँ आकर खड़ी हुई थी, वह टकटकी लगाये देख रही थी और उसके कानों में किसी बच्चे के रोने का स्वर पड़ रहा था।

पासमान बताना चाहते हुए भी मौन ही रहा, क्योंकि मूली की लताड़ वह अभी तक भूला नहीं था। इसलिए अधिक न कहकर वह गाड़ी पर लौट आया।

बस्सी बार-बार रोती थी। आज अधिक गरमी के कारण ही उसकी आँखों में कष्ट हो रहा था। पासमान कितना चाहता था कि वह माखूवाला आकर उन्हें किसी वैद्य के पास ले जाये। परन्तु भगदड़ में वह न जाने कहाँ चला गया था? पासमान को अब आशा नहीं थी कि वह आयेगा।

यहाँ किसी प्रकार का भय नहीं था।

सवेरे से उन्होंने मुँह में अन्न का एक दाना भी नहीं रखा था। इसलिए जो कुछ उनके पास था, निकालकर वे खाने बैठ गये।

थोड़ी देर में चाटियोंवाली उठकर आ गयी। पसीने के मारे उसकी पेपणी[1] भीगी हुई थी। श्वेत नीली धारियोंवाला मैला-सा लहँगा पहन रखा था उसने। आकर बोली कि जब से तुम लोग यहाँ आये हो, गाड़ी में बच्चा रो रहा है, इसलिए वह पूछने आयी है।

१. कुर्ते जैसा ढीला-ढाला वस्त्र।

एक स्त्री की सहानुभूति पाकर मूली ने उसे सारी बात बतायी। सुनकर बुढ़िया को जैसे धक्का-सा लगा। बोली, "हाय ! इतनी-सी जातकी को यह दोष कैसे लग गया ! कोई देखे इसकी बड़ी-बड़ी आँखों को, तो सोच भी नहीं सकता कि इसके नयनों में जोत नहीं..."

हाथ बढ़ाकर उसने बस्सी को अपनी गोद में ले लिया। उसकी लाल आँखों को देखकर बोली, "हाय, आँखें सूजकर कैसी बेर जैसी लाल हो गयी हैं !"

कुछ यात्री आ गये थे। बस्सी को वापस उसकी गोद में देकर वह अपने ठीये पर जा बैठी और पानी पिलाने लगी। पानी पिलाते हुए भी उसकी दृष्टि टप्पर गाड़ी पर लगी हुई थी।

धीरे-धीरे दिन ढल रहा था। बुढ़िया उठकर आयी और बोली, "एक बात मानो मेरी ! यहाँ रात कैसे बिताओगे ! चलो मेरे साथ, मेरे घर। रात को बिनौले कूटकर घी वाले आटे में हल्दी मिलाकर पका दूँगी; इसकी आँखों पर बाँधना। सवेरे तक यह चंगी हो जायेगी। आँखों की सारी पीड़ चुन लेगी।"

मूली और पासमान एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। बुढ़िया बोली, "घबराओ नहीं। परदेस में मनुष्य मनुष्य के काम न आया, तो फिर मनुष्य कैसा ! कल तुम्हें एक वैद्य के पास ले जाऊँगी।"

सचमुच, रात अकेले में वे नहीं काट सकते थे। एक अपरिचिता के साथ जाना भी उचित प्रतीत नहीं होता था। परन्तु बुढ़िया बार-बार आग्रह कर रही थी। फिर बोली, "तुम लोग चिन्ता न करो। प्रभु सब ठीक करेंगे। विपदा मनुष्य पर ही आती है। जो मनुष्य विपदा से नहीं घबराता, वही मनुष्य है। तुम मेरी विपदा सुनो, तो विश्वास ही न करो कि कोई इतनी विपदा झेलकर भी जी सकता है।"

बुढ़िया जिस अपनत्व से बोल रही थी, उससे मूली और पासमान अभिभूत हो गये। वे बुढ़िया का आग्रह न टाल सके और उसके साथ चलने को तैयार हो गये। बुढ़िया प्रसन्न होकर बोली, "तुम गाड़ी बाँधो, मैं चाटियाँ अमूधी[1] रखकर अभी आती हूँ।"

उसका नाम विसालक्खी था। जल्दी-जल्दी चाटियाँ औंधी रखकर वह आयी और वे चल पड़े।

निकट ही उसका घर था। सड़क लाँघकर टप्पर गाड़ी एक गली में प्रविष्ट हुई। गली में दोनों ओर मड़ैयाँ थीं और उनके नीचे जुलाहे खड्डियों पर वस्त्र बुन रहे थे। यह गली जाकर एक बड़े मैदान में निकलती थी, जिसमें ढेरों नंग-धड़ंग बच्चे हुड़दंग मचा रहे थे। अनेक गलियाँ आकर इस मैदान में मिलती थीं। एक गली के सिरे पर कच्चे मकान की ओर संकेत करते हुए विसालक्खी बोली, "वोऽऽह कधौली[2] वाला जो घर है न, वोऽऽह, जिसके भीतर से केले के गाछ दिखायी दे रहे हैं, वही मेरा घर है।"

मैदान में स्थान-स्थान पर गन्दे पानी के पोखर बन गये थे जिनमें कुत्ते और सूअर लोट रहे थे। घरों के बाहर ढिंगरियों की बाड़ लगी थी। विसालक्खी का ही एक घर ऐसा था जिसकी गारे और पत्थर की कधौली थी। उसमें स्थान-स्थान से मिट्टी भुरकर निकल गयी थी।

ऊबड़-खाबड़ मैदान लाँघकर जब पासमान की टप्पर गाड़ी विसालक्खी के घर के सामने रुकी, तो आसपास के घरों की

१. अमूधी = अधोमुखी, औंधी।
२. कधौली = कन्धे तक ऊँची भीत।

की स्त्रियाँ झाँक-झाँककर देखने लगीं।

विसालक्खी के घर का बाहरी द्वार कधौली से दो हाथ ऊँचा था। एक किवाड़ नीचे से टूटा हुआ था। विसालक्खी ने साँकल खोलने को हाथ बढ़ाया, तो नीचे छिद्र में से एक कुत्ता निकलकर भागा। विसालक्खी का तो जैसे त्रास ही निकल गया। घबराकर बोली, "हाय, कुत्ता चक्की चाट गया..."

द्वार खोलकर वह भीतर दौड़ी गयी और फिर जल्दी लौट आयी। बड़ी सन्तुष्ट थी। बोली, कुत्ता चक्की तक पहुँचा ही नहीं था, क्योंकि चक्की पूर्ववत बोरों से ढकी हुई थी।

विसालक्खी ने बस्सी को अपनी गोद में ले लिया। खेमा को मूली ने उठाया। पासमान ने गाड़ी में से दो पोटलियाँ उठायीं। विसालक्खी के पीछे-पीछे देहरी लाँघकर वे भीतर प्रविष्ट हुए।

बड़ा-सा आँगन था, जिसके बीचों-बीच बदरी का पेड़ खड़ा था। दायें-बायें फूस के प्रसार थे। कधौली के साथ केले के गाछों का जमघट था। बायें प्रसार के कोने में अनाज की बोरियों के बीच चक्की थी और दायें प्रसार में दो खाटें खड़ी थीं। पेड़ के नीचे चार गागरें और एक बहँगी रखी थी।

वे अभी खड़े ही थे कि बहुत-सी स्त्रियाँ आ गयीं। पता नहीं कैसे, गली-मुहल्ले में यह बात फैल गयी थी कि विसालक्खी का खोया हुआ बेटा लौट आया है और अपने साथ बहुरिया भी लाया है। देखते-देखते आँगन में स्त्रियों का जमघट लग गया। विसालक्खी भी ऐसा व्यवहार कर रही थी जैसे सचमुच उसका अपना ही बेटा घर लौटा हो। उसके पैर धरती पर नहीं पड़ते थे। कितने बरसों बाद आज फिर उसके आँगन में बच्चों का स्वर गूँजा था।

देख-देखकर पासमान और मूली चकित थे। बाद में कहीं जाकर उन्हें पता चला कि विसालक्खी कितनी अभागी थी। कई

बरस पहले उसका पति दूर खेतों में कटाई करवाने गया था, परन्तु लौटकर नहीं आया। जब बहुत दिन बीत गये और उसका कोई समाचार नहीं मिला, तो उसका बेटा, जिसकी अवस्था उस समय बारह-तेरह बरस की थी, अपने पिता को खोजने निकला, परन्तु वह भी लौटकर नहीं आया। यह रहस्य आज भी बना हुआ था कि दोनों कहाँ चले गये—धरती उन्हें निगल गयी या आकाश खा गया। आज भी विसालक्खी अपने पति और पुत्र की राह देखती है। नगर-द्वार पर बटोहियों को पानी पिलाने के बहाने वह अपने बेटे और पति को खोजती है। वह जानती है कि एक न एक दिन वे अवश्य लौटेंगे।

साँझ तक स्त्रियों का ताँता लगा रहा। घर में खाने-पीने की वस्तुओं का ढेर लग गया।

विसालक्खी ने पेड़ के नीचे खाटें बिछा दी थीं। बस्सी सो गयी थी, इसलिए विसालक्खी ने बिनौलों की पट्टी बनाने की बात छोड़ दी। वह आकर मूली के पास बैठ गयी और बातें करने लगी। मूली ने जब झाँझर गाँव में सर्पहत्या की घटना सुनायी, तो विसालक्खी भरम करने लगी। बोली, "नागहत्या करके बहुत बुरा किया तुम लोगों ने। नागदेवता सराप देते हैं और फिर बड़ी विपत्ति आती है। तक्कसिला में भी बड़ी नागहत्या हुई थी। इसलिए यहाँ कोई न कोई विपदा आती ही रहती है। नगर-द्वार के बाहर एक मोहड़ा[1] है। कहते हैं उस थल पर राजा जनमजै[2] ने नागयग किया था। यगकुण्ड में ढेरों सप्प गिर-गिरकर भस्म हुए थे···तभी तो यहाँ के लोग सदा दुखी रहते हैं। कभी भुइँडोल आता है, कभी बाढ़···कभी कोई हल्ला बोलकर लूटपाट करता है···पीछे भुइँडोल आया था, तो सगरे कुओं का पानी

१ राजधानी के निकट स्थित गाँव। २. जनमेजय।

पंकिल हो गया था, सब ओर चूहे, सप्प दिखायी पड़ते थे...”

मूली का जी बैठने लगा। इतने दिनों पश्चात झाँझर गाँव की घटना फिर स्मरण हो आयी। रात को वे लेटे, तो उनकी आँखों के आगे वह घटना नाचती रही। मूली बार-बार करवट बदलकर पाँसमान को देखती थी। पासमान चुपचाप आकाश की ओर देख रहा था। बार-बार उसकी आँखों के आगे वह भयावह दृश्य उभरने लगता था। कभी वह देखता कि एक विशाल अग्नि-कुण्ड जल रहा है, पुरोहितों तथा ऋत्विजों की भीड़ लगी है। वे मन्त्रों का उच्चारण कर रहे हैं, आकाश से ढेरों सर्प आ-आकर अग्निकुण्ड में गिरते, चारों ओर नागों का क्रन्दन सुनायी पड़ता है, जलते हुए साँपों की चरबी की दुर्गन्ध चारों ओर फैल रही है... फिर उन बटमारों की डरावनी आकृतियाँ भी दिखायी पड़ने लगतीं और उसके शरीर में कँपकँपी दौड़ जाती।

इसी तरह करवटें बदलते, सोते-जागते वे लेटे थे। किसी समय मूली की आँख लग गयी। परन्तु अद्भुत सपनों में दिखायी देनेवाले भयानक दृश्य उसकी पुतलियों में नाचते रहे। एक बार उसने देखा कि वह किसी निर्जन स्थान पर एक बहुत बड़े पेड़ के नीचे खाट डाले लेटी है। तभी एक मोटा कटास दबे पाँव आया और एकाएक झपटकर पेड़ पर चढ़ गया। वहाँ एक घोंसले में झपट्टा मार उसने एक पक्षी को मुँह में दबोचा और पेड़ से कूदकर झाड़ियों में अदृश्य हो गया...

यह सपना देखकर वह इतनी डरी कि उसकी आँख खुल गयी। चारों ओर चन्द्रमा का प्रकाश फैला हुआ था और झींगुर बोल रहे थे। कुछ क्षण वह इसी तरह देखती रही। फिर आँखें मूँदकर लेट गयी। सम्भवतः भोर हो गयी थी, क्योंकि तिसालक्खी उठकर चक्की पीसने लगी थी।

विसालक्खी मुँह-अँधेरे उठ जाती थी। पहले चक्की पीसने बैठती, फिर घर-बाहर को झाड़ती-बुहारती और चौकि पर लेप करती। इतने में ही बूढ़ा उदकहार (उदहार अर्थात कहार) पुक्कुस आ जाता और बहँगी पर गागरें रखकर पहले नगर-द्वार पर विसालक्खी की चाटियों को भर देता और फिर दिन-भर धनी गृहस्थों के घर पानी पहुँचाता। सूरज निकलने के साथ विसालक्खी भी नगर-द्वार पर जा बैठती और दिन-भर बटोहियों को पानी पिलाती।

पासमान जाग गया था। लेटा-लेटा देख रहा था। पुक्कुस उदकहार आकर विसालक्खी के पास खड़ा बातें कर रहा था। सारे प्रसार में झींगुरों की झोंझिस गूंज रही थी। गलियों में कुत्ते भौंक रहे थे।

मूली की आँखों के आगे रह-रहकर कभी बटमारों की आकृतियाँ, कभी उस पागल पापरोगी का चेहरा नाचने लगता। वह भयभीत होकर दोनों कन्याओं को वक्ष के साथ सटा लेती। किसी तरह ये भयानक चेहरे अदृश्य होते, तो कटास मुँह में पक्षी को दबाये भागता हुआ दिखायी देता।

पुक्कुस उदकहार चला गया, तो विसालक्खी दूसरे कामों में व्यस्त हो गयी। कदली के गाछों में उसने पानी दिया। जब पौ फटने को थी, तो चलकर आयी और पासमान को जगाने लगी। वह तो पहले ही जाग रहा था। विसालक्खी खाट के निकट पैरों के बल बैठकर उससे बातें करने लगी। फिर बोली कि पुक्कुस उदकहार थोड़ी देर में आयेगा। पासमान उसके साथ जाकर बैलों को पानी दिखा लाये और उसके पश्चात वे बस्सी को किसी वैद्य को दिखाने ले जायेंगे।

मूली कन्याओं को दूध पिला रही थी। पासमान उठकर बैठ गया और कृतज्ञता-भरी दृष्टि से इस दयालु बुढ़िया का चेहरा

देखने लगा।

आसपास कुर्वकुट बोल रहे थे। धुएँ का कसैलापन फैला हुआ था। उजाला होते-होते चिड़ियाँ बोलने लग गयीं और फिर पुक्कुस कहार भी आ गया। ठिगने शरीर का वह दुबला-पतला व्यक्ति था। देखने में बड़ा निरीह-सा लगता था। घुटनों तक उसने जँघिया और ऊपर कुर्ती-सी पहनी हुई थी। सिर और दाढ़ी-मूँछ के बाल पोटा-पोटा बड़े और दूध की नाईं श्वेत थे। इस अवस्था में भी वह बड़ा फुर्तीला और आलस्यहीन था।

पुक्कुस विसालक्खी के मुख से मूली और पासमान के विषय में सब सुन चुका था। इसलिए सीधा पासमान की खाट के पास आकर बोला, "भैया, बड़ी ठोहर वेला में आये हो। सारी राजधानी में अफरा-तफरी मची हुई है। कोई किसी का सगा नहीं। सब मनमानी करते फिरते हैं—क्या राजा के सेवक और क्या राजा के सैनिक। कल किसी ने राजा के महल में ही आग लगा दी। यह तो समझो कि बचाव हो गया, नहीं तो यह समझो कि काठ का महल, सारा का सारा, जलकर कोयला हो जाता..."

पासमान उठा और पुक्कुस के साथ बैलों को कुएँ पर पानी दिखाने ले गया। कुआँ एक गली के सिरे पर था। उसके निकट घास और झाड़ियोंवाला मैदान था। बैलों को पानी दिखाकर चरने के लिए छोड़ दोनों एक कीकर के नीचे बैठकर बतकही करने लगे।

पुक्कुस बता रहा था कि किस तरह तक्कसिला के बूढ़े राजा की मृत्यु की सूचना मिली। बोला, "भैया, पासमान! प्रातःकाल मैं इसी कुएँ पर बहँगी भरने आया था। यह उस दिन की बात है...समझो कि फागुन लग चुका था। वोऽऽह जो हट्टी दिखाई

पड़ती है न, वोह सामनेवाली, वोऽऽह !" पुक्कुस ने हाथ उठाकर एक कच्चे मकान के प्रसार की ओर संकेत किया जिसके नीचे दो हाथ ऊँचा चबूतरा बना हुआ था, पीछे काले काठ के किवाड़ थे। पुक्कुस बता रहा था, "...उस दिन सवेरे जब मैं बहँगी लेकर आया, तो हट्टी के चबूतरे पर दस-पन्द्रह सैनिक पीनक में थे। तुम मानोगे नहीं, मैं तो देखते ही चकित रह गया कि ब्रह्मवेला में भी ये लोग ऐसा कुकर्म करते हैं। किसी को कोई सुध-बुध नहीं थी और सगरे सैनिक आँखें मूँदे, सिर लटकाये मूर्तियों की तरह बैठे थे। एक सैनिक दोनों हाथों से खम्भे को पकड़े पैर नाली में लटकाये बैठा था। आने-जानेवाले बच-बचकर जाते थे। मैं भी हाथों से तो पानी की गागर भर रहा था और आँखों से उन्हें देख रहा था। तभी गली में घोड़े की टापें सुनायी पड़ीं। सिर उठाकर जो मैंने देखा, तो भूरे घोड़े पर बैठा एक हरकारा आता दिखायी दिया। अब तुम समझो कि यह हरकारा जब हट्टी के निकट पहुँचा, तो एक सैनिक ने अचानक सिर उठाकर देखा। फिर वह चिल्लाकर बोला, 'ऐ, कौन है? कहाँ जाता है? कहाँ से आया है?'..."

पुक्कुस कहार एक क्षण के लिए रुका और फिर बोला, "सैनिक उठकर खड़ा होने का जतन करने लगा। वह लड़खड़ाता हुआ उठा और खम्भे को पकड़कर खड़ा हो गया। उसका पटका खुल गया था और लम्बे बालों का ढीला-ढाला जूड़ा उसके मस्तक पर झूल रहा था—ऐसे जैसे साँप का फन हो..."

पासमान आँखें फाड़े देख रहा था।

पुक्कुस कहार अपनी धुन में बोलता जा रहा था, "...उसने लाल कंचुक के ऊपर जो कायबन्ध कसा हुआ था, वह खुल गया था और कटार नीचे गिर पड़ी थी। उसकी मैली धोती की लाँग खुलकर चबूतरे पर रपट रही थी और अपना कड़ेवाला बायाँ

हाथ हिलाते हुए वह अगड़म-बगड़म बोल रहा था···हरकारे ने सैनिक को चिल्लाते देख अपना घोड़ा रोक लिया था। बीसेक बरस का युवक था वह। उसके माथे पर नीली चीर-चीरिका[1] बँधी हुई थी, जिसके दोनों छोर उसकी ग्रीवा के पीछे चिड़िया के पंखों की तरह लहरा रहे थे। इसी चीर-चीरिका में वह सन्देश लिखा था जिसे वह राजमहल पहुँचाने आया था। चण्डातक के ऊपर उसने कायबन्ध कसा हुआ था। घोड़े को मोड़कर वह ड्योढ़ी के आगे आकर खड़ा हो गया और बोला, मैं सन्देशवाहक हूँ, राजा की ड्योढ़ी पर जा रहा हूँ···"

पुक्कुस ने अपने सिर के बालों पर हाथ फेरा और पासमान की ओर अचरज-भरी आँखों से देखते हुए कहा, "भइया, पासमान ! जानते हो तब क्या हुआ ? बस, उसके मुँह से यह बात निकलने की देर थी कि सैनिक आँखें फाड़े देखने लगा और फिर जैसे घोषणा के स्वर में बोला, 'अरे, सुनो, राजा का हरकारा है, रे ! अपना नाम रख्ख···रख्···रक्खक बताता है··· सि···सिन्धु पार से आया है···राजा की ड्योढ़ी पर जा रहा है···सन्देश है इसके पास'···"

पुक्कुस बड़े नाटकीय ढंग से यह सब बखान कर रहा था। पासमान उत्सुकता से सुन रहा था। पुक्कुस बोला, "राजा की ड्योढ़ी और सन्देश का नाम सुनते ही सब सैनिक जैसे चौंक-चौंककर जागने लगे और चौकन्ने होकर बैठ गये। एक और सैनिक उठकर खड़ा हो गया। उसकी कटि में तलवार खुँसी हुई थी। वह इस तरह देख रहा था जैसे उसे भलीभाँति सुझायी न देता हो। फिर नशीली आँखों से देखते हुए बोला कि हमारी आज्ञा लिए बिना कइसे जायेगा, रे ?···कहते-कहते उसका निचला

१ काड़े का फीता।

होंठ लटक गया और उसके गन्दे विरल दाँत और काले मसूड़े दिखायी देने लगे। वह खड़ा-खड़ा बक ही रहा था कि एकाएक बैठे हुए सैनिकों में से एक चिल्ला पड़ा, 'लक्खण! प्यास लगी है, रे'...''

पुक्कुस ऐसे देख रहा था जैसे उस घटना को प्रत्यक्ष घटते हुए देख रहा हो। फिर बोला, "भइया, पासमान! उसकी बात सुनते ही मेरे तो प्राण ही निकल गये। सबसे पहले जिस सैनिक ने हरकारे को रोका था, स्यात उसी का नाम लक्खण था, क्योंकि उसने ही मुझे आज्ञा देते हुए कहा, 'ओ रे उदकहार! कुएँ का...सारा पानी...साऽऽरा पानी, सारा का साऽऽऽरा पानी ला... यहाँ ला...पहले मुझे पिला। फिर...फिर चाणूर को पिला। फिर शेष जनों को पिला...पिला'...''

पुक्कुस जैसे साँस लेने को रुका और फिर बोला, "उसे देखकर तो मेरे हाथ-पैर फूलने लगे। मुझे पता था कि अब ये मुझे दुखी करेंगे। मदक पीनेवाले मदकची की प्यास तूने नहीं देखी, पासमान! पानी पीता जाता है, पीता जाता है और अघाता नहीं। मैं उसकी बात की अवहेलना भी कैसे करता! गागर उठाकर मैं डरते-डरते उनके निकट गया। सोच रहा था कि आज कुशल नहीं। ज्योंही मैं निकट गया कि अचानक लक्खण नामक सैनिक ने झटके से गागर मेरे हाथ से छीन ली और फिर जैसे हरकारे को भूलकर वह अपने साथियों को पानी पिलाने लगा। वे आधा पीते थे, आधा गिराते थे। इस तरह जीभ लपलपाकर पी रहे थे जैसे प्यासे कुत्ते पोखर के किनारे पानी पीते हैं।"

पुक्कुस के माथे पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आयी थीं। वह बोला, "हरकारा स्यात खिसक जाने की सोच रहा था, क्योंकि सैनिकों को कोई सुध-बुध नहीं थी। ज्योंही उसने घोड़े को मोड़ा कि एक सैनिक चिल्ला पड़ा, 'लक्खण, जाता है...बाँधकर

रख।'...मैं भी सोचने लगा कि अब हरकारे की कुशल नहीं। इसकी दुर्दशा करेंगे। लक्खण के हाथ से गागर छूटी और लुढ़कती हुई नीचे नाली में जा गिरी। वह झूमते हुए, अधखुली आँखों से खड़ा देख रहा था। फिर एकाएक चिल्लाया, 'कहाँ जाता है, रे...'

"घोड़ा झुरझुरी कर रहा था। हरकारा खड़ा का खड़ा रह गया। सारी स्थिति समझकर अनुनय-विनय के स्वर में बोला, 'मैं राजा का हरकारा हूँ। राजा की ड्योढ़ी पर सन्देश पहुँचाना है। विलम्ब हो गया, तो कुशल नहीं। जाने दो...'

"लक्खण खड़ा-खड़ा देख रहा था, इस तरह जैसे हरकारे को तौल रहा हो। फिर धीरे-धीरे, लड़खड़ाते हुए वह चबूतरे से उतरा और गिरता-पड़ता हरकारे के घोड़े के साथ आकर खड़ा हो गया और मुँह उठाये देखने लगा। उसकी दृष्टि हरकारे के सिर पर बँधे सन्देश पर लगी थी। फिर उसने बड़े शान्त-संयत स्वर में कहा, 'ला, सन्देश खोलकर हमें दिखा...'

"सुनने की देर थी कि हरकारे का मुँह फक पड़ गया। वह फटी-फटी आँखों से देखते हुए बोला, 'युवन! यह राजा का सन्देश है।' परन्तु यह बात हरकारे के मुँह में ही थी कि लक्खण ने एकाएक हाथ बढ़ाकर हरकारे के सिर पर बँधा सन्देश उतार लिया और ठहाका मारा...हरकारे को तो जैसे साँप ही सूँघ गया। राजा के सन्देश को इस तरह छीनना बहुत बड़ा अपराध है। फिर सन्देशवाहक को भी दण्ड मिलता। हरकारा सन्देश वापस पाने के लिए छटपटा रहा था, परन्तु उसकी एक नहीं चली। सन्देश हाथ में आते ही लक्खण के साथ दूसरे सैनिक भी चिल्लाने लगे। जैसे कोई दुर्लभ वस्तु उनके हाथ लग गयी हो। मुँह से न्यारे-न्यारे स्वर निकालते हुए वे उछल रहे थे। उछलते-कूदते हुए वे गली में आ गये और लक्खण को घेरकर खड़े हो

गये। लक्खण सन्देश हाथ में पकड़े बोल रहा था, 'ऐ भाई, कौन पढ़ेगा?'

"वे एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। उनमें कोई पढ़ा-लिखा तो था नहीं। लक्खण ने चाणूर का नाम लिया। चाणूर ने सत्तुक का नाम लिया। सत्तुक ने निन्दक का नाम लिया? निन्दक ने दुम्मुख का और दुम्मुख ने हाथ में मुँगरी हिलाते हुए निन्दक की ओर देखा और कहा, 'भुजंगे, तू पढ़...'

"निन्दक बगलें झाँकने लगा। एकाएक चाणूर नाम के सैनिक ने सबको शान्त करते हुए कहा, 'ठहर जाओ। तुम सब बज्जर मूर्ख हो। सन्देश पढ़ना भी नहीं जानते! हटो पीछे...' कहते-कहते वह हट्टी के चबूतरे पर चढ़ गया और द्वार की साँकल पकड़कर खट-खटाने लगा। हट्टीवाला भीतर दुबका बैठा था। जब चाणूर किवाड़ तोड़ने पर ही तुल गया और चिल्लाने लगा, तो हट्टीवाले ने डरते-डरते थोड़ा किवाड़ खोला और सिर निकालकर कहा, 'अब मेरे पास कुछ नहीं है...' और यह कहते-कहते उसने किवाड़ बन्द करने चाहे, परन्तु चाणूर ने धक्का मारकर किवाड़ पीछे धकेल दिये और चिल्लाकर कहा, 'अबे मारता क्यों है! ले, राजा का सन्देश पढ़...'

"राजा का नाम सुनते ही हट्टीवाले की तो सिट्टी-पिट्टी ही गुम हो गयी। डरते-डरते, काँपते हाथों से उसने सन्देश पकड़ा और चबूतरे पर खड़ा होकर पढ़ने लगा।

"कपड़े पर काले रंग से सन्देश लिखा था। हट्टीवाला फटी-फटी आँखों से देख रहा था। जैसे उसके गले में कुछ अटक गया था और आँखें अचरज और भय से बाहर निकली पड़ती थीं। उसके मुँह का एक रंग आता था, एक जाता था। फिर एकाएक न जाने क्या सोचकर वह चबूतरे से उतरा और पागलों की तरह चिल्लाने लगा, 'राजा ने आत्महत्या कर ली है, राजा ने

आत्महत्या कर ली है…'

"सुनते ही मेरे तो प्राण ही निकल गये," पुक्कुस भयभीत आँखों से देखते हुए बोला। "कहीं हट्टीवाला सचमुच पागल तो नहीं हो गया ! यही सोच-सोचकर मैं खड़ा देख रहा था। किसी को विश्वास ही नहीं होता था, परन्तु हट्टीवाले के मुँह से राजा की मृत्यु की बात सुनते ही सैनिक घबराये और ऐसे देखने लगे जैसे उन्हें भागने की राह दिखायी न पड़ती हो। वे हड़बड़ी में अपने अस्त्र-शस्त्र सँभालने लगे। फिर नगरकोट की ओर भागे। हट्टी-वाला हाथ में सन्देश पकड़े जैसे पागलों की तरह मुँह बाये खड़ा देख रहा था। हरकारे ने अवसर देखा और झटककर सन्देश उसके हाथ से छीन लिया। फिर घोड़े पर बैठकर वह सरपट भागा।

"पलक झपकने की देर में यह सब हो गया।" पुक्कुस कहार कह रहा था, "मेरी तो टाँगें ही काँपने लग गयी थीं। हट्टीवाला भी ऐसे खड़ा था जैसे उसके हाथों के तोते उड़ गये हों। दूर जाती हुई घोड़े की टापें सुनायी पड़ रही थीं। फिर एकाएक हट्टीवाला इस तरह चिल्लाने लगा, जैसे कोई भूली-बिसरी बात स्मरण हो आयी हो उसे। वह बोला, 'राजा ने आत्महत्या की है, राजा ने आत्महत्या की है…'

"मेरी गागर नाली में पड़ी थी," पुक्कुस बता रहा था। "मैं डरते-डरते उठकर गया, गागर उठायी, बहँगी पर रखी और वहाँ से भाग आया…"

पासमान के बैल चरते हुए बहुत दूर निकल गये थे। दोनों उठे और बैलों के घर की ओर चल पड़े।

चलते हुए पुक्कुस कहार बता रहा था, "तुम नहीं समझोगे, पासमान ! फिर कितनी जल्दी यह समाचार सारे तक्कसिला में

फैल गया। सब चकित थे, राजा ने आत्महत्या क्यों की? किसी को विश्वास नहीं होता था। और जब राजमहल में यह समाचार पहुँचा, तो सारे राजकुल में कुहराम मच गया। रनिवास की स्त्रियाँ पछाड़ खा-खाकर विलाप करने लगीं। रोती, कुरलाती हुई रानियों को दासियाँ सँभाल नहीं पा रही थीं। सन्ध्या होते-होते सारा राजमहल ऐसे मौन हो गया जैसे प्रेतों का निवास हो। दास-दासियाँ दीपक जलाना भूल गयीं। रानी ने विधवा का वेष धर लिया। प्रथा के अनुसार विधवा रानी पट्टांशुक पहन, गले में लाल कण्ठसूत्र और शरीर में कुंकुम का अंगराज करके, गले में पैरों तक लटकती हुई माला पहनकर पति के चित्र के सामने बैठी विलाप करने लगी... और उपराज भी एक खिड़की की शिला पर सिर रखकर हा तात, हा तात! कहते हुए बिलखने लगा। परन्तु कहते हैं, सारा दोष उपराज का ही था..." कहते-कहते पुक्कूस कहार ने अपना स्वर धीमा कर लिया। फिर बोला, "वास्तव में राजा की मृत्यु का कारण वह स्वयं था। उपराज ही। उसका नाम आम्भि है। केकड़े की भाँति राजपुत्र भी अपने पिता को खा जाते हैं। राज-सिंहासन पर अब उसे ही बैठना है। पर वह है बड़ा क्रोधी और हठी। किसी राजा के साथ उसकी बनती नहीं है। आये दिन लड़ाई मोल लेता है। क्रोध में आकर ही जनमेजय ने ब्राह्मणों से वैर ठाना था और फिर वह उन्हीं के श्राप से नष्ट हुआ था। इस क्रोधी की भी यही दशा होगी। अहंकारी इतना है कि किसी की एक नहीं सुनता। मनमानी करता है। अभिमान के कारण ही रावण ने सीता का हरण किया था। अभिमानी दुर्योधन भी इसीलिए नष्ट हुआ, पासमान! यह आम्भि अभी तक नहीं चेता, पास-पड़ौस के सभी राजाओं से इसका वैर है। तक्कसिला की सीमा के साथ उत्तर में उरशा का राजा है। उसके साथ ऊपर पर्वत पर अभिसार राजा राज करता है। फिर

वितस्ता और इरावती नदी के बीच पोरउ का राज है। इन तीनों के साथ आम्भि की शत्रुता है। पोरउ राजा के साथ तो इसका ईंट-घड़े का वैर है। पर पोरउ से आम्भि इस तरह डरता है जैसे कौआ ढेले से। उसके विरुद्ध आंभि ने कई बार षड्यन्त्र किये। कभी अपने गुप्तचर भेजकर पोरउ के देश के तालाबों और कुओं में विष डलवाने का जतन किया, कभी उसके ढोर-डंगरों को हँकवा लाया···यह सब बूढ़े राजा को प्रिय नहीं था। पर आंभि तो सदा पोरउ को नीचा दिखाने पर तुला रहता था। अपने पिता की भी नहीं सुनता था। अब समुद्र के उस पार से एक म्लेच्छ राजा आ रहा है। बड़ी भारी सेना है उसके साथ। आंभि उसे यहाँ बुलाना चाहता है—आसपास के सब राजाओं को नीचा दिखाने के लिए। और सोचता है कि म्लेच्छ राजा के लौट जाने के पश्चात राजसूय यज्ञ करेगा, चक्रवर्ती राजा कहलायेगा। मरने से पहले बूढ़े राजा ने बहुतेरा समझाया कि आग लगती है, तो सब पेड़-पौधों को जलाकर राख कर देती है। वह यह नहीं देखती कि इसे जलाना है, इसे नहीं। सुमेरु पर्वत हिला देनेवाला पवन क्या पत्तों के ढेर को नहीं हिलायेगा! परन्तु आंभि के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगी। यही नहीं, उसने अपने बूढ़े पिता को राजा के पास उपहार लेकर जाने को भी विवश किया। उसे जाना पड़ा। और कोई चारा नहीं था। पर सुनते हैं कि उसे इतनी ग्लानि हुई कि लौटती बार उसने सिन्धु नदी में कूदकर प्राण दे दिये। उसके साथ गयी सेना कहीं लौटी। सबने विदेशी राजा के पास चाकरी कर ली। उस दिन वह हरकारा राजा की मृत्यु का समाचार देने ही आया था··· इसीलिए तो मैंने कहा था, पासमान, कि बड़े दुर्दिन में आये हो तक्कसिला···यहाँ आग लगनेवाली है। बड़ी ठोहर वेला में आये हो···"

विसालक्खो थोड़ी देर के लिए बाहर गयी थी। घर में अकेली मूली थी और दोनों कन्याओं के साथ खाट पर चिन्तित-सी बैठी थी। बस्सी दूध पीकर सो गयी थी। खेमा लेटी थी। मूली उसकी ओर देखते हुए न जाने क्या-क्या सोच रही थी। एकाएक खेमा धीमे से मुस्कायी और जल्दी-जल्दी हाथ-पैर मारने लगी, तो मूली को लगा जैसे उसके भीतर आनन्द का कोई सागर उमड़ पड़ा है। खेमा के दन्तुलियों से रहित खिलखिलाते चेहरे से उसकी दृष्टि हटाये नहीं हटती थी।

दिन चढ़ आया था। प्रातःकालीन वातावरण शीतल और सुखद था। चारों ओर चिड़ियों की गूँज मची हुई थी। छत पर कबूतर बोल रहे थे। कुछ चिड़ियाँ प्रसार के नीचे तिनके-धागे ला-लाकर घोंसले बनाने में व्यस्त थीं। अण्डे-बच्चे देने के दिन अब दूर नहीं थे। इसलिए ये पक्षी जहाँ भी स्थान पाते थे, झट अपना नीड़ बनाने में जुट जाते थे।

मूली प्रतीक्षा में बैठी देख ही रही थी कि अचानक उसकी दृष्टि जाकर आँगन के पेड़ पर अटक गयी। शाखाओं के मध्य एक अस्त-व्यस्त-सा घोंसला था और उसमें एक अकेला पण्डुक सहमा-सा बैठा था। उसे देखते ही मूली का चित्त व्याकुल हो गया। वनविलाव वाला वह भयानक सपना उसकी आँखों के आगे नाचने लगा। मूली को लगा कि उसने सपना नहीं, वह घटना अपनी आँखों से देखी थी और सचमुच कोई वनबिलाव आया था और घोंसले में बैठे पण्डुक को मुँह में दबोचकर ले गया था। तभी तो यह अकेला पुण्डुक चुपचाप बैठा था, नहीं तो इस वेला में हुकूकूकू···करके बोल न रहा होता!

देख-देखकर मूली की आँखों में आँसू उमड़ आये। तभी बाहर गली में कुत्तों की लड़ाई छिड़ गयी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कोई चार-पाँच कुत्ते एक साथ मिलकर किसी कूकूरे पर टूट पड़े

थे और वह कूँ-कूँ करते हुए चीख रहा था ।

कुत्तों में जैसे भयंकर संग्राम छिड़ गया । सारी बस्ती उनकी चों-चों से गूँज रही थी । बस्सी जाग गयी और रोने लगी । मूली ने उसे उठाकर कन्धे से लगाया और थपथपाकर सुला दिया। मूली अकेली बैठी डर रही थी । घोंसले की ओर आँखें उठाकर भी देखने का साहस नहीं करती थी ।

थोड़ी ही देर में गली में बैलों की गलघण्टियाँ सुनायी पड़ीं और पुक्कुस और विसालक्खी के साथ पासमान ने देहरी के भीतर पैर रखा । मूली की जान में जान आयी । वे बातें करते हुए आ रहे थे । विसालक्खी प्रसन्न थी । वह श्रीनन्दक नाम के एक वैद्य का पता-ठिकाना पूछकर आयी थी । आते ही बोली कि अभी तैयार हो जाओ, बस्सी को जाकर दिखाना है ।

चक्की को भली भाँति ढककर विसालक्खी ने द्वार बन्द किया। आगे-आगे विसालक्खी गोद में बस्सी को उठाये चल रही थी। खेमा मूली की गोद में थी । पीछे पासमान और पुक्कुस धीरे-धीरे बातें करते हुए आ रहे थे ।

मूली की उदास आँखों के सामने घोंसले में बैठे पण्डुक का दृश्य अब भी नाच रहा था ।

मैदान के किनारे-किनारे चलते हुए वे एक गली में प्रविष्ट हुए । यह तेलियों की बस्ती थी । मार्ग के दोनों ओर लिपे-पुते कच्चे मकान थे और उनके आँगनों में लगी नीम की टहनियों ने गली में वितान-सा बना दिया था । गली लम्बी और धनुषाकार थी । उसे पार करके वे एक हाट में पहुँचे । वहाँ बड़ी गहमा-गहमी थी । कोलाहल इतना था कि किसी की बात सुनायी नहीं पड़ती थी । गुदड़ी की छँटाई करनेवाली स्त्रियों ने झगड़-

झगड़कर सारे हाट को सिर पर उठा रखा था।

मूली और पासमान अचरज से यह सब देख रहे थे। जीवन में पहली बार उन्होंने इतना बड़ा हाट और इतनी गहमागहमी देखी थी। राह में उन्हें एक नकटा अपंग आदमी मिला। वह चार पहियोंवाले पटड़े पर बैठा था, एक हाथ भूमि पर टेक-टेककर पटड़े को आगे सरकाता था और हाथ फैला-फैलाकर भीख माँगता था।

विसालक्खी श्रीनन्दक वैद्य का पता-ठिकाना पूछने के लिए एक पीपल के नीचे शिवमन्दिर के आगे रुकी और वहाँ बैठे एक वृद्ध से बात करने लगी। विसालक्खी को वह बता ही रहा था कि एक लड़का उछलता हुआ आया और हाथ की छड़ी से शिव-मन्दिर की चौखट में लटके घण्टे को छेड़ने लगा। वृद्ध ने झिड़ककर उसे भगाया और विसालक्खी से कहा, "आगे गुड़मण्डी है। उसी में जाकर श्रीनन्दक की हवेली पूछ लेना…"

हाट का जैसे कोई अन्त नहीं था। कहीं ताले-जन्दरे बिक रहे थे, तो कहीं बाँसुरी बेचनेवाला बाँसुरी बजा रहा था। कहीं छुरियाँ-चाकू और चिमटे, तो कहीं पीतल और काँसे के बासन बिक रहे थे। स्थान-स्थान पर वल्लूर (सूखा मांस) और सूखे मेवे बेचने-वालों के फड़ लगे थे। चौक में छता हुआ कुआँ था जिसके चारों ओर बने चबूतरे पर बहुत-से लोग ऐसे बैठे देख रहे थे जैसे संसार में इन्हें कोई काम न हो। निकट ही एक स्त्री टोकरे में केले रखकर बेच रही थी।

आगे उन्हें लुहारों की बस्ती मिली। भट्ठियों में लोहा तपा-कर वे ठक-ठक खूँटे और कुल्हाड़ियाँ बना रहे थे। फिर खुला हाट था जिसके दोनों ओर भाँति-भाँति का माल बेचनेवालों के

फड़ लगे थे। कहीं हल्दी के ढेर थे। कहीं धनिया बिक रहा था, कहीं अनपिसी सूखी लाल मिर्च के और कहीं पिसी हुई मिर्च के ढेर लगे थे। यहाँ पर एक सुनार की दुकान पर मूली की दृष्टि गयी, जो फुँकनी से चाँदी पिघला रहा था। देखते ही मूली को अपने गोखरू का स्मरण हो आया और विचक्खण को वह कोसने लग गयी।

गुड़ की महक आने लगी थी। विसालक्खी बोला, "कन्या को चीवर से ढाँप रखो। जहाँ गुड़ होता है, वहाँ भिड़-ततैया भी होते हैं।"

जल्दी ही वे गुड़मण्डी में पहुँच गये। दोनों ओर गुड़ की हट्टियाँ थीं। बोरियों में और खुले में अखरोट जितने गुड़ के ढेलों के ढेर लगे हुए थे। मूली और पासमान ने इससे पहले गुड़ की इतनी छोटी रोड़ी नहीं देखी थी। उनके गाँव में तो बड़ी-बड़ी भेलियाँ बनती थीं। मण्डी में इतनी भीड़ थी कि कन्धे से कन्धा छिलता था और चारों ओर भिड़ततैये उड़ रहे थे। मूली ने सावधानी से खेमा के ऊपर चीवर डाल दिया और फिर आसपास चकित आँखों से देखते हुए चलने लगी।

भीड़ में राह बनाते हुए वे धीरे-धीरे जा रहे थे। किसी से पूछने पर पता चला कि आगे दायीं ओर जो गली मुड़ती है, उसके सिरेवाला मकान ही श्रीनन्दक की हवेली है।

सामने से एक हाथी झूमता हुआ आ रहा था। उसके बड़े-बड़े दाँत सोने से मढ़े हुए थे। गले में बँधा घण्टा टनटना रहा था। देखकर मूली बहुत डरी, परन्तु वह सीधा निकल गया और वे गली में मुड़ गये।

श्रीनन्दक की हवेली की बाहरी भीत दस हाथ ऊँची थी और

चूने से पुती हुई थी। उसका प्रवेश-द्वार इतना चौड़ा था कि उसमें से हाथी-ऊँट भी प्रविष्ट हो सकते थे।

विसालक्खी और पुक्कुस के पीछे-पीछे मूली और पासमान ने भीतर पैर रखा। बूढ़ा श्रीनन्दक ड्योढ़ी के एक कोने में खिड़की के पास चौड़ी चौकी पर बैठा था। उसके हाथ में मोर-पंखी थी। शरीर पर एक निर्मल स्वच्छ धोती और यज्ञोपवीत था। माथे और वक्ष पर चन्दन था। घुटे हुए सिर पर चुटिया में गाँठ लगी थी।

श्रीनन्दक ने उन्हें बड़े स्नेह और आदर से बैठाया। चटाई पर बैठते हुए विसालक्खी बताने लगी कि किस प्रकार इस जन्मान्ध कन्या के ये माता-पिता सैकड़ों गावुत यात्रा करके तक्क-सिला पहुँचे हैं। मूली ने सिर नीचा किये-किये ही कहा, "बड़ी आस लेकर आये हैं।..."

श्रीनन्दक ने बस्सी को अपनी चौकी की श्वेत चादर पर लिटा लिया। चारों जन उत्सुक आँखों से देख रहे थे। श्रीनन्दक बार-बार बस्सी की पुतलियों को उघाड़कर देखता था, जैसे कोई बात उसकी समझ में न आ रही हो। फिर बस्सी को उलटा लिटाकर वह उसकी रीढ़ की परीक्षा करने लगा। उसके सिर, खोपड़ी और ग्रीवा की एक-एक नस को उसने टटोल-टटोलकर देखा। सब देखकर श्रीनन्दक ने बस्सी को विसालक्खी की गोद में दे दिया। सब उसका मुँह देख रहे थे। वह उनसे तरह-तरह की बातें पूछने लगा—जैसे कुल में यह पहली जन्मान्ध कन्या है अथवा कोई और भी है। उनकी गोद में जो कन्या है, उसकी आँखें कैसी हैं। पासमान कनखियों से आगे-पीछे देखकर बता रहा था। पुक्कुस ने कहा, "हाँ, हाँ, निस्संकोच होकर बताओ।"

पासमान ने विस्तार से बताया कि उनके कुल में कोई और जन्मान्ध नहीं है। श्रीनन्दक ध्यान से सुनते हुए देख रहा था।

अन्त में अप्रिय बात कहने के लिए जैसे वह तैयार हो गया। फिर उसने जो बात कही, उसे सुनते ही वे जैसे गहरे कुएँ में जा गिरे। चारों ओर उन्हें अँधेरा ही अँधेरा दिखायी देने उगा। श्रीनन्दन ने बड़े शान्त स्वर में कहा, "इस जन्मान्ध कन्या की आँखों में अब ज्योति नहीं आ सकती!"

पासमान और मूली की आँखों में आँसू आ गये। क्या यही सुनने के लिए उन्होंने इतनी लम्बी यात्रा की थी? इतने कष्ट और विपत्तियाँ झेली थीं? उनकी दशा एक ऐसे प्यासे जन जैसी हो रही थी जो पानी पीने बहुत नीचे नदी पर उतरकर गया हो और पानी पीने ही वाला हो कि अचानक कोई आकर बाँह से पकड़कर उसे दूर खड़ा कर दे।

हताशा के गहरे सागर में डूबते-उतराते हुए वे श्रीनन्दन के घर से निकले। उन्हें लग रहा था, जैसे उनकी टाँगों के साथ किसी ने चक्की के भारी पुड़ बाँध दिये हों। मूली की दशा देखी नहीं जाती थी। वह, बस, एक ही रट लगाये थी कि यह सब नागदेवता के कोप का ही फल है, यह सब नागहत्या के कारण ही हुआ है...

घर पहुँचते ही मूली का धैर्य छूट गया। वह बैठकर विलाप करने लगी। विसालक्खी उसे समझाती थी, "बेटी, धीरज धर, अश्रु न बहा।" परन्तु मूली जैसे शोक-सागर में डूबी बार-बार कहती थी कि यह सब नागदेवता के कोप का फल है...

घर में लोगों का ताँता लग गया। हर कोई सहानुभूति जताने आ रहा था। पासमान अलग पेड़ के नीचे सिर पकड़े बैठा था और सूनी-सूनी आँखों से देख रहा था। ऊपर घोंसले में से पण्डुक पता नहीं किस समय उड़कर चला गया था!

निराश और दुखी मनुष्य तरह-तरह की कल्पनाएँ करने लगता है। प्रत्येक बात में वह अनिष्ट ही देखता है। साँझ को मूली ने केले के गाछों की ओर देखा, तो एकाएक वह सहम गयी। एक पेड़ पर एक अनखुला, लम्बा और गोल पत्ता ऐसे लगता था जैसे तीन हाथ लम्बा साँप केले के गाछ के भीतर घुस रहा हो। देख-देखकर मूली को रोमांच हो आया। गामणी के घर मे घटी वह दुखदायी घटना जैसे प्रत्यक्ष उसकी आँखों के सामने नाचने लगी। मूली को लग रहा था जैसे पासमान दौड़कर इस 'साँप' को भी पकड़ लेगा और उसे केले के गाछ में घुसने नहीं देगा।...फिर उससे अधिक देखा नहीं गया। उसने आँखें मूँद लीं।

परन्तु उसे चैन नहीं पड़ी। रात को उसने फिर सपना देखा... आवेश में आकर वह केले के गाछों को उखाड़-उखाड़कर फेंक रही है। चैन उसे तभी आया, जब उसने एक-एक पेड़ को उखाड़कर फेंक दिया। पर जब उसने नीचे देखा, तो क्यारी में नन्हे-नन्हे गाछ फिर उगते आ रहे थे। मूली ने फिर कुदाली उठा ली और सारी धरती को गहरे खोदना आरम्भ किया। कुदाल ठन-से कठोर धरती पर लगी, तो मूली हड़बड़ाकर उठ बैठी और देखने लगी...। चारों ओर घुप्प अँधेरा था। आँगन में और प्रसार के नीचे रात्रिकालीन कीड़े-मकोड़े बोल रहे थे। केले के गाछ दीवार से ऊँचे खड़े थे और हवा में पत्ते डोल रहे थे।

वह चुपचाप लेट गयी और आँसू बहाने लगी।

अब तो उसने जैसे खाट ही पकड़ ली। रो-रोकर उसकी आँखों का पानी भी चुक गया। दो दिन बीत गये। उसने अन्न क्या, जल तक ग्रहण नहीं किया।

विसाल्खी न जाने कहाँ-कहाँ पूछती फिरती थी। पासमान

और मूली को भनक तक न पड़ी कि विसालक्खी उनके दुख में कितनी दुखी और सन्तप्त थी। उसने राजधानी के एक-एक वैद्य का द्वार खटखटाया। परन्तु सभी कहते कि जब श्रीनन्दक वैद्य का वश नहीं चला, तो धन्वन्तरि वैद्य भी इस जन्मान्ध कन्या की आँखों में ज्योति नहीं भर सकता।

इधर, पुक्कुस कहार प्रतिदिन बड़ी डरावनी बातें सुनाता था। उसकी बातों से लगता था कि राजधानी की स्थिति बिगड़ती जा रही है। जिस दिन राजा के महल में आग लगाने का यत्न किया गया, उस दिन से ही रात-दिन दण्डयुधाधर गली-मुहल्लों में अस्त्र-शस्त्र लिये घूमते रहते थे।

मूली और पासमान सोचने लगे थे कि अब राजधानी में उनके लिए क्या धरा है! समय रहते उन्हें यहाँ से निकल जाना चाहिए। तक्षशिला में अब एक दिन भी विताना उन्हें व्यर्थ और निष्प्रयोजन लगता था। परन्तु दुविधा यह थी कि खेमा का क्या करेंगे। यदि वे यहाँ से चलने का निश्चय करते हैं, तो खेमा किसे सौंपकर जायेंगे। सुमद नामक उस व्यक्ति ने एक बार भी खेमा की सुध नहीं ली थी।

कभी वे सोचते कि विसालक्खी अथवा पुक्कुस कहार को सारी बात बताकर जी हलका कर लें। परन्तु डर इसी बात का था कि यदि रहस्य प्रकट हो गया तो, जैसा कि सुमद ने कहा था, इस निरीह कन्या के प्राण संकट में पड़ जायेंगे। इसी आशंका से वे कोई निश्चय नहीं कर पाते थे।

इसी बीच उन्हें पता चला कि राजधानी के निकट एक मोहड़े में नागदेवता का प्रसिद्ध मन्दिर है। मूली वहाँ जाने को उत्सुक हो उठी। वह सोचती थी कि मन्दिर की देहरी पर माथा रगड़-रगड़कर वह नागदेवता से क्षमा माँगेगी और प्रायश्चित करेगी।

यह मन्दिर राजधानी से लगभग चार गव्वुत के अन्तर पर था। उन्होंने निश्चय किया कि भोर वेला में चलकर दोपहर होने से पूर्व ही वे मन्दिर पहुँच जायेंगे और फिर संझा से पहले ही तक्कसिला लौट आयेंगे।

विसालक्खी ने भी उन्हें उत्साह दिलाया। वह सोचती थी कि किसी तरह मूली दुख-सागर से उबरे। वह स्वयं भी उनके साथ जाना चाहती थी, परन्तु उसने मन्नत मानी थी कि जिस दिन उसका पति अथवा बेटा लौटकर आयेगा, उसी दिन उसके साथ वह नागदेवता के दर्शन करने जायेगी।

राजधानी में भाँति-भाँति की बातें फैल रही थीं। एक विलक्षण जनश्रुति यह थी कि तक्षशिलाधीश अर्थात बूढ़े राजा ने आत्महत्या नहीं की, उसकी हत्या की गयी है और इस सबके पीछे उपराज आंभि का हाथ है।

इन सब बातों से जनता में रोष फैला हुआ था। फिर यह बात भी किसी से छिपी नहीं थी कि उपराज के आदेश से ही राजकुमार रक्षक को राह से हटाया गया।

इसने जलती पर घी का काम किया। जनता भड़की हुई थी। सब जानते थे कि उपराज आंभि ने अपने पिता को म्लेच्छ राजा के पास भेंट-उपहार देकर सिन्धु के उस पार भेजा था और फिर आंभि ने ही म्लेच्छ राजा को तक्षशिला आने का निमन्त्रण दिया था। आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी।

मूली और पासमान ये सब बातें पुक्कुस कहार के मुख से सुनते और घबरा जाते। राजा की हत्या की बात पुक्कुस एक सेट्ठी के घर से सुनकर आया था, जहाँ वह पानी भरता था। इस सेट्ठी का नाम वनहरि था। वनहरि का प्रवेश राजमहल में था

और उसी के घर में पुक्कुस ने सुना था कि उपराज के राज्याभिषेक में विलम्ब इसलिए हो रहा था कि उसकी माता बड़ी रुष्ट थी। उसे सन्देह था कि बेटे ने ही पिता की हत्या करवायी।

फिर कई दिनों से राजधानी में कोई सार्थ नहीं आया था। खाने-पीने की वस्तुओं का अभाव होने लगा। उपलब्ध वस्तुओं के दाम भी आकाश को छूने लगे। अर्द्धकाकणी के स्थान पर काकणी, और अर्द्धपण के स्थान पर पण तक व्यय करना पड़ता था।

दण्डयुधाधर और राजकर्मचारी अलग मनमानी कर रहे थे। कोई उनका हाथ रोकनेवाला नहीं था। सारे तक्षशिला में दण्डयुधाधरों का आतंक था। डण्डे, कटारें और भाले-बरछे लिये वे गली-कूचों में घूमते दिखायी देते थे और नागरिकों से बलपूर्वक बलि उगाहते थे।

इन सब बातों से मूली और पासमान के मन में डर समा गया था। वे सोचते थे कि जल्दी से जल्दी यहाँ से निकल जाने में ही हित है। इसलिए एक रात उन्होंने निश्चय किया कि अगले दिन प्रातःकाल उठकर वे नागदेवता के मन्दिर के दर्शन करने जायेंगे। फिर वहाँ से लौटकर अपने गाँव चलने की तैयारी करेंगे। उन्होंने यह भी निश्चय कर लिया कि तब तक यदि सुमद नहीं आता, तो वे खेमा को अपने साथ ले जायेंगे।

•

अगले दिन सूरज की पहली किरण के साथ ही वे नगरकोट से चल पड़े। सड़क नगरकोट से निकलकर सीधी नदी के तट पर पहुँचती थी और फिर नदी की धारा के साथ-साथ जाती थी। सड़क के बायीं ओर कँटीली झाड़ियाँ, कीकर-फुलाही के पेड़ों का घना जंगल था। पेड़-वनस्पति पर नयी कोंपलें निकल आयी थीं। सारी प्रकृति जैसे प्रफुल्लित होकर अपनी छटा दिखा रही थी।

यह ऋतु ही ऐसी थी जिसमें जंगली पौधों तक पर निखार आ जाता था। दूर-दूर तक ऐसे लगता था जैसे प्रकृति ने धरती पर फैली हरे रंग की चादर पर पीले-नीले फूल टाँग दिये हों। आक जैसे पौधों पर भी फूल निकल आते थे। पाँच पंखुड़ियोंवाले ये फूल ऐसे लगते थे जैसे किसी ने काँटे से छिदी उँगली का रक्त एक-एक पंखुड़ी पर टीप दिया हो।

नाना प्रकार के पक्षी कलरव करते सुनायी पड़ते थे। ऊपर राखवर्णी कबूतरों का झुण्ड उड़कर जा रहा था। उनके पीछे-पीछे सुग्गों का झुण्ड आया और ट्रैं-ट्रैं करते हुए निकल गया। ऊपर उड़ते हुए पक्षियों को पासमान बड़ी सरलता से पहचान रहा था। यही पक्षी जब डालों पर बैठे हों, तो इन्हें पहचानना कठिन हो जाता है।

दिन ठण्डा था। मार्ग में राजधानी की ओर आता कोई न कोई ऊँटसवार मिल जाता था। डर की कोई बात नहीं थी। मूली प्रसन्न थी कि आज उसकी अभिलाषा पूरी होगी। सप्प-देवता के दर्शन करके वह अपनी भूल के लिए क्षमायाचना करेगी।

नदी पर एक पनचक्की लगी थी। उसकी घरघराहट दूर-दूर तक सुनायी पड़ती रही। पासमान किसी ऐसे स्थल की खोज में था जहाँ से उतरकर वह बैलों को नदी-तट पर ले जाये।

बहुत आगे आकर उसे ऐसा स्थल दिखायी दिया। सड़क के किनारे एक पुराना बरगद था। उसकी बगल से एक पगडण्डी नीचे उतरती थी। सड़क के ऊपर से नदी की पतली धारा कर्पट अर्थात फीते की नाई लगती थी।

पासमान गाड़ी को सड़क से उतारकर बरगद के निकट ले गया। बरगद की लम्बी छाया सड़क पर पड़ रही थी। मूली ने सोयी हुई खेमा को गाड़ी में लिटा दिया और बस्सी को उठाकर

वह उतरी और पेड़ के नीचे जाकर बैठ गयी। पासमान बैलों को खोलकर नीचे उतर गया।

झाड़-झंखाड़ और शिलाओं के मध्य होती हुई पगडण्डी सीधी नदी-तट पर जाती थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यात्रियों और जन्तुओं के निरन्तर आने-जाने से राह के पत्थर घिस गये हों।

बैलों को नदी-तट पर छोड़ पासमान दस हाथ ऊपर जाकर एक शिला पर बैठ गया और मुँह-हाथ धोने लगा। पैरों को उसने रगड़-रगड़कर धोया। उसका मन करता था कि शान्त धारा में उतरकर दो-चार डुबकियाँ लगाये।

पासमान यह सोच ही रहा था कि एकाएक उसके कानों में घोड़ों की टापों की ध्वनि पड़ी। उसने ऊपर बरगद की ओर देखा, तो वहाँ धूल के बादल उड़ रहे थे। वह घबरा गया और बैलों को वहीं छोड़ पगडण्डी पर दौड़ने लगा। वह अधबीच में ही था कि उसे लगा कि मूली चीखी है। बस, वह आतंकित होकर भागा। ऊपर आते ही उसने जो दृश्य देखा, तो सन्नाटे में आ गया। बरगद के निकट बहुत-से घुड़सवार सैनिक खड़े थे और मूली बस्सी को गोद में लिये खड़ी रो रही थी।

पासमान से यह सब नहीं देखा गया और वह चीखते हुए दौड़ा। परन्तु एकाएक एक घुड़सवार ने इस फुर्ती से अपना घोड़ा नचाया कि पासमान उसकी टाँगों में उलझकर गिर पड़ा। उसने उठने का प्रयास किया, तो सहसा कोड़ों की मार पड़ने लगी। उधर मूली चीख रही थी। पासमान अपनी रक्षा के लिए हाथों, बाँहों और कुहनियों से मुँह-सिर ढाँपने का यत्न करता। परन्तु घड़ियाल की खाल के बने कोड़े ने पासमान की पीठ, कन्धों की चमड़ी उधेड़कर रख दी।

मूली से देखा नहीं गया, तो चीख-चीखकर बोलने लगी. "मत मारो, म···त माऽऽऽ रोऽऽऽऽ"

एक घुड़सवार ने आगे बढ़कर मूली की छाती पर भाला रख दिया और चिल्लाकर डपटा, वह सहमकर चुप हो गयी। पासमान धूल में लोट रहा था। परन्तु निर्दयी घुड़सवार का हाथ जैसे रुकना नहीं जानता था। वह खींच-खींचकर कोड़े बरसा रहा था। पासमान के मुँह और माथे से रक्त बहने लगा था। वह छटपटा रहा था और तिलमिलाकर सोच रहा था कि उसे इस तरह निर्ममता से क्यों मारा जा रहा है ? उसने क्या अपराध किया ?

घुड़सवार ने कोड़ा फेंका और पासमान को गले से पकड़कर पूछा, "बैल कहाँ हैं तेरे ? ..."

क्रोध, पीड़ा और भय के मारे पासमान के कण्ठ से स्वर नहीं निकल रहा था। वह आग्नेय आँखों से घुड़सवार को देख ही रहा था कि पगडण्डी पर बैलों की गलघण्टियाँ सुनायी पड़ीं। सैनिक ने चौंककर उधर देखा और पासमान को वहीं छोड़ वह दौड़कर गया। दोनों बैल पगडण्डी पर धीरे-धीरे आ रहे थे।

पासमान की आँखों के सामने अँधेरा छाने लगा। पत्थर पर माथा टकराने से उसका सिर भन्ना गया था। घोड़े का सुम घुटने पर पड़ा था और बड़ी चोट आयी थी। घुटने, बाँहें और कुहनियाँ बुरी तरह छिल गयी थीं। कोड़ों की मार से पीठ और कन्धे लौं-लौं कर रहे थे।

देखते-देखते पहले एक बैल ऊपर आया। फिर दूसरा। दो सैनिक दौड़कर गये और बैलों को पकड़कर टप्पर गाड़ी की ओर लाने लगे। अब जाकर सारी बात पासमान की समझ में आयी। ये लोग उसकी टप्पर गाड़ी ले जाना चाहते थे। यह देखते ही पासमान का रक्त खौलने लगा परन्तु निःसहाय था। सशस्त्र सैनिकों से कैसे रार मोल लेता !

दोनों सैनिक बैलों को गाड़ी में बाँध रहे थे। बैल भिभक पड़े।

तूरवाल बैल ने इस तीव्रता से सिर झटका कि सारी गाड़ी हिल गयी और टप्पर में सोयी खेमा जागकर किकियाने लगी। अभी तक न मूली को, न ही पासमान को उसका ध्यान आया था। अब जब वह चीखकर रोयी, तो दोनों घबरा गये। पासमान का मन करता था कि दौड़कर जाये और खेमा को गोद में ले ले, परन्तु उठना चाहकर भी वह उठ न सका।

शिशु के इस तरह किकियाने से सैनिक चिढ़ गये। एक सैनिक ने आगे बढ़कर टप्पर में हाथ डाला और खेमा को कनपटियों से पकड़ा और फिर इस तरह उठाया जैसे कोई बिलूंगड़े (बिल्ली के नन्हे बच्चे) को उठाता है, और बड़ी निर्दयता से पासमान की ओर उछाल दिया।

पासमान स्वयं नहीं जानता कि उसमें इतनी शक्ति कहाँ से आ गयी कि इधर सैनिक ने खेमा को उछाला, उधर पासमान उछला और इससे पहले कि खेमा नीचे पत्थरों पर गिरकर चकनाचूर हो जाये, उसने दोनों हाथों में उसे लोक लिया और फिर कुहनियों के बल वहीं धरती के साथ लग गया। एक क्षण का भी विलम्ब हो जाता, तो खेमा नहीं थी। पासमान की बाँहों में आते ही खेमा की जैसे साँस ही रुक गयी। फिर वह काँपी और फिर गला फाड़कर रोने लग गयी। पासमान को सिर उठाने का साहस नहीं हुआ। ऐसी दशा में जैसे एक-एक क्षण एक-एक युग बन गया था।

पलक झपकने की देर में यह सब हो गया।

सैनिक गाड़ी के भीतर रखे सामान को उठा-उठाकर नीचे फेंक रहे थे। फिर वे एक घोड़े को लगामों से पकड़कर टप्पर गाड़ी तक लाये। पासमान चिलचिलाती धूप में हाँफते हुए देख रहा

था। घोड़े पर कोई घायल बैठा था। उसके सिर पर रक्त से भीगी पट्टियाँ बँधी थीं।

पासमान को समझते देर नहीं लगी। ये लोग घायल को ले जाने के लिए ही उसकी गाड़ी को छीनकर ले जा रहे थे। खेमा उसकी बाँहों में चीख-चीखकर रो रही थी। पासमान आतंकित होकर सोच रहा था कि गाड़ी के बिना वे इस निर्जन, बीहड़ प्रदेश से कैसे जायेंगे।

फिर देखते-ही-देखते वे चलने की तैयारी करने लगे। पासमान रक्त का घूँट पीकर रह गया। और कोई चारा भी नहीं था। प्रतिरोध व्यर्थ और निरर्थक था, मृत्यु को न्योता देने के बराबर। वह चुपचाप उन्हें जाते हुए देखता रहा। अब जाकर उसने लक्ष्य किया कि सबके सब सैनिक घायल अवस्था में थे—जैसे किसी रणभूमि से लौटकर आये हों।

मूली बस्सी को वक्ष से सटाये भयभीत आँखों से देख रही थी। ज्योंही वे ओझल हुए कि बस्सी को नीचे लिटाकर वह दौड़ी आयी और पासमान के हाथों से खेमा को लेकर वहीं बैठ गयी और रोने लगी।

पासमान की दशा देख-देखकर वह विह्वल हो रही थी, "हाय, राक्षसों ने कितनी निर्दयता से मारा है! हमने उनका क्या बिगाड़ा था, जो घायल करके डाल गये हैं? क्या दोष था हमारा?"

पासमान अधमुई दशा में था। फिर भी उसे ढाढ़स बँधाते हुए बोला, "भवनी! धीरज धर, धीरज...यह वेला रोने-धोने को नहीं। कुशल मना कि जातकी के प्राण नहीं ले लिये आततायियों ने!"

पासमान पीड़ा से छटपटा रहा था। उसकी दुर्गति देख-देखकर मूली का हृदय चीत्कार कर उठा। चीवर से वह उसके जबड़े

का रक्त और धूल पोंछने लगी। फिर जैसे-तैसे सहारा देकर वह उसे बरगद की छाया में ले आयी। खेमा को उसने लिटाया और फिर बिखरे हुए सामान में से बटलोही उठाकर वह नीचे गयी और दौड़कर पानी ले आयी।

पासमान निढाल होकर पड़ गया। उसे लग रहा था जैसे उसका अंग-अंग जकड़ता जा रहा है। चोटें ज्यों-ज्यों ठण्डी पड़ रही थीं, पीड़ा बढ़ती जाती थी।

मूली ने उसके मुँह में पानी टपकाया। फिर चीवर भिगोकर उसकी चोटों को धोने लगी। पीठ पर का वस्त्र रक्त से भीग गया था। पीठ उघाड़कर देखी, तो फफक-फफककर रोने लगी। सारी पीठ पर कोड़ों के चिह्न थे और लहू रिस रहा था। पासमान जैसे अपनी पीड़ा को छिपाकर मूली को समझाने-बुझाने का यत्न करने लगा। परन्तु अब पासमान की कोई बात मूली को सान्त्वना नहीं दे सकती थी।

सूर्य ऊपर चढ़ आया था। कोई आता-जाता दिखायी नहीं देता था।

मूली रो-रोकर बता रही थी कि जब पासमान नीचे उतरकर गया, तो उसके साथ क्या बीती। वह बोली कि वह यहाँ बैठी बस्सो को दूध पिला रही थी। तभी सड़क पर घोड़ों की टापें सुनायी पड़ीं; वह डर गयी। घुड़सवार उसे देखते ही दौड़कर आये। कहने लगे, गाड़ी तो है, बैल कहाँ हैं। वह इतनी डर गयी कि उसके मुँह से बात नहीं निकल रही थी। बस्सी को उसने गोद में छिपा लिया। एक सैनिक ने भाला उसकी छाती पर रखते हुए कहा, जल्दी बताओ, बैल कहाँ हैं, नहीं तो भाला छाती में घुसेड़ दूँगा···

मूली रो-रोकर यह सब बता रही थी और पासमान का रक्त खौल रहा था।

"···जब उसने भाला मेरी छाती पर रखा तो मेरी तो चीख ही निकल गयी। फिर तुम आ गये···" कहते-कहते वह फिर रोने लग गयी। पल्लू से आँसू पोंछते हुए बोली, "अब हम तक्कसिला नहीं रहेंगे। चाहे जैसे भी हो, अपने गाँव चलो···"

वे अभी बैठे ही थे कि एक खच्चरवाला आता दिखायी दिया। वह तक्कसिला की दिशा में जा रहा था। देखकर मूली उठी और दौड़कर गयी। उसने रो-रोकर खच्चरवाले को अपना दुखड़ा सुनाया। परन्तु खच्चरवाला इतना हृदयहीन निकला कि पासमान को ले जाने के लिए तैयार नहीं हुआ। बोला कि उसकी कचरी (खच्चर) बहुत थकी हुई है। उस पर बोझ भी अधिक है, अभी कोई और आयेगा, उससे कहना···

कोई इतना निष्ठुर भी हो सकता है, मूली को विश्वास नहीं होता था। खच्चरवाले ने जल्दी-जल्दी खच्चर हाँकी और निकल गया। मूली हाथ मलती रह गयी।

परन्तु उनके भाग्य अच्छे थे कि थोड़ी ही देर में एक ओट्ठी आता दिखायी दिया। मूली फिर दौड़कर गयी और रोने लगी।

ऊँटवाले ने दूर से ही देख लिया था। निर्जन स्थान पर एक स्त्री को इस तरह रोते हुए देखकर पहले तो वह चकराया, फिर दौड़कर आया। मूली ने उसे अपनी दुख-गाथा सुनायी और अनुनय-विनय की कि किसी तरह घायल पासमान को राजधानी तक पहुँचाए।

ऊँटवाले ने आकर पासमान की दुर्दशा देखी, तो सन्न रह गया। वह राजधानी की ओर नहीं जा रहा था, थोड़ी ही दूर उसका गाँव था। परन्तु एक घायल मनुष्य और एक स्त्री तथा दो निरीह कन्याओं को वह इस निर्जन प्रदेश में मरने के लिए छोड़

नहीं सकता था। इसलिए झट उन्हें राजधानी छोड़ आने के लिए तैयार हो गया।

मूली दौड़-दौड़कर सामान बटोरने लगी। ओट्ठी पासमान के पास बैठकर उसे ढाढ़स बँधाने लगा। पासमान जैसे अचेत-सा पड़ गया था। मूली और ओट्ठी ने मिलकर किसी तरह उसे किचावे में बैठाया। फिर मूली भी दोनों कन्याओं को लेकर किचावे के दूसरी ओर बैठ गयी और ऊँटवाला जल्दी-जल्दी राजधानी की ओर चल पड़ा।

पासमान निढाल होकर पड़ा था। ऊपर से चिलचिलाती, प्रचण्ड धूप थी। सूर्य की किरणें ऐसे चुभती थीं जैसे कोई सुइयां मार रहा हो।

ऊँट पर किचावे में बैठकर यात्रा करना वैसे भी सुखकर नहीं है। फिर घायल व्यक्ति के लिए तो यह और भी कष्टकर है। ऊँट के टहोकों से पासमान का अंग-अंग दुखने लगा। मूली अलग बैठी आँसू बहा रही थी। बार-बार उस घड़ी को कोसती थी जिसमें उन्होंने घर से बाहर पैर रखा था।

ओट्ठी उसे ढाढ़स बँधा रहा था। कहता था कि अब चिन्ता की कोई बात नहीं। 'चतुरगुली छाया' होने तक (अर्थात जब पुरुष की परछाईं घटते-घटते चार अंगुल ही रह जाती है) वे राजधानी पहुँच जायेंगे।

इधर, नगरकोट पर विसालवखी घबरायी हुई डोल रही थी। उसने कल्पना तक नहीं की थी कि पासमान इतनी दुर्गति करवाके लौटेगा।

द्वार पर बैठी वह बटोहियों को पानी पिला रही थी कि बहुत-से घुड़सवार नगरकोट में प्रविष्ट हुए। उनके साथ टप्पर

गाड़ी को देख वह बड़ी विस्मित हुई···गाड़ी तो पासमान की लगती है, फिर इनके पास कैसे आयी ? पासमान और मूली कहाँ हैं ? दोनों कन्याएँ कहाँ हैं ?···

घुड़सवार टप्पर गाड़ी को लेकर नगर में चले गये। विसालक्खी व्याकुल होकर देखने लगी। तरह-तरह की आशंकाओं ने उसे आ घेरा। वह बार-बार नगरद्वार के बाहर देखती—'यह कैसी गुत्थी है ? पासमान कहाँ है ? मूली कहाँ है ? दोनों कन्याएँ कहाँ हैं ? उनकी टप्पर गाड़ी इन घुड़सवारों के पास कैसे आयी ? कहीं कोई दुर्घटना तो नहीं हो गयी ?'

दोपहर होने जा रही थी। विसालक्खी बैठी राह देख रही थी। तभी वह ऊँट नगर-द्वार में प्रविष्ट हुआ। विसालक्खी को देखते ही मूली ऊँचे स्वर में रोने लग गयी। विसालक्खी घबराकर उठी। पासमान की दशा देखते नहीं बनती थी। वह किचावे में लहूलुहान और अचेत पड़ा था। विसालक्खी ओट्ठी से पूछने लगी, परन्तु ओट्ठी बोला, "पहले इसका उपचार करवाओ··· बहुत चोटें लगी हैं। अचेत पड़ा है···"

विसालक्खी के तो हाथ-पैर फूल गये। तुरन्त उसने एक बालक को चाटियों के पास बैठाया और ओट्ठी के साथ घर की ओर चल पड़ी।

मूली का रोना सुनकर कुछ लोग ऊँट के साथ-साथ चल पड़े और पूछने लगे। जब वे अपने घर के निकट पहुँचे, तो आसपास के लोग इकट्ठे हो गये और चकित होकर देखने लगे। जब उन्हें पता चला कि ऊँट के किचावें में घायल व्यक्ति और कोई नहीं पासवान ही है, तो बड़े विस्मित हुए। प्रातःकाल ही तो ये लोग बैलगाड़ी में सवार होकर सप्पदेवता के मन्दिर गये थे! फिर वहाँ से इस दशा में कैसे लौटे ?

ओट्ठी ने सबको परे हटाया।

ऊँट की यात्रा जितनी कष्टकर है, उससे अधिक भयप्रद ऊँट का बैठना है। अगली टाँगें मोड़कर जब वह एक झटके के साथ बैठता है, तो किचावे में बैठे लोगों की चीखें ही निकल जाती हैं। लगता है, किचावे समेत वे मुँह के बल धरती पर गिरेंगे। ऊँट ने जब अगली टाँगें मोड़ीं, तो पासमान को ऐसा झटका लगा कि अचेत अवस्था में भी वह कराह उठा।

उसे उतारकर वे जल्दी-जल्दी भीतर ले गये। वहाँ उसे बायें प्रसार के नीचे खाट पर लिटाया गया। उत्सुक भीड़ विसालक्खी के आँगन में जुट आयी थी। एक स्त्री ने कहा कि चोटों पर हल्दी-तेल लगाओ।

एक स्त्री दौड़कर गयी और अपने घर से घी-हल्दी ले आयी और पासमान की चोटों पर चुपड़ने लगी। एक बुढ़िया बोली, "इसे गुड़-हल्दी पिलाओ..."

पासमान कराह रहा था और मूली खाट के साथ लगकर बैठी थी। एक-एक चोट देखती थी और उसका कलेजा मुँह को आने लगता था।

तभी पुक्कुस कहार भी आ गया। सबको पीछे हटाकर उसने जो पासमान की दशा देखी, तो बस, देखता ही रह गया। वह दौड़ा-दौड़ा श्रीनन्दक वैद्य के घर गया। श्रीनन्दक वैद्य ने एक पुड़िया और नारियल की कटोरी में एक लेप दिया और कहा कि पुड़िया खिलाकर चोटों पर लेप करो।

पुक्कुस उन्हीं पैरों लौट आया। तत्काल उन्होंने वह औषधि पासमान के मुँह में डाली। चोटों पर लेप किया। श्रीनन्दक की औषधि इतनी प्रभावकारी सिद्ध हुई कि थोड़ी ही देर में पासमान शान्त होकर सो गया।

ओट्ठी चुपचाप पेड़ के नीचे बैठा देख रहा था। उसे अपने गाँव लौटकर जाना था, परन्तु पासमान की गम्भीर दशा देखकर वहीं रुक गया था। विसालक्खी उसे अधिक नहीं रोकना चाहती थी। वह भीतर गयी और थोड़ा गुड़ और सत्तू आँचल में भरकर लायी। मूली ने और विसालक्खी ने हाथ बाँधकर उसके परोपकार के लिए कृतज्ञता प्रकट की। मूली, बस, इतना भर कह पायी, "तुम्हारा किया हम इस जनम में कैसे उतारेंगे, भैया!" कहते-कहते वह रो पड़ी।

ओट्ठी कुछ नहीं लेना चाहता था। परन्तु विसालक्खी की अनुनय-विनय के आगे उसे हार माननी पड़ी। सारा सामान अपनी चादर के पल्ले में बाँधकर वह बाहर निकला और ऊँट लेकर नगरकोट की ओर चला गया।

दोपहर ढलने लगी थी। पासमान निश्चल-सा पड़ा था। श्रीनन्दक की पुड़िया में कोई ऐसा पदार्थ था कि वह गहरी नींद सोता रहा।

पुक्कुस ने सबको वहाँ से हटा दिया। अब वह स्वयं मूली, विसालक्खी और पड़ौस की दो स्त्रियों के साथ पासमान की खाट के साथ बैठ गया और उसकी सेवा-सुश्रूषा करने लगा।

मूली रो-रोकर बता रही थी कि बरगद के नीचे उनके साथ क्या बीती। उसकी सारी कहानी सुनकर पुक्कुस बोला, "कुशल मनाओ कि जातकी के प्राण बच गये। तुम लोगों के भाग्य अच्छे थे कि ओट्ठी आ गया और तुम्हें यहाँ तक ले आया, नहीं तो निर्जन, सुनसान जंगल में रात कैसे बिताते..." फिर वह बैठकर बताने लगा कि जब से राजमहल में आग लगाने की घटना हुई है, सारी राजधानी में पकड़-धकड़ हो रही है। विप्लवकारी अचानक आक्रमण करते हैं। उसने बताया कि जिन घुड़सवारों ने टप्पर गाड़ी छीनी थी, वे राजा के सैनिक ही थे और विप्लव

कारियों के साथ हुई मुठभेड़ में घायल हुए थे। फिर उसने बेसुध पासमान की ओर देखते हुए कहा, "यह समझो कि तुम्हें यहाँ का अन्न-जल ग्रहण करना था, जो लौट आये। नहीं तो जीवित न बचते..."

विसालक्खी बोली, "कोई कसर छोड़ी है! प्राण नहीं लिये, बस, अधमुआ करके छोड़ दिया है।"

आकाश धुँधला पड़ने लगा था। जहाँ पहले प्रचण्ड धूप निकली हुई थी, वहाँ अब हवा के तीव्र झोंकों से पेड़ साँय-साँय करने लगा। विसालक्खी के आँगन में पत्ते झड़-झड़कर उड़ रहे थे।

मूली बिना खाये-पिये पासमान की खाट का पाया पकड़े बैठी थी। सब उसे समझा रहे थे कि वह इस तरह धैर्य न छोड़े। एक स्त्री बोली, "तूने भी धीरज छोड़ दिया, तो इसे कौन सँभालेगा? कन्याओं का क्या होगा!..."

पुक्कुस बोला, "बेटी! घबराने से काम थोड़े चलता है। प्रभु से यही प्रार्थना करो कि यह जल्दी चंगा हो जाये। तुम लोग कुशलपूर्वक अपने घर लौटो..."

पड़ौस की एक स्त्री ने डबडबाई आँखों से मूली की ओर देखा, "सन्तोष कर! अब अथरू न बहा और कन्याओं को सँभाल..."

पुक्कुस बोला "प्रभु सब ठीक करेंगे। देखना, प्रातःकाल यह चंगा होकर उठेगा।"

पासमान का सिर ऊँचा करने के लिए उन्होंने दोनों पायों के नीचे लकड़ी का एक-एक पड़वाया लगा दिया।

प्रतिक्षण मूली को लगता जैसे केले के गाछ में सचमुच साँप घुसा हुआ है। किसी भी क्षण निकलकर वह आयेगा और आँगन

में दौड़ने लगेगा। इस कल्पना मात्र से मूली भयभीत हो जाती और घुटनों में सिर छिपा लेती।

सारी रात पासमान बेसुध पड़ा रहा। उसने करवट तक नहीं बदली। भोर वेला में कहीं जाकर वह तनिक हिला-डुला। तीनों खाट के और निकट आ गये। दीपक के प्रकाश में पासमान का चेहरा ऐसे लगता था जैसे रात में उसके शरीर से रक्त निचुड़ गया हो। चेहरे का वर्ण हल्दी जैसा पीला पड़ गया था।

उजाले के साथ-साथ पासमान ने धीरे-धीरे आँखें खोलीं। जब उसे कुछ चेत हुआ, तो सबसे पहले उसने अपनी गाड़ी और बैलों के बारे में पूछा।

तीनों एक-दूसरे का मुँह देखने लगे। इस विपदा में किसी को टप्पर गाड़ी का ध्यान ही नहीं रहा था। उन्होंने सोचा तक नहीं था कि पासमान चेतते ही गाड़ी के विषय में जिज्ञासा करेगा।

सारी स्थिति को समझते हुए पुक्कुस स्नेहपूर्वक बोला, "तुम अब आराम से लेटे रहो। हिलो-डुलो नहीं, श्रीनन्दक वैद्य ने मना किया है। गाड़ी कहीं नहीं गयी···पहले तुम स्वस्थ हो जाओ, फिर कोई बात करना···"

परन्तु पासमान को जैसे पुक्कुस की बात से सन्तोष नहीं हुआ। व्याकुल आँखों से वह देखता रहा। फिर आँखें बन्द करके वह चुपचाप लेट गया, जैसे बहुत थका हुआ हो।

पासमान नहीं जानता था कि सारी रात वे लोग कितने व्याकुल रहे, किस तरह उन्होंने आँखों ही आँखों में रात काट दी थी। उसे, बस, इतना स्मरण था कि दयालु ओट्ठी ने उसे अपने किचावे में डाला था और ऊँट चलकर सड़क पर आया था। फिर उसे कोई स्मरण नहीं कि वे कब नगरकोट पहुँचे।

विसालक्खी मूली से कह रही थी, "तू उठ। रात-भर जागी

है। जा, बच्चों के पास जाकर लेट। मैं बैठती हूँ..."

दिन चढ़ते ही पुक्कुस कहार श्रीनन्दक वैद्य के घर गया। सारी स्थिति बताकर थोड़ा और लेप ले आया। लेप से पासमान को बड़ा सुख मिला और वह आराम से पड़ा देखता रहा। फिर लेटे-लेटे ही उसे कुछ स्मरण आया और जैसे मूली से अलग से बात करने के लिए छटपटाने लगा। अवसर देखकर उसने अकेले में मूली से उस थैली के विषय में पूछा। मूली ने फुसफुसाकर कहा, "चिन्ता न करो, सँभालकर रखी है..."

तीसरे-चौथे दिन जाकर कहीं पासमान हिलने-डुलने योग्य हुआ। फिर भी, वह चलने-फिरने की दशा में नहीं था। बहुत हुआ, तो एक हाथ मूली या विसालक्खी के कन्धे पर रखकर और दूसरे हाथ में डँगोरी (लाठी) लेकर वह दो-चार पग धीरे-धीरे चलता था। चोटें भरने लगी थीं, परन्तु बायाँ घुटना बड़ी पीड़ा दे रहा था। श्रीनन्दक वैद्य ने कहा था कि घोड़े का सुम पड़ने से भीतर का मांस फट गया है और ठीक होने के लिए थोड़ा समय चाहिए।

इस विपत्ति में विसालक्खी ने जैसे माँ का वात्सल्य उन्हें दिया। वह पासमान की खाट से लगकर बैठी रहती। प्रातः चक्की तक में हाथ न लगाती कि कहीं पासमान की निद्रा में विघ्न न पड़े। वह कभी इस कन्या को, कभी उस कन्या को लिये-लिये पहरों डोलती रहती।

तिस पर भी मूली पल और घड़ियाँ गिन रही थी। अब तक्षशिला जैसे खाने को दौड़ता था उसे।

पासमान को बैलों की चिन्ता घुन की तरह खाये जा रही थी। कहीं गलघण्टी सुनायी पड़ती, तो उसके कान खड़े हो जाते

ग्रार ग्रपने बैलों की टल्लियाँ टनटनाने लगतीं। पासमान को लगता कि दोनों बैल रँभा-रँभाकर उसे बुला रहे हैं।

मूली ने सोच लिया था कि ज्योंही पासमान थोड़ा चलने-फिरने योग्य होगा, वे इस ग्रभिशप्त राजधानी से निकल जायेंगे। उसने यह भी सोच लिया था कि उस थैली में से धन निकालकर वे कोई बैलगाड़ी मोल लेंगे, क्योंकि ग्रपनी बैलगाड़ी मिलने की ग्रब कोई ग्राशा नहीं थी।

परन्तु मनुष्य सोचता कुछ है, होता कुछ है। मूली ग्रौर पासमान ने सपने में भी नहीं सोचा था कि ग्रभी कितनी भारी विपत्ति उनके सिर पर मँडरा रही थी। ग्रौर ग्रकस्मात जब यह नयी विपदा ग्रायी, तो वे भौंचक्के रह गये।

विसालक्खी के साथ मूली भी मुँह-ग्रँधेरे उठ जाती थी। दोनों मिलकर घर को भीतर-बाहर से झाड़तीं-बुहारतीं। फिर दो-दो घड़े सिर पर रखकर कुएँ से पानी लेने जातीं।

उनकी यह नियमित दिनचर्या कोई दुष्ट प्रतिदिन देखता ग्रा रहा था। इसलिए ग्रपने दुष्टकर्म के लिए उसने इसी वेला को चुना।

उस दिन वह विसालक्खी के घर के साथवाले चट्टे में घात लगाये बैठा था। इधर मूली ग्रौर विसालक्खी घर से निकलीं, उधर वह दुष्ट मुँडासा मारकर विसालक्खी के घर की ग्रोर चल पड़ा। ग्रभी पौ नहीं फटी थी। मुँडासाबन्द व्यक्ति कुछ क्षण कधौली के साथ सटकर खड़ा देखता रहा। चारों ग्रोर सन्नाटा था। चन्द्रमाविहीन ग्राकाश में यहाँ-वहाँ तारे छिटके हुए थे। दूर कहीं कुक्कुट बोल रहा था। ग्रधिक समय तक प्रतीक्षा करने की वेला नहीं थी। वह दबे पाँव द्वार तक ग्राया। चौकन्नी दृष्टि

डालते हुए उसने धीरे से साँकल उतारी और फिर किवाड़ को पीछे धकेला। हल्की-सी चरचराहट हुई। वह मूर्ति की नाईं खड़ा हो गया और आहट लेने लगा। भीतर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, तो उसका मनोबल बढ़ गया। घुप्प अँधेरा था और पेड़ की दो डालियों की सन्धि में कोई बड़ा झींगुर निरन्तर बोल रहा था। फिर कुछ क्षण केले के गाछों के निकट कधौली से लगकर खड़ा, वह देखता रहा।

पौ फटने ही वाली थी। छत पर कोई अकेला पक्षी बोला था। प्रकट था कि प्रभात होने में अधिक विलम्ब नहीं है और शीघ्र ही दूसरे पक्षी भी निकलने लगेंगे।

अब तक उसकी आँखें अँधेरे में देखने की अभ्यस्त हो गयी थीं। पासमान बायें प्रसार के नीचे खाट पर बेसुध पड़ा था। उसके निकट ही धरती पर दोनों कन्याएँ सो रही थीं; जहाँ मूली उन्हें छोड़कर गयी थी।

वह तुरन्त आगे बढ़ा। देर करने से भाँडा फूट सकता था। कोई छत पर से देख लेता। मूली और विसालक्खी ही अचानक आ सकती थीं। पुक्कुस कहार भी आ सकता था। इसलिए वह नीचे बैठ गया और धीरे-धीरे सरकने लगा। सरकते-सरकते वह प्रसार के नीचे पहुँचा। खाट पर पासमान बिना हिले-डुले सो रहा था। वह कन्याओं के निकट जाकर बैठ गया और साँस रोके प्रतीक्षा करने लगा। फिर हाथ बढ़ाकर वह दोनों कन्याओं को टटोल-टटोलकर देखने लगा। भय, बस, इसी बात का था कि यदि कोई कन्या जागकर रो पड़ी और पासमान की नींद खुल गयी, तो वह हल्ला करेगा और लेने के देने पड़ जायेंगे।

धड़कते कलेजे से उसने एक कन्या को उठाकर कन्धे से लगा लिया और धीरे-धीरे थपथपाया। थोड़ी ही देर पहले मूली कन्या को दूध पिलाकर गयी थी। उसके मुख से दूध की सौंधी-

सौंधी गन्ध आ रही थी। उसने हल्का-सा डकार भी लिया और शायद दूध भी निकाला, क्योंकि उसकी पीठ गीली हो गयी थी। परन्तु कन्या जागी नहीं और उसके कन्धे से लगकर सोयी रही। जब वह आश्वस्त हो गया, तो धीरे-धीरे पीछे सरकने लगा। फिर उठकर खड़ा हो गया और उसी तरह दबे पाँध द्वार तक आया। किवाड़ के साथ लगकर वह बाहर की आहट लेता रहा। जब लगा कि कोई आ-जा नहीं रहा, है, तो धीरे से वह बाहर निकला और दायें-बायें देखते हुए जल्दी-जल्दी कधौली के साथ चलने लगा। वहाँ से वह चट्टे की ओर न जाकर साथवाली गली में मुड़कर अदृश्य हो गया।

पासमान को भनक तक नहीं पड़ी कि कोई एक कन्या को उठाकर ले गया है।

झटपुटे के साथ मूली और विसालक्खी लौटीं। एक किवाड़ खुला हुआ था। देखकर विसालक्खी पहले तो चौंकी, फिर यह सोच-कर अधिक चिन्तित नहीं हुई कि स्यात वह स्वयं खुला छोड़ गयी होगी। बस, उसे, अन्देशा इस बात का था कि कुत्ता चक्की न चाट गया हो। न उसने, और न ही मूली ने ही, सपने में भी यह कल्पना की थी कि कोई पीछे से आकर एक कन्या को उठाकर ले गया है।

पानी छलकने से दोनों के वस्त्र भीग रहे थे। घड़े उतारकर उन्होंने घड़ौंची पर रखे। विसालक्खी सीधी चक्की देखने गयी। जाते हुए उसने भी अदृश्य बालिका को लक्ष्य नहीं किया। चक्की पूर्ववत ढकी हुई थी और पासमान सो रहा था।

मूली सिर से ऊनू (कपड़े की ठेकी) उतारकर खड़ी थी। भीगी पेपणी को हवा देते हुए वह धीरे-धीरे चलकर प्रसार तक

आयी। वह कुछ सोचती हुई इधर-उधर देख रही थी। तभी उसकी दृष्टि उधर गयी जहाँ बिछौने पर बालिकाओं को सोते छोड़ गयी थी। खेमा सो रही थी, परन्तु बस्सी दिखायी नहीं दी। मूली चिन्ता से नहीं, परन्तु विस्मय से इधर-उधर देखने लगी। उसे, बस, यही लगा कि बस्सी लुढ़ककर खाट के आगे-पीछे चली गयी होगी। परन्तु वह दिखायी नहीं दी, तो उसने पासमान की खाट के नीचे झुककर देखा। वहाँ भी नहीं थी। अब उसके भीतर जैसे डर की कोई घण्टी बज उठी। वह आशंका और घबराहट-भरे स्वर में बोली, "हाय! बस्सी कहाँ है?"

त्रिसालक्खी कोठरी के भीतर अनाज निकालकर छाज में डाल रही थी। मूली की घबराहट-भरी बात उसके कानों में पड़ी, तो छाज वहीं छोड़कर वह बाहर निकली, "क्यों, क्या हुआ?"

अभी तक उसे लेशमात्र भी सन्देह नहीं हुआ। मूली भयभीत हिरणी की नाईं देख रही थी। एकाएक जैसे उसका कलेजा मुंह को आने लगा। वह दौड़कर पासमान को कन्धे से झकझोड़कर बोली, "सो रहे हो, बस्सी कहाँ है?"

पासमान पर निद्राजनक औषधि की खुमारी चढ़ी हुई थी। एकाएक झकझोड़े जाने से वह धीरे-धीरे हिला और अधमुंदी आँखों से देखने लगा। पहले तो वह कुछ समझा नहीं। परन्तु जब मूली चीखकर बोली, तो एकबारगी उसका कलेजा भी काँप-गया। घबरायी हुई विसालक्खी भी इधर-उधर देख रही थी। परन्तु बस्सी वहाँ होतीं, तो दिखायी देती!

खेमा जागकर रोने लग गयी, परन्तु किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। मूली किसी भारी विपदा की आशंका से त्रस्त खड़ी देख रही थी। एकाएक वह रोने लग गयी और बोली, "हाय, मेरी बच्ची! कोई उठाकर तो नहीं ले गया!"

माँ की ममता जैसे भाँप गयी थी। पासमान, जो किसी तरह

उठकर चारपाई पर बैठा देख रहा था, मूली के रोने और फिर उसके मुँह से ऐसी बात सुनते ही चिढ़कर बोला, "रोना बन्द कर! अप्सरा जैसी तेरी बेटी थी न, जो कोई उसे ही उठाने आया होगा..."

मूली मुँह में कपड़ा ठूँस रोने लगी। विसालक्खी भी भयभीत खड़ी देख रही थी। विचित्र बात थी! बस्सी चलना तो दूर, रेंग भी नहीं सकती थी। फिर वह गयी कहाँ!

मूली इस तरह रोते हुए वहीं बैठ गयी जैसे उसे पूरा विश्वास हो गया था कि उसकी बेटी को कोई उठाकर ले गया है। विलाप सुनकर पास-पड़ौस के लोग इकट्ठे होने लगे। कुछ लोगों को भ्रम हुआ कि घायल पासमान को कुछ हो गया है। पर जब उन्होंने यह विस्मयकारी बात सुनी, तो दाँतों तले उँगली दबाकर रह गये। विचित्र बात! कोई अन्धी-अपाहिज कन्या को क्योंकर उठाकर ले जायेगा! किसी को बच्चा उठाना था, तो दूसरी कन्या को उठाकर ले जाता!

विसालक्खी को भी विश्वास हो गया। उनके पीछे कोई आया और कन्या को उठाकर ले गया। उसे भली भाँति स्मरण था कि जाती बार वह बाहर से साँकल चढ़ाकर गयी थी और जब लौट-कर आयी थी, तो किवाड़ खुले हुए थे।...हो न हो, कोई दुष्ट उनकी अनुपस्थिति में आया और कन्या को उठाकर ले गया...

पासमान खाट पर जड़वत बैठा था। उसे विश्वास ही नहीं होता था कि बस्सी जैसी अपंग और अन्धी कन्या को कोई उठाकर ले जा सकता है।

तभी पुक्कुस भी आ गया। उसने जब यह अविश्वसनीय बात सुनी, तो वहीं सिर पकड़कर बैठ गया। फिर जल्दी-जल्दी कुछ

लोगों को साथ लेकर वह ग्रासपास देख ग्राया, परन्तु कहीं कोई सूत्र नहों मिला।

मूली प्रसार के स्तम्भ के साथ बैठी ग्राँसू वहा रही थी। विसालक्खी ग्रलग घबरायी हुई डोल रही थी। जो भी सुनता, इन ग्रामीरों के दुर्भाग्य पर चार-चार ग्राँसू रोता। कितनी विपदाएँ झेलकर यहाँ पहुँचे थे। कन्या का उपचार करवाने के लिए कहाँ-कहाँ नहीं मारे-मारे फिरे। ग्रब ग्रचरज की बात कि उसे ही कोई उठाकर ले गया था।

करते-करते दोपहर हो ग्रायी। जो दो-चार लोग खोजने-ढूँढ़ने गये थे, वे भी लौट ग्राये। ज्यों-ज्यों समय वीत रहा था, मूली का धैर्य छूटने लगा था। वह फफक-फफककर रोती। दोपहर हुई, साये भी ढलने लगे ग्रौर साँझ घिर ग्रायी, तव भी कन्या का कोई पता नहीं चला।

ग्रासपास की स्त्रियाँ मूली को सान्त्वना दे रही थीं कि दीया जलाने की वेला में रोये नहीं। परन्तु उसे कोई जितना समझाता था, दिलासा देता था, उतना ही उसके धीरज का बाँध टूटने लगता था। उसे लगता था जैसे कोई उसके कलेजे का टुकड़ा ही निकालकर ले गया था। पागलों की तरह वह उठ-उठकर देखती थी—वैसे ही जैसे गोधूलि वेला में गाय ग्रपने बछड़े के लिए छटपटाती है...

सबको ग्रचरज इस बात का था कि कोई बच्चा उठाने ग्राया था, तो खेमा को छोड़कर ग्रन्धी कन्या को क्यों उठाकर ले गया! एक पड़ौसी ने कहा, "भाई, बड़ी भोली बात करते हो। ग्राया था बच्चा उठाने। उसे क्या पता कि कन्या ग्रन्धी है? जो सामने पड़ी, उसे ही उड़ा ले गया..."

बात बड़ी संगत थी।

परन्तु पासमान कुछ ग्रौर ही सोच रहा था। उसके मन में

यह बात घर कर गयी थी कि हो न हो, सुमद का भेजा हुआ कोई आदमी आया होगा और भूल से खेमा के स्थान पर बस्सी को उठाकर ले गया होगा।

परन्तु जितनी जल्दी यह बात उसके मस्तिष्क में आयी थी, उतनी जल्दी ही वह निकल भी गयी, क्योंकि अब तक तो उस आदमी को अपनी भूल का पता चल जाना चाहिए था। वह किसी बहाने बस्सी को लौटा जाता। फिर इस तरह चोरी-छिपे कन्या को उठवाने का अर्थ भी पासमान की समझ में नहीं आया। सुमद चुपचाप आकर कन्या ले जा सकता था!

"हो न हो," पासमान बैठा-बैठा सोचने लगा। "बात कोई और है!"

विसालक्खी को एक और बात का दुख था। वह बैठी-बैठी सोच रही थी कि वह न इन्हें अपने घर लाती, न इन्हें यह दिन देखना पड़ता। अब सब उसी को दोष देंगे।

करते-करते रात घिर आयी—काली डरावनी रात थी। सब चले गये। तीनों चुपचाप बैठकर बिसूर रहे थे। अब यह अँधेरी रात काटे नहीं कटेगी। चन्द्रमा की पतली फाँक उतरते-उतरते बहुत नीचे चली गयी थी।

किसी समय पुक्कुस कहार ने आकर द्वार खटखटाया। विसा-लक्खी दौड़कर गयी। मूली और पासमान उत्सुक, आशाभरी दृष्टि से देख रहे थे। परन्तु पुक्कुस रीते हाथों, निराश, लौटा था। वह पास बैठकर बताने लगा कि किस तरह वह राजधानी में डोलता फिरा था। परन्तु कहीं कोई आशा की किरण दिखायी नहीं दी।

मूली का कलेजा मुँह को आने लगता और वह रोने लग जाती।

पुक्कुस बोला, "बेटी! धीरज धर! प्रभु भला करेंगे।"

सवेरे से किसी ने मुँह में अन्न-जल नहीं रखा था। पुक्कुस कहार ने बहुतेरा कहा कि वे कुछ खा लें, परन्तु किसी ने घूंट पानी तक नहीं पिया।

पासमान जैसे कटे हुए पेड़ की नाईं खाट पर पड़ा था। पुक्कुस ने उठकर दीपक जलाया और उन्हें धैर्य से काम लेने के लिए कहकर वह अपने घर चला गया।

मूली खेमा के साथ लेट गयी। बार-बार हाथ फैलाकर उस खाली स्थान को देखती और गुपचुप रोने लगती। फिर वह कल्पना करने लगती कि यह सब सपना ही है। प्रातः वह जागकर उठेगी, तो बस्सी खेमा के संग लेटी सो रही होगी···

सब चकित थे। राजधानी में प्रायः बच्चों के अपहरण की घटनाएं घटती रहती थीं—यह कोई अनोखी बात नहीं थी। परन्तु अचरज की बात तो यह थी कि किसी ने दो में से अन्धी कन्या को ही क्यों चुना?

आसपास के गली-कूचों में घबराहट फैल गयी थी। सब लोग अपने बच्चों को डाँट-डपटकर घर में बैठा रहे थे और डरावा देते थे कि घर से बाहर पैर रखोगे, तो कोई उठाकर ले जायेगा।

घर-घर में यह बात सुनी जाती थी कि राजधानी में बच्चे उड़ानेवाला कोई गिरोह आया हुआ है।

मूली को चैन नहीं पड़ती थी। वही मूली, जो गाँव जाने के लिए इतना छटपटाती रहती थी, अब चुपचाप, उदास, मन मारे बैठ गयी थी। वह दिन-भर उस गाय की तरह आँगन में डोलती फिरती थी जिसका बछड़ा खो गया हो।

पासमान अलग तड़प रहा था। बार-बार वह अपने दुर्भाग्य को कोसता था। यदि समर्थ होता, तो राजधानी का चप्पा-चप्पा

छान मारता। सिंह की माँद से भी अपनी बच्ची को निकाल लाता। मूली की आँखों में आँसू देख-देखकर उसका कलेजा मुँह को आने लगता। परन्तु अब छाती पर पत्थर रखने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था।

पुक्कुस कहार ने उन्हें बताया नहीं, परन्तु वह दिन-भर मारा-मारा फिरता रहा। पहले वह टप्पर गाड़ी ढूँढ़ता था। अब चारों ओर उसकी आँखें बस्सी को भी खोजतीं।

मूली और पासमान अब अपना सारा स्नेह खेमा पर ही लुटाने लगे थे। वह तनिक भी रोती कि मूली सब काम-काज छोड़ उसे गोद में लेकर बैठ जाती। खेमा को तनिक भी कष्ट होता कि क्या मूली, क्या पासमान और क्या विसालक्खी—तीनों रात-रात जागते। दिन-रात इन्हें यह आशंका लगी रहती कि कोई घात लगाये बैठा है और अवसर देखकर खेमा को भी उठाकर ले जायेगा।

परन्तु मूली और पासमान को एक और बड़ी चिन्ता खाये जा रही थी। उन्हें डर था कि सुमद नाम का वह व्यक्ति किसी भी दिन आ सकता है। वह खेमा को छीनकर ले जायेगा। इस कल्पना से ही दोनों का हृदय व्याकुल हो जाता। मूली मन ही मन प्रार्थना करने लगती कि सुमद न आये और खेमा उनके पास ही रहे। उनके हृदय में यह बात गहरी पैठ गयी थी कि अब बस्सी उन्हें कभी नहीं मिलेगी। इसलिए अब राजधानी में रहना भी उन्हें व्यर्थ और निरर्थक लगता था।

पासमान को भी विश्वास हो चला था कि यह सब नाग-देवता के कोप का ही फल है। जब भी उसे झाँझर गाँव की वह घटना स्मरण आती, उसके हाथों में भयंकर सरसराहट होने

लगती। वह कल्पना करने लगता कि साँप अब भी उसके हाथों में से फिसलते हुए जा रहा है। तब वह खाट की अदवायन पर हथेलियाँ रगड़-रगड़कर खाज को मिटाने का यत्न करता।

पासमान का शरीर धीरे-धीरे स्वस्थ हो रहा था। पहले उसने लाठी के सहारे चलना आरम्भ किया, परन्तु घुटने में ऐसी चोट लगी थी कि वह लँगड़ाता था। कभी बैठा-बैठा ऊबने लगता, तो लाठी के सहारे बाहर निकल जाता और आशा-भरी आँखों से देखता। कभी साहस करके आसपास की गलियों में भी चक्कर लगा आता। कहीं किसी बच्चे के रोने का स्वर सुनायी पड़ता, तो ठिठककर सुनने लगता।

परन्तु ज्यों-ज्यों दिन बीत रहे थे, उनकी आशा क्षीण होती जा रही थी। अब छाती पर पत्थर रखने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। ऐसी दशा में अपने गाँव लौट चलना ही श्रेयस्कर था। इसके साथ ही उन्होंने यह भी निश्चय किया कि वे खेमा को भी अपने साथ गाँव ले जायेंगे।

उस दिन बातों ही बातों में पासमान के मुँह से निकल गया कि वे तक्षशिला आने से पहले एक रात उस देवथली में टिके थे। सुनते ही विसालक्खी फटी-फटी आँखों से देखने लग गयी। फिर बोली, "सच ! तुम देवथली गये थे···?" वह इस तरह देख रही थी जैसे उसने कोई अविश्वसनीय बात सुन ली हो।

पासमान बोला, "क्या बात है ? इस तरह चौंककर क्यों देख रही हो ?"

विसालक्खी काँपते हुए स्वर में बोली, "बेटा ! उधर भूलकर पैर न रखना। वह थली भुतहा है ··"

पासमान बहुत डर गया। सुमद ने भी यही बात कही थी।

विसालक्खी कह रही थी, "तुमने पुण्य किये थे, यहाँ बैठे हो। देवथली में कोई भूले से भी पैर नहीं रखता। और..." आगे कहते-कहते जैसे उसकी साँस घुटने लगी। फिर बोली कि भूत-प्रेत नाना रूप धरे वहाँ विचरते हैं। प्रेतात्माएँ कभी मनुष्य का रूप धरकर, कभी जीव-जन्तुओं के वेश में आती हैं और मनुष्यों को लालच देकर देवथली के भीतर ले जाती हैं। जो कोई वहाँ पैर रखता है, पंगु हो जाता है।

सुनकर मूली और डर गयी। पासमान के घुटने की चोट भरने में नहीं आती थी। मूली को भ्रम हो गया और सोच-सोचकर उसे बड़ी व्यथा हुई कि कहीं यह सब देवथली में पैर रखने के कारण ही तो नहीं हुआ?

विसालक्खी ने पूछा, "तुम्हें कोई लकड़हारा तो नहीं मिला था?"

पासमान ने चौंककर देखा, "हाँ! क्यों?"

विसालक्खी की आँखें भय से फैल गयीं। फिर उसने एक बड़ी डरावनी घटना सुनायी। वह बोली कि एक बार एक मनुष्य इस देवथली में अकेला जाकर पेड़ के नीचे बैठ गया था। एकाएक उसे लगा कि उसके बायें पंखुड़े[1] से लहू निकलने लगा है, जैसे कोई पकड़कर बाँह उखाड़ रहा हो। वह भयभीत होकर दौड़ा। यह तो कहो कि देवथली से निकलते ही रक्त बन्द हो गया। फिर वह भागा-भागा तक्षशिला पहुँचा। सचमुच उसकी बाँह चिर गयी थी। कुशल वैद्यों ने उसकी बाँह को यथावत जोड़ दिया...उस दिन के पश्चात किसी मनुष्य ने उस देवथली में पैर नहीं रखा...

यह घटना किसी ने अपनी आँखों से नहीं देखी थी। स्पष्ट

१. कन्धे और बाँह का जोड़।

था कि कपोल-कल्पित थी। फिर भी, विसालक्खी के वर्णन में ऐसी चाशनी थी कि दोनों डर गये। लकड़हारा उन्हें मला था और उसी के कहने पर वे देवथली गये थे। फिर सुमद नामक वह रहस्यपुरुष कौन था, जो एक बालिका उन्हें सौंपकर चला गया था और आज तक वह कन्या की सुधि लेने नहीं आया? क्या वह मनुष्य न होकर कोई भूत, प्रेतात्मा थी जो खेमा उन्हें सौंप गयी थी?

विसालक्खी गोट्ठ के भीतर गयी, तो मूली और पासमान आँख बचाकर खेमा को देखने लगे। मूली उसके हाथ-पैरों को छू-छूकर देख रही थी। अबोध बालिका चुपचाप सोयी थी। कोई ऐसी बात उसमें दिखायी नहीं देती थी जो विलक्षण या अलौकिक हो।

विसालक्खी के मुख से वह विचित्र घटना सुनकर वे प्रतिक्षण व्याकुल रहने लगे। कभी सोचते कि खेमा के विषय में विसालक्खी और पुक्कुस को सब बता दें। परन्तु इतना साहस नहीं जुटा पाते थे।

कई दिनों से बात फैल रही थी। किसी को सहज विश्वास ही नहीं होता था, परन्तु बस्सो के अदृश्य होने के कुछ ही दिनों पश्चात जब अचानक स्कन्धावार (छावनी) से एक विशाल सेना निकलकर सड़कों पर चलने लगी, तो सारी राजधानी में खलबली मच गयी।

विसालक्खी अभी नगरकोट पर आकर बैठी ही थी। एका-एक कोलाहल हुआ और भगदड़ मची, तो वह घबराकर देखने लगी। पूर्वी आकाश में धूल के बादलों ने उगते हुए सूर्य को ढक लिया था। तभी आती हुई सेना के असंख्य घोड़ों की टापें सुनायी

पड़ीं और फिर हाथियों के घण्टे।

विसालक्खी का कलेजा काँप गया। जल्दी-जल्दी वह अपनी मचिया उठाकर पेड़ों के नीचे चली गयी, जहाँ बहुत-से भयभीत लोग दुबककर बैठे थे।

घोड़ों की टापें धीरे-धीरे निकट आ रही थीं। विसालक्खी मुँह-सिर ढाँपे बैठी थी। सब ओर इतनी धूल छा गयी कि हाथ को हाथ दिखायी नहीं देता था।

देखते ही देखते घुड़सवार आ पहुँचे और नगर-द्वार से निकलकर बाहर जाने लगे। बड़ी देर तक वे निकलते रहे। फिर उनके पश्चात एकाएक भेड़-बकरियों और साँड़-बैलों के स्वर सुनायी पड़े। सभी चकित होकर देखने लगे। सेना में भेड़-बकरियों का क्या काम! ऐसा प्रतीत होता था जैसे उनका बहुत बड़ा रेवड़ घुड़सवारों के पीछे-पीछे जा रहा हो।

भेड़-बकरियों का रेवड़ निकलकर गया, तो हाथियों के घण्टे सुनायी पड़े। बड़ी भारी गजसेना जा रही थी। धूल के आवरण में बड़ी देर तक सेना के विभिन्न अंग निकलकर जाते रहे और विसालक्खी मुँह-सिर ढाँपे बैठी रही। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह ताँता कभी समाप्त नहीं होगा।

सेना निकलकर गयी, तो बड़ी देर तक धूल नहीं छँटी। डरे हुए लोग धीरे-धीरे निकलकर घरों की ओर भाग रहे थे। विसालक्खी भी गिरती-पड़ती घर पहुँची। नगर-द्वार पर रखी उसकी चाटियों के ठीकरे उड़ गये थे।

मूली और पासमान घबराये हुए उसी की राह देख रहे थे। विसालक्खी आते ही बोली, "भारी विपदा आनेवाली है। लोहे से लोहा बजेगा। लड़ाई छिड़नेवाली है। सब लूटकर ले जायेंगे। कोई वस्त किसी दाम पर नहीं मिलती थी। सेट्ठी कहापणों की थैलियाँ लिये घूमते थे और अन्न नहीं मिलता था। फिर वैसे ही

अशुभ दिन आनेवाले हैं...''

तभी पुक्कुस कहार भी आ गया। उसने जो बात बतायी, तो सब हैरान रह गये। वह बोला, ''यह सेना लड़ाई लड़ने नहीं जा रही है। उपराज ने म्लेच्छ राजा को प्रसन्न करने के लिए हाथी-घोड़े, भेड़-बकरियों और बैल-साँड़ भेजे हैं और उसे तक्कसिला जाने का निमन्त्रण दिया है...''

यह तो और भी भयंकर समाचार था। इसका अर्थ यह था कि किसी भी दिन विदेशी सेनाएँ राजधानी में प्रविष्ट हो सकती थीं।

दूध का जला छाछ को भी फूँक-फूँककर पीता है। तक्षशिला की सेना जब नगरकोट से निकलकर सिन्धु-तट की ओर बढ़ी, तो आसपास के गाँवों-कस्बों में ऐसा आतंक फैला कि भगदड़ मच गयी। दोपहर होते-होते ग्रामीणों के झुण्ड के झुण्ड राजधानी में प्रविष्ट होने लगे।

यह कोई नयी बात नहीं थी। सदा ऐसे ही होता आया था। जब सेनाएँ प्रयाण करती थीं, तो युद्ध के बादल मँडराने लगते थे। लड़ाई होती थी और आसपास के गाँवों को बड़ी हानि उठानी पड़ती थी। आक्रमणकारी सेनाएँ आतीं, लूटपाट करतीं और फिर खड़े खेतों में भी आग लगा देतीं। इसलिए तनिक भी सैनिक हलचल हुई नहीं कि लोग राजधानी की ओर भागने लगते थे।

उस दिन के पश्चात भागकर आनेवालों का ऐसा ताँता लगा कि फिर टूटा नहीं। सुरक्षा पाने को आतुर लोग सिर पर गठरी-पोटली उठाये, ढोर-डंगरों को हाँकते हुए भागे आ रहे थे। राजधानी पहुँचनेवाले मार्गों पर सामान से लदे ऊँटों, खच्चरों,

गधों, घोड़ों और बैलगाड़ियों के झुण्ड के झुण्ड दिखायी पड़ते। ऐसा प्रतीत होता था जैसे गाँव के गाँव उठकर आ रहे हों। जिसके सींग जहाँ समाते, वहीं वह डेरा जमा लेता। कुछ ही दिनों में राजधानी के गली-कूचे, हाट, मैदान—जहाँ भी रिक्त स्थान था—शरणार्थियों से भरने लगे। धूप से बचने के लिए ये लोग खेस और चादर के तम्बू बनाकर सिर छिपाने का जुगाड़ कर लेते। विसालक्खी के घर के साथ जो विशाल चट्टा था, वहाँ जैसे तिल धरने को स्थान नहीं बचा।

ऐसी स्थिति में राजधानी से बाहर पैर रखना जोखिम मोल लेने के बराबर था। कई बार मूली और पासमान सोचते कि वे चुपचाप निकल जायें परन्तु जैसे किसी ने उनकी टाँगों को जकड़-कर रख दिया था। फिर बिना किसी सवारी के वे इतनी लम्बी यात्रा पर कैसे निकलते! खोयी हुई टप्पर गाड़ी मिलने की अब कोई आशा नहीं थी। हाँ, जैसा कि मूली ने सोच रखा था, नयी बैलगाड़ी वे मोल ले सकते थे, खेमा के साथ जो थैली उन्हें मिली थी, वह पणों से भरी हुई थी और उसमें से उन्होंने एक मासक भी नहीं निकाला था। धरोहर में पासमान हाथ नहीं डालना चाहता था, परन्तु यदि यही स्थिति रही, तो ऐसा करने को भी वे विवश हो सकते थे।

मूली और पासमान दिन-रात छटपटाते रहते। विसालक्खी उन्हें ढाढ़स बँधाती। कहती कि स्थिति सुधरते ही वह कोई बैलगाड़ी उन्हें मोल दिलवा देगी और जितना बन पड़ा, वह अपनी गाँठ से भी व्यय करेगी।

परन्तु स्थिति दिन-प्रतिदिन बिगड़ती ही चली गयी। शरणार्थियों के झुण्ड के झुण्ड सवेरे-साँझ आते रहते और पानी तक के लिए घण्टों कुओं, रहटों पर खड़े रहना पड़ता था।

फिर, जैसा कि विसालक्खी ने कहा था, खाने-पीने की वस्तुओं

क्षा भी अभाव हो गया। बणिकों की बन आयी। दण्डयुधाधर और राजकर्मचारी अत्याचार करते फिरते थे। इसके साथ ही यह राजाज्ञा भी निकल गयी कि तक्षशिला में सब पगड़बन्ध पुरुषों से अद्धपण बलि उगाही जायेगी।

तीसरी लीक

उस दल में तीस-चालीस ग्रामीण परिवार थे, जो आक्रमण से बचने के लिए राजधानी की ओर भाग रहे थे। दोपहर होते-होते वे एक बावड़ी पर पहुँचे और ढोर-डंगरों को चारा-पानी देकर फिर चल पड़े।

परन्तु विचक्खण को कोई जल्दी नहीं थी। वायुमण्डल तप रहा था। रात-भर वह इन ग्रामीणों के साथ चलकर आया था। इसलिए अब तुरन्त यात्रा करना उसका मनोरथ नहीं था। गव और सुलसा (बन्दर-बँदरिया) की रस्सियाँ पेड़ के साथ बाँधकर उसने झोला सिर के नीचे रख लिया और सघन छाया में लेटकर खर्राटे भरने लगा। वह नहीं जानता कि कब सूर्य पश्चिम दिशा की ओर झुक गया और फिर कब झक्कड़-सा चलने लगा। वह लम्बी ताने सो रहा था।

तभी एकाएक किसी शिशु के रोने का स्वर उसके कानों में पड़ा। एकबारगी वह चौंककर उठ बैठा। फटी-फटी आँखों से देखने लगा। इस स्वर ने जैसे कोई भूली-बिसरी स्मृति फिर से जगा दी थी।

पेड़ों के झड़ते पत्ते उड़-उड़कर फैल रहे थे। परे एक पेड़ के नीचे एक स्त्री और पुरुष बैठे थे। उनकी पीठ विचक्खण की ओर थी। वेशभूषा से वे भिखारी लगते थे। स्त्री की गोद में ही कोई शिशु रो रहा था।

शिशु-स्वर सुनकर विचक्खण को बरबस बस्सी का स्मरण हो आया। बीते दिनों की एक-एक घटना उसकी आँखों के आगे से निकलकर जाने लगी। रह-रहकर बस्सी की ज्योतिहीन बड़ी-बड़ी आँखें चमकने लगीं। विचक्खण व्याकुल होकर देखने लगा, परन्तु उसने सोचा भी नहीं था कि जिस शिशु-स्वर को सुनकर वह चौंका था, वह और कोई नहीं बस्सी ही थी।

विचक्खण धीरे से उठा। बावड़ी में उतरकर उसने दो घूंट पानी पिया और फिर ऊपर आकर वहीं बैठ गया।

भिखारी और भिखारिन अधिक अवस्था के नहीं थे। भिखारी के सिर और दाढ़ी के बाल बहुत बढ़े हुए थे। भिखारिन के केश झक्कड़ में उड़-उड़कर उसके मुँह पर पड़ रहे थे। शिशु को गोद में लिटाकर वह दूध पिला रही थी।

विचक्खण उधर ही देख रहा था। तभी भिखारिन ने शिशु को एक घुटने से उठाकर दूसरे घुटने पर लिटाया, तो विचक्खण आँखें फाड़े देखता रह गया। सहसा उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। भिखारिन की गोद में और कोई नहीं, बस्सी ही थी! घोर अचरज! बस्सी इन भिखारियों के पास कैसे आयी? विचक्खण हतप्रभ-सा देख रहा था।

बस्सी फिर रोने लगी थी। अब किसी प्रकार का सन्देह नहीं था। यह स्वर बस्सी का ही था। उसके गले में पड़ा बघनखा भी उसने देख लिया था।...यह क्या रहस्य है? कैसी माया है? बस्सी इन भिखारियों की गोद में कैसे? मूली और पासमान कहाँ हैं?...

बस्सी निरन्तर रोये जा रही थी। भिखारिन उसे बार-बार पुचकारती और थपथपाती थी, परन्तु वह चुपाये चुप नहीं होती थी। विचक्खण चाहता था कि किसी बहाने वह उनके निकट जाकर बस्सी को देखे।

वह उठकर खड़ा हो गया और दूसरी बार बावड़ी में उतरकर पानी पी आया। फिर भिखारियों से कुछ अन्तर पर खड़ा होकर वह देखने लगा। विचक्खण ने साहस बटोरा। फिर धीरे-धीरे चलकर वह भिखारियों के निकट आया। और जैसे सहमा-सहमा सा बोला, "बच्चा बहुत देर से रो रहा है। लाओ, हम चुपाये देते हैं। बन्दर का खेल दिखायेंगे। मुट्ठी-भर अनाज दे देना···"

भिखारी ने मुँह उठाकर उसको ओर देखा। उसे कंखोरी रोग था, जिससे उसकी आँखों से दुर्गन्ध आती थी। भिखारी ने पहचान लिया कि यह वहीं बन्दरवाला है, जिसे यहाँ आकर उन्होंने पेड़ के नीचे सोये हुए पाया था। उन्हें लेशमात्र भी सन्देह नहीं हुआ कि वह किस प्रयोजन से चलकर उनके पास आया है। इसलिए भिखारी निःशंक भाव से बोला, "वचवा! किसको खेल दिखायेगा? कन्या तो अन्धी है···"

विचक्खण जैसे चौंकने का नाट्य करते हुए बोला, "कन्या अन्धी है! क्या कहते हो?"

विचक्खण के पीले चेहरे को देखते हुए भिखारी बोला, "अरे, तू तो ऐसे देख रहा है जैसे साँप सूंघ गया हो···"

विचक्खण ने तुरन्त अपने आपको संयत किया। वह भनक तक नहीं पड़ने देना चाहता था कि वह बस्सी को जानता है। परन्तु फिर भी उसकी आँखें भर आयीं और यह बात भिखारियों से छिपी न रह सकी। भिखारिन बोली, "अरे! तेरी आँखों में अथरू! तू रो रहा है?···"

विचक्खण सँभल गया, तुरन्त उसने बहाना किया, "वैसे ही···हमारी भी एक वहन थी, जनम से अन्धी···"

भिखारी ने सहानुभूति के स्वर में पूछा, "कितनी बड़ी थी तुम्हारी बहन···"

विचक्खण का कलेजा जैसे मुँह को आने लगा। कुछ क्षण

तो जैसे उसके कण्ठ से शब्द नहीं निकले। फिर वह डबडवायी आँखों से बोला, "इतनी ही थी, जितनी यह कन्या है…"

भिखारी उसे एकटक देख रहे थे। भिखारिन ने उसे अपने निकट बैठा लिया और पूछने लगी। बस्सी दूध पीते-पीते सो गयी थी और भिखारिन के घुटने पर उसका सिर लटका हुआ था। विचक्खण ने देखा कि वह बहुत दुबली हो गयी थी।

भिखारी ने पूछा, "तेरी बहन जनम से अन्धी थी?"

विचक्खण ने स्नेह-भरी आँखों से बस्सी की ओर देखा और कहा, "हाँ, जनम से…!"

भिखारी जैसे सारी बात समझ गये। उन्होंने अनुमान लगाया कि इस लड़के की अभागी बहन सम्भवतः अब जीवित नहीं है।

अब विचक्खण भी यह पता लगाना चाहता था कि यह बस्सी इन भिखारियों के पास कैसे आयी। बोला, "कन्या की आँखों की जोत कैसे गयी?"

यह सुनते ही भिखारी के मुख से गहरी साँस निकल गयी। बोला, "सारी बात जानकर तू क्या करेगा, बचवा!"

परन्तु विचक्खण हठ कर रहा था। तब भिखारी ने जो बात बतायी, उसे सुनते ही विचक्खण जैसे आकाश से गिरा! भिखारी की बात का उसे विश्वास नहीं हुआ। वह कह रहा था, "बचवा! अब तुझसे भी क्या छिपायें! यह तो हम नहीं जानते कि इस कन्या की आँखों की जोत कैसे गयी, पर यह हमारी बेटी नहीं है…"

विचक्खण ने चकित होकर पूछा, "तुम्हारी बेटी नहीं है। क्या कहते हो?…"

भिखारी कुछ क्षण बैठा सोचता रहा और अन्त में बोला, "हाँ, यह हमारी बेटी नहीं है। जंगल में पड़ी मिली थी!"

"जंगल में पड़ी मिली थी!" विचक्खण जैसे आँखें फाड़े देख रहा था, "क्या कहते हो?"

भिखारी जैसे सोच-सोचकर बोल रहा था, "हाँ, सच कहते हैं। यह हमें जंगल में पड़ी मिली···" और वह बताने लगा कि किस तरह कुछ दिन पहले वे जंगल में जा रहे थे कि अचानक किसी बच्चे के रोने का स्वर सुन वे दौड़कर गये। एक पेड़ के नीचे यह कन्या पड़ी रो रही थी। बस, उसे उठाकर वे ले आये और पालने लगे। यह तो उन्हें पीछे जाकर पता चला कि कन्या अन्धी है···

विचक्खण एकाग्र होकर यह कहानी सुन रहा था। भिखारी ने जैसे अन्तिम बात बोलते हुए कहा, "बचवा! हमें तो लगता है, इसके माता-पिता अन्धी होने के कारण कन्या को जंगल में छोड़ गये···"

यह सब ऐसी चौंकानेवाली बातें थीं कि विचक्खण को सहसा विश्वास करते नहीं बना। उसकी आँखों के आगे जैसे अँधेरा छाने लगा। '···कहीं ऐसा तो नहीं कि मूली और पासमान अन्धी बस्सी को जंगल में छोड़ गये हों···!'

विचक्खण के भीतर जैसे झंझावात उठ खड़ा हुआ। उसके हृदय में बस्सी के प्रति स्नेह और दया-ममता उमड़ी पड़ती थी और पासमान और मूली के प्रति घोर घिन और घृणा!···

परन्तु शीघ्र ही वह संयत होकर बैठ गया। वह नहीं चाहता था कि भिखारियों को भनक तक पड़े कि वह बस्सी को जानता है। वह चुपके से उठा और अपने पेड़ के नीचे आकर बैठ गया।

उसका मन रो रहा था। यदि भिखारियों ने सच बात बतायी है, और ऐसा कोई कारण नहीं कि वे झूठ बोलते—तो अवश्य ही मूली और पासमान ने तंग आकर जन्मान्ध बस्सी को जंगल में

छोड़ दिया होगा ! परन्तु कोई मनुष्य क्या इतना निर्मम, निर्दय और निष्ठुर हो सकता है ? क्या कोई अपनी सन्तान को ही मरने के लिए जंगल में डाल सकता है…!

ये लोग अभी बैठे ही थे कि ग्रामीणों का एक और दल वहाँ आ पहुँचा। ये लोग भी राजधानी की ओर जा रहे थे। अधिक देर वहाँ न रुककर वे चल पड़े। दोनों भिखारी भी उनके साथ हो लिये, तो विचक्खण भी उठकर खड़ा हो गया।

अब विचक्खण उनके साथ छाया की तरह लग गया। मार्ग लम्बा और धूल-भरा था। रह-रहकर आँधी चलती थी। मुँह, आँख, नाक, कान में मिट्टी भर जाती थी। सूर्य उतराई पर था और आधे से अधिक चन्द्रमा भी आकाश पर निकल आया था।

धीरे-धीरे विचक्खण ने भिखारियों का स्नेह पा लिया। उनके साथ उसकी घनिष्ठता हो गयी। भिखारी का नाम उदय और भिखारिन का नाम वेणी था और बस्सी का नाम उन्होंने शकुन्तला रख लिया था। भिखारियों ने यह कल्पना तक नहीं की थी कि यह जो लड़का इस लाड़-प्यार से कन्या को गोद में उठाये-उठाये चलता है, वह उसे पहले से जानता है, पहचानता है और उससे स्नेह करता है।

बस्सी को देख-देखकर विचक्खण की आँखें भर आतीं। बार-बार मूली और पासमान की हृदयहीनता, क्रूरता पर झुँझलाहट होती। भिखारियों ने जो कुछ कहा था, उसे झूठ मानने का कोई कारण नहीं था। विचक्खण सोचने लगता कि बस्सी को जंगल में छोड़ने का निश्चय किसने किया होगा—मूली ने अथवा पासमान ने ! मूली से उसे ऐसी अपेक्षा नहीं थी। भला कोई माँ अपनी कोख से जनमी सन्तान के साथ ऐसा व्यवहार कर सकती है,

उसके प्रति इतनी निर्ममता दिखा सकती है ?

"हो न हो," अन्त में विचक्खण इसी निष्कर्ष पर पहुँचा, "यह सारी करतूति पासमान की ही होगी..."

और यह सोचते-सोचते विचक्खण के हृदय में पासमान के लिए घृणा और आक्रोश का सागर उमड़ने लगा।

मार्ग में स्थान-स्थान पर और ग्रामीण भी इस दल में आ मिलते थे। ये सब लोग अपने खेत-खलिहान, घर-बाहर, सर्वस्व त्यागकर प्राण बचाने के लिए भाग रहे थे। उपज खेतों में खड़ी थी और उनके शोक का पारावार नहीं था। कोई पूछे उस किसान से जिसका अनाज खेतों में पकने जा रहा हो और वह उसे काट न सके; उसे घर से भागने को विवश होना पड़े।

साँझ होते-होते चन्द्रमा ऊपर उठ आया। धीरे-धीरे वायु-मण्डल ठण्डा हो रहा था। इसलिए सब लोगों ने निश्चय किया कि रात चलकर वे राजधानी पहुँचेंगे।

विचक्खण एक पल के लिए भी भिखारियों को आँखों से ओझल नहीं होने देता था। कभी सोचता कि इन्हें सच्ची बात बता दे, परन्तु न जाने क्या सोचकर चुप्पी लगा जाता था।

धीरे-धीरे अँधेरा घिर आया। सार्थ चलता रहा। भाग्य के मारे ग्रामीण शीघ्र से शीघ्र राजधानी तक्षशिला की सुरक्षित चारदीवारी में पहुँचने को उत्कण्ठित थे।

•

रात का तीसरा याम समाप्त होते-होते चन्द्रमा अस्त हो गया और चारों ओर अन्धकार छा गया। ये लोग बंजर भूमि, खेतों, जंगलों में से होते हुए यहाँ तक आ पहुँचे थे। सोचते थे कि सूर्य निकलने के साथ-साथ राजधानी के निकट पहुँच जायेंगे।

विचक्खण स्वयं को जैसे घसीटकर ले जा रहा था। थकावट

के मारे उससे चलना दूभर हो गया था। उसे चिन्ता इसी बात की थी कि कहीं उदय और वेणी उसकी आँखों से ओझल न हो जायें।

धीरे-धीरे पौ फटने लगी थी। उजाला होने के साथ वे राजधानी के निकट जंगल में जा पहुँचे। जंगल को पार करते ही चारों ओर खेत ही खेत दिखायी पड़ते थे जिनमें सोने जैसी लहलहाती गेहूँ की उपज खड़ी थी। देख-देखकर किसानों के हृदय उमड़ पड़े।

विचक्खण इस समय मूली और पासमान के अतिरिक्त और कुछ सोच नहीं रहा था। कभी तो उनको निष्ठुरता की बात सोच-सोचकर आगबगूला हो जाता और कभी उसे विश्वास ही न होता कि कोई मनुष्य ऐसा नीच कर्म कर सकता है! वह सोचने लगता कि यदि उन्हें ऐसा करना था, तो वे इसके लिए इतनी दूर क्यों आये? इतनी जोखिम उठाने की क्या आवश्यकता थी? मार्ग में घने जंगल और घाटियाँ पड़ती थीं। कहीं भी वे अपना मुँह काला कर सकते थे।

यह सोच-सोचकर वह सन्देहपूर्ण दृष्टि से भिखारियों को देखने लगता।

ये लोग चलकर बड़ी सड़क पर आये और अरोह नदी के तट के साथ-साथ राजधानी की ओर बढ़े। इसी मार्ग से कुछ दिन पूर्व घायल पासमान राजधानी लौटा था।

विचक्खण चकित होकर देख रहा था। नगर-द्वार में प्रविष्ट होते ही इतनी भीड़, इतना कोलाहल, इतने घर-मकान उसने पहले कभी नहीं देखे थे। सारी राजधानी में जैसे तिल धरने को स्थान नहीं था। जहाँ भी दृष्टि जाती, शरणार्थियों के ठठ के ठठ

दिखायी पड़ते थे। जिसको जहाँ स्थान मिला था, वहीं उसने डेरा जमा लिया था। धूप-गरमी से बचने के लिए कोई बैलगाड़ी के नीचे, कोई ऊँट की ओट में बैठा था।

शरणार्थियों के इस नये दल को देखते ही पहले बैठे शरणार्थी चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगे कि आगे जाओ, आगे जाओ। ये लोग बहुत थक चुके थे। कहीं भी पड़ रहना चाहते थे। परन्तु किसी ने उन्हें टिकने नहीं दिया और वे भटकने लगे। नगर-निवासी अपने घरों के आगे बैठने नहीं देते थे और आँखें दिखा-दिखाकर खदेड़ते थे। विपदा में मनुष्य, मनुष्य के काम नहीं आ रहा था।

सूरज चढ़ आया। गरमी के मारे सब व्याकुल होकर भटक रहे थे। कोई इन्हें कुओं से पानी तक नहीं लेने देता था। भटकते-भटकते ये लोग दक्षिणी भाग में जा पहुँचे। वहाँ एक गन्दा नाला था और उससे परे छोटी जाति के लोगों का मसाण (श्मशान) था। नाले में सारे नगर का गन्दा पानी और कचरा बहकर आता था और असौंध के मारे नाक फटी जाती थी। परन्तु अब और कोई चारा नहीं था। नाले के साथ ही खाली भूमि पर इन्होंने डेरा डाल दिया। यहाँ एक सुविधा थी। नाले के उस पार घर-मकानों के बीच एक बड़ा शिवालय और उसके साथ लगी हुई एक बावड़ी थी।

उदय और वेणी तथा विचक्खण एक पेड़ की छाया में बैठ गये। उनमें इतनी शक्ति नहीं थी कि उठकर बावड़ी पर जाते। परन्तु जब बस्सी रोयी, तो विचक्खण उठकर पानी ले आया। बस्सी को गोद में लिटाकर उसने अपने हाथ से पानी पिलाया। फिर उसे वेणी की गोद में देकर वह वहीं पसर गया। सोना चाहता था, परन्तु कल से उदर में अन्न का एक दाना नहीं गया था और अंतड़िया कुलबुला रही थीं।

उदय और वेणी लेटकर ऊँघने लगे थे। बस्सी भी दूध पीते-पीते सो गयी थी। जब विचक्खण से अधिक सहा नहीं गया, तो वह उठ खड़ा हुआ और कन्धे पर झोला लटकाये चल पड़ा और पुल पार करके बस्ती में आ गया।

शिवालय के साथ एक गली जाती थी। दोनों ओर ऊँची-ऊँची ड्योढ़ियाँ थीं, जिनमें पक्षियों के छींके लटक रहे थे। वह किसी ऐसे उपयुक्त स्थान की खोज में था जहाँ बैठकर बन्दर का खेल दिखाता।

चलते-चलते वह एक चतुष्क (चौक) में पहुँचा। यहाँ बैठकर वह खेल दिखा सकता था। भाग्य से मुट्ठी-भर अनाज या एक रोटी मिल जायेगी। बस, वह डमरू निकालकर बजाने लगा।

डमरू का स्वर सुनते ही बच्चे घरों से निकल-निकलकर आने लगे। सब उछल रहे थे, क्योंकि बहुत दिनों के पश्चात कोई बन्दरवाला आया था। वे खेल देखने को मचलने लगे। विचक्खण भूखा था। डमरू नीचे रखकर बोला, "बड़े अच्छे खेल दिखाऊँगा। घर से रोटी ले आओ, कटोरी आटा ले आओ..."

बच्चे भागते हुए गये। विचक्खण की आँखों में आशा की किरण चमक उठी। उसने झोले में से बाँसुरी निकाली और तान छेड़ने ही जा रहा था कि एकाएक पीछे की ड्योढ़ी में किसी स्त्री के चिल्लाने का स्वर सुनायी पड़ा। विचक्खण ने मुड़कर जो देखा, तो लहँगे-चोली में एक थुलथुल स्त्री एक बालक का कान उमेठते हुए घसीट रही थी और विचक्खण की ओर आग्नेय आँखों से देख-देखकर कुछ बोल रही थी।

विचक्खण ने उस कर्कशा का यह रौद्र रूप देखा, तो उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी। उसे लगा कि यदि वह भागा नहीं, तो यह स्त्री ड्योढ़ी से उतरकर उसे कच्चा ही चबा जायेगी। बस, जल्दी-जल्दी उसने झोला उठाया और प्राण बचाकर भाग खड़ा

हुआ। पीछे वह स्त्री चौखट में खड़ी भुनभुनाती हुई बोल रही थी, "कलमुँहा साँटिया जातकों को बहकाकर आँटा-चणक माँगता है! जानता नहीं, कह।पण में पयीणों[1] अनाज नहीं मिलता आजकल..."

विचक्खण ऐसे भागा कि उसने फिर मुड़कर नहीं देखा। वह दौड़ा, तो जैसे ड्योढ़ियों में लटके छींकों के पक्षी भी उसकी खिल्ली उड़ाने लगे। वह गली में इस तरह दौड़ रहा था जैसे वह जल्दी से निकलकर नहीं गया, तो दोनों ओर के मकान चक्की के पुड़ों की तरह उसे पीस डालेंगे।

बावड़ी के निकट पहुँचकर ही उसने साँस ली। हाँफते हुए वह एक मकान की छाया में बैठ गया। झर-झर उसकी आँखों से आँसू बहने लगे।

गली के कुत्ते बन्दरों पर भौंक रहे थे। निकट आने से वे डरते थे, और दूर खड़े होकर विरोध प्रकट कर रहे थे। विचक्खण ने लाठी पटपटायी, तो वे भागे और फिर एक मकान के पीछे से आकर भौंकने लगे।

विचक्खण बैठा-बैठा बिसूर रहा था—"हमने ऐसा क्या पाप किया है, दुर्भाग्य हमारे पीछे हाथ धोकर पड़ा है?"

नाले के पार वेणी और उदय उठकर बैठ गये थे और कुछ खा रहे थे। विचक्खण वहीं बैठा रहा। जब तक वे खा नहीं चुके, वह उनके निकट नहीं गया।

विचक्खण धीरे-धीरे चलकर आया, तो उदय ने कहा, "बिटवा, तनिक लोटा ले जा और पानी भर ला..."

विचक्खण ने बन्दरों को पेड़ के साथ बाँधा और बावड़ी पर पानी लेने चला गया। दो घूँट पानी पीकर वह कुछ क्षण वहीं

१. एक माप।

बैठा रहा, परन्तु पेट की ज्वाला कहीं पानी से बुझती है ?

पानी का लोटा उन्हें देकर वह चुपचाप पेड़ के तने के साथ बैठ गया और गन्दे नाले में बहते हुए पानी को देखने लगा।

खा-पीकर उदय और वेणी लेट गये थे। बस्सी वेणी की बगल में सो रही थी।

विचक्खण भी आँखें मूँदे लेट गया। कुछ देर सो लेना चाहता था, परन्तु पेट में तो ज्वाला धधक रही थी। नींद कैसे आती! वह फिर उठकर बैठ गया और थकी-थकी आँखों से देखने लगा।

उदय और वेणी लम्बी ताने सो रहे थे। विचक्खण कुछ देर बैठा देखता रहा। फिर बन्दरों को खोलकर वह चुपचाप उठा और नाले के साथ-साथ चलने लगा। दिन को और शरणार्थी आ गये थे और रिक्त भूमि घिर गयी थी। विचक्खण को लग रहा था जैसे संसार के सब जीव दुःखी और सन्तप्त हैं, व्याकुल हैं, भूखे हैं। तिल-तिल धरती पर भूखे, अभावग्रस्त और विपदा के मारे लोग बैठे क्रन्दन कर रहे हैं···हम भूखे हैं, हमें अन्न दो···

नाले के साथ-साथ चलते हुए वह बहुत दूर निकल आया। एकाएक उसे कुछ ध्यान आया, वह झोला टटोलने लगा। उसके झोले में अंजनदानियाँ और सलाइयाँ रखी थीं। वह खड़ा-खड़ा सोचने लग गया कि क्यों न वह सामने हट्टीवाले के हाथ इन्हें बेच दे। पेट भरने योग्य अनाज तो मिल ही जायेगा।

वहाँ दो गलियाँ आकर मिलती थीं। मिलन-बिन्दु पर ही वह हट्टी थी। चौखट के साथ पटड़े पर एक काला-कलूटा, बणिक बैठा था और घड़े में से तेल निकाल-निकालकर गड़ुवे में डाल रहा था। दायीं ओर की गली में किसी लोहार की हट्टी थी।

गर्म लोहे पर हथौड़े पड़ने से घन-घन की ध्वनि गूंज रही थी।

विचक्खण डरता था। बणिक कहीं डपटकर भगा न दे! उसे प्रतीत होता था जैसे आगे कोई आग की नदी बह रही है जिसे लाँघकर जाना असम्भव है। फिर उसे यह लगने लगा कि यदि वह इस आग की नदी को लाँघकर उस पार पहुंच भी गया, तो वह राक्षस-सा लगनेवाला काला-कलूटा बणिक अपने पैने नखों से उसे फाड़कर खा जायेगा।

बणिक की आकृति किसी दानव से कम विकराल नहीं थी। उसका सिर घुटा हुआ था। लम्बी खुली चुटिया पीठ पर लटक रही थी। दाढ़ी-मूँछ नहीं थी। सारे शरीर पर जैसे धूल और पसीने की परतें जमी हुई थीं। वह अपने काम में व्यस्त था। तभी उसकी दृष्टि विचक्खण पर गयी। आशा के विपरीत बणिक धीरे से मुस्काया और उसे अपने निकट आने के लिए संकेत करने लगा। उसका व्यवहार देखकर विचक्खण जैसे गढ़ गया...यह तो बड़ा भला मनुज है।...सोच-सोचकर विचक्खण बड़ा लज्जित हुआ। फिर वह साहस बटोरकर धीरे-धीरे आगे बढ़ा। जिस आग की भीषण नदी की कल्पना उसने की थी, वह जैसे देखते ही देखते अन्तर्धान हो गयी थी।

"बिटवा!" बणिक ने बड़े स्नेह से कहा, "क्या चाहिए?"

उसका सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार देखकर विचक्खण का सारा आक्रोश, सारा सन्देह पल-भर में दूर हो गया। उसने कुछ कहना चाहा, परन्तु उसके मुख से स्वर नहीं निकल रहा था। अन्त में वह बोला कि उसके पास अंजनदानियाँ हैं, सलाइयाँ भी हैं। क्या हट्टीवाला इन्हें मोल लेगा?

विचक्खण कह तो गया, परन्तु उसे लगा कि सुनते ही हट्टी-वाला उसे डपटकर भगा देगा। परन्तु बनिया जैसे गद्गद कण्ठ से बोला, "क्यों नहीं, क्यों नहीं, ला निकालकर दिखा, बिटवा..."

विचक्खण ने झोले में हाथ डालकर कुछ अंजनदानियाँ और सलाइयों का गट्ठर निकाला। उन्हें बनिये के आगे पटड़े पर रखकर वह आशा-भरी दृष्टि से देखने लगा। बनिये ने तेल का गड़ुवा नीचे रखा और सलाइयों को वह उलट-पलटकर देखने लगा।

विचक्खण का कलेजा धुक-धुक कर रहा था। उसे लगा कि बनिये को दोनों पसन्द हैं। किन्तु एकाएक बनिये ने नाक-भौं सिकोड़ी और कहा, "बिटवा ! सलाइयाँ जँची नहीं। कोई इनसे अंजन लगायेगा, तो आँख नहीं फूट जायेगी···।"

विचक्खण का चेहरा मुरझा गया। बनिया कनखियों से देख रहा था। तनिक मुस्काते हुए बोला, "अच्छा ! तुझ पर दया करके रखे लेता हूँ। पर एक बीसी अंजनदानियाँ और दो बीसी सलाइयाँ, इनके बदले डेढ़ मुट्ठी चणक मिलेगा। बोल, स्वीकार है ? नहीं तो अपनी राह देख। यह धरी हैं। कोई और हट्टी देख···"

बनिया जल्दी-जल्दी बोलकर कह गया, तो विचक्खण के भीतर जैसे आक्रोश का सागर उमड़ पड़ा। उसका मन करता था कि वह बनिये के काले मुँह पर तमाचा जड़ दे। परन्तु रक्त का घूँट पीकर रह गया। कई-कई दिन जंगलों में भटककर उसने थे सलाइयाँ एकत्र की थीं और बाँस काट-काटकर अंजनदानियां बनायी थीं। उसके इस सारे श्रम का मूल्य यह डेढ़ मुट्ठी चणक !

बनिया भी एक ही काइयाँ था। वह ताड़ गया कि लड़के के मन पर क्या बीत रही है। सौदा खरा था। उसे वह हाथ से जाने नहीं देना चाहता था। बोला, "बिटवा ! ला निकाल ले, जातक समझकर तुझे आधी मुट्ठी चणक अपनी ओर से देता हूँ। ला, निकाल···"

विचक्खण भूखा था। उसके बन्दर भी भूखे थे। बस, दो मुट्ठी चने के बदले उसने अपनी सारी सलाइयाँ और सुरमे-दानियाँ उस हृदयहीन, प्रपंची को दे दीं। गिनती विचक्खण जानता नहीं था। उसके झोले में दो बीसी अंजनदानियाँ थीं या अधिक, उसे नहीं मालूम। बनिये ने सबकी सब धरवा लीं। फिर जैसे गिनने का नाट्य करते हुए बोला, "दो बीसी में भी दस कम हैं। माल भी इतना खरा नहीं है। पर जातक समझकर रख लेता हूँ। निकाल झोली..."

और उसने विचक्खण की झोली में दिखाने को तो दो मुट्ठी चना डाला, परन्तु वह एक मुट्ठी भी नहीं था। चना डालते हुए जैसे उपकार जताते हुए वह कह रहा था, "जातक समझकर दे दिया है। और अच्छी अंजनदानियाँ ले आ। चणक के साथ गुड़ भी दूँगा।"

देख-देखकर विचक्खण दुखी था। भरे हृदय से वह मुड़ा और हट्टी के निकट ही एक पत्थर पर बैठ गया। जब उसने अपनी झोली देखी, तो उसकी आँखों में आँसू आ गये। जितने दाने नहीं थे, उससे अधिक ठुड्डियाँ थीं।

एक-एक, दो-दो करके वह बन्दरों के आगे चना डालने लगा। एक चना जब उसने अपने मुँह में रखा, तो उसकी आँखें छल-छला आयीं।

विचक्खण बैठा खा ही रहा था कि एक ग्राहक उस हट्टी पर आया। धूप से बचने के लिए उसने सिर पर खेस डाल रखा था। वेशभूषा से कोई शरणार्थी लगता था। उसके हाथ में कटोरा था और हट्टी से तेल लेने आया था। उसकी बात सुनते ही हट्टी-वाला जैसे बिगड़ गया और बोला, "जा भाई, जा! कोई और

हट्टी देख।…" फिर विद्रूप-भरे स्वर में बोला, "लेने आया है काकणी का तेल और साथ लाया है मटके जितना कटोरा!"

शरणार्थी की अभी मसें भी नहीं भीगी थीं। वह बनिये का मुँह देखने लगा। बोला कि अभी परसों ही तो इसी हट्टी से वह काकणी में आधा कटोरा तेल लेकर गया था।

बनिया व्यंग्य-भरे स्वर में बोला, "जातकों जैसी बात करता है! भइया, दो-चार दिन और ठहर जा। यहाँ काकणी में कोई थप्पड़ भी नहीं मारेगा…समझा, बिटवा!"

शरणार्थी के पास सम्भवतः एक ही काकणी थी। उसकी असहाय अवस्था को ताड़ते हुए हट्टीवाला बोला, "भइया! पल्ले पैसा न हो और तेल के बिना निर्वाह न हो, तो अपना खेस उतारकर रख जा। कटोरा तेल से भर दूँगा…"

ग्राहक के तन में जैसे आग लग गयी। आवेश में आकर बोला, "अरे! तू हट्टी करता है या रक्त चूसनेवाली जलम[1] है…लोगों के चीवर उतारने के लिए ही हट्टी खोलकर बैठा है…"

सुनते ही हट्टीवाला हाथ भाँज-भाँजकर उसे कोसने लगा। दोनों में कलह छिड़ गयी। हट्टीवाला एकाएक उठकर खड़ा हो गया और चिल्लाने लगा। आस-पास के लोग दौड़कर आये। वह चिल्ला-चिल्लाकर और उछल-उछलकर दुहाई दे रहा था, "यह लुगाण्डा कहता है, मैं तेरी हट्टी लूट लूँगा…शरणार्थी है। वध करने की धमकी देता है…कहता है, पेट में कटार भोंक दूँगा…"

विचक्खण अचरज से देख रहा था। भीड़ इकट्ठा हो गयी थी। देखते ही देखते दो धड़ बन गये। कुछ लोग हट्टीवाले का साथ दे रहे थे। कुछ लोग शरणार्थी के पक्ष में बोल रहे थे।

१. जल का जीव=जोंक।

तभी अचानक दो दण्डयुधाधर उधर आ निकले। उन्हें देखते ही बनिया फिर चिल्लाने लगा, "हट्टी मेरी है, माल मेरा हैं, तेरे तात का नहीं जो लूटने आया है…"

"कौन लूटने आया है ?" भीड़ को हटाते हुए दण्डयुधाधर आगे आये और हट्टीवाला उछल-उछलकर बताने लगा कि यह शरणार्थी तेल लेने आया था। अंटी में पैसा नहीं और धमकी देता है कि फोकट में तेल नहीं दोगे, तो हट्टी लूट ले जायेंगे…"

किसी ने कहा, "शरणार्थी है। इन लोगों ने सारे तक्कसिला में गन्दगी घोल रखी है !"

बस, यही उसका दोष था कि वह शरणार्थी था। दण्डयुधाधर उसे पकड़कर ले जाने लगे। वह चिल्लाया कि उसका दोष तो बताओ। परन्तु उन्होंने एक नहीं सुनी और बाँधकर ले गये।

भीड़ छँट गयी। हट्टीवाला चेहरे पर विजय की मुस्कान लिये पटड़े पर बैठ गया। शरणार्थी युवक अपना कटोरा वहीं छोड़ गया था। बनिये ने उसे उठाकर भीतर गेहूँ की ढेरी पर फेंक दिया और गड़ुवे में तेल डालने लगा।

विचक्खण का चेहरा तमतमाया हुआ था। ग्राहक ने उचित ही कहा था कि यह हट्टीवाला मनुष्य नहीं, जलम है, जो दूसरों का रक्त पीती है। एकाएक विचक्खण को न जाने क्या सूझी कि झोली के सारे चने हाथ में लेकर उसने वहीं से हट्टीवाले के मुँह पर दे मारे और फिर भाग खड़ा हुआ।

बनिया हतप्रभ-सा देखता रह गया। घबराकर बोला, "अरे! इस उद्धत बालक को तो देखो…लुगण्डा कहीं का…"

विचक्खण वापस नाले की ओर चल पड़ा। जब वह भूख-प्यास से व्याकुल अपने ठिकाने पर पहुँचा, तो वहाँ उदय और वेणी को

नपाकर आसपास देखने लगा, परन्तु जब वे कहीं दिखायी नहीं दिये, तो वह चिन्तित होकर सोचने लगा कि कहीं भिखारियों को भनक तो नहीं पड़ गयी कि यह बन्दरवाला बस्सी को पहचानता है और उनके पीछे लगा हुआ है! कहीं ऐसा तो नहीं कि वे आँख बचाकर अन्यत्र चले गये हों…

परन्तु यह उसके भीतर का भय ही बोलता था। उदय और वेणी कहीं नहीं गये थे। शिवालय के आगे भिखारियों की पाँति में बैठकर भीख माँग रहे थे। उन्हें देखते ही विचक्खण के प्राण में प्राण आये। वह पुल पार करके गया और भिखारियों की पीठ के पीछे खड़ा होकर देखने लगा।

उदय और वेणी झोली फैलाये बैठे थे और वेणी बस्सी के अन्धेपन की दुहाई देकर दाताओं के मन में दया उत्पन्न करने का यत्न कर रही थी। बस्सी को वह बार-बार हाथों में उठाकर आने-जानेवालों को दिखाती थी, "अन्धी जातकी के लिए कुछ दो, अन्धी कन्या पर दया करो…"

देख-देखकर विचक्खण का हृदय रो पड़ा और इसके साथ ही मूली और पासमान के प्रति आक्रोश उमडने लगा…आज वे आकर अपनी कन्या की दुर्दशा देखें जिसे पिण्ड छुड़ाने के लिए वे जंगल में डाल आये थे…

"…अन्धी जातकी पर दया करो…" अब के उदय बोला।

विचक्खण की आँखों में आँसू आ गये। भिखारियों के शब्द जैसे उसकी छाती में शूल की नाईं चुभ रहे थे। जब उससे अधिक सहा नहीं गया, तो वह चलकर बावड़ी पर आया और मुँह पर पानी के छींटे मारने लगा। दो चुल्लू पानी पीने से उसका चित्त कुछ शान्त हुआ।

सूरज धीरे-धीरे नीचे उतर रहा था। सड़कों पर चहल-पहल बढ़ने लगी थी। रथ, घोड़े, हाथी और दूसरे वाहन दौड़ते

हुए निकल जाते थे। इन पर स्वच्छ वस्त्रों में नागरिक भ्रमण के लिए निकले थे। देख-देखकर विचक्खण का मन भारी हो गया... एक ये लोग हैं जो पेट भरकर बाहर निकलते हैं। इनके सोने के पिंजरों में रहनेवाले पक्षी सोने की स्थाली में माखू और लाजा खाते हैं, मीठा जल पीते हैं, शर्करावाला। और एक वह है जिसके पेट में अनाज का एक दाना तक नहीं गया। उदय और वेणी जैसे लोग दिन-भर हाथ नहीं हिलाते, परन्तु सवेर-साँझ पेट भरकर खाते हैं। यह कैसी विडम्बना है...

वह धीरे-धीरे चलकर आया और बावड़ी की टूटी हुई दीवार पर चढ़कर बैठ गया। उसकी अन्तड़ियाँ ऐंठने लगी थीं। अन्धड़ भी चलने लगा था। विचक्खण दीवार से उतरकर नीचे बैठ गया और आँधी के निकल जाने की प्रतीक्षा करने लगा।

आँधी थमी, तो बादल घिर आये। पश्चिम की ओर झुकता हुआ सूर्य काले-सुरमई बादलों के पीछे चला गया। बादलों के किनारे चाँदी की नाईं चमकने लगे। दायीं ओर का आकाश धुँधला, मटमैला-सा लगता था। पेड़ और गाछ जैसे विचक्खण के दुर्भाग्य पर ही सिर धुन रहे थे।

विचक्खण आकर पेड़ के नीचे बैठ गया। आसपास पर अलाव जल रहे थे। वह लेट गया और ऊपर धुँधले आकाश को देखने लगा।

नीम के पेड़ की टहनी पर कोई पक्षी आकर बैठा था और 'पिट-पिट'-सा शब्द कर रहा था। विचक्खण ने उत्सुकता से देखा, पर वह पक्षी को पहचान नहीं सका। कोई गौरैया जैसा पक्षी था, जिसको लम्बी पूँछ थी।

गव और सुलसा विचक्खण की तरह निढाल बैठे थे। बीच-

बीच में सिर उठाकर वे ग्रासपास देख लेते थे।

विचक्खण पर धीरे-धीरे तन्द्रा छाने लगी। फिर उसे कुछ पता नहीं कि कब रात हुई, कब वेणी ग्रौर उदय ग्राये ग्रौर उसके निकट बैठकर खाते रहे ग्रौर फिर बिछौना करके लेट गये।

कुछ ही परे शरणार्थियों का एक समूह दुख-भरे लोकगीत के बोल बोल रहा था। विचक्खण के कानों में स्वर पड़े, तो वह उठकर बैठ गया ग्रौर ध्यान से सुनने लगा। चन्द्रमा ग्राकाश के मध्य ग्रा गया था। इक्का-दुक्का तारे दिखायी पड़ते थे। उदय ग्रौर वेणी गहरी नींद सो रहे थे। बस्सी उनके बीच लेटी थी। हवा बिल्कुल रुकी हुई थी। शरणार्थियों का दल एक पेड़ के नीचे बैठा था। मध्य में एक दीपक जल रहा था। उनके गीत का सार यह था कि वे ग्रपना घर-घाट छोड़कर ग्राये हैं ग्रौर राजधानी की धूल में पड़े हैं। यदि उन्हें पता होता कि उनकी यह दुर्दशा होगी, तो वे क्यों ग्राते, क्यों ग्राते···ग्रपना घर-घाट छोड़कर वे क्यों ग्राते···ग्रपनी चौखट पर ही वे मरते, तो कितना ग्रच्छा होता। यहाँ धूप ग्रौर ग्राँधी में सिर छिपाने को ठौर नहीं। सभी दुत्कारते हैं! यदि पता होता कि यह दशा होगी तो वे क्यों ग्राते, क्यों ग्राते···पीछे खेतों में उपज पककर तैयार खड़ी है। ग्रब कौन काटेगा? कौन काटेगा···।

सचमुच, ग्रपना घर हो, तो उसे छोड़ते कितना दुख लगता है। जलती हुई लकड़ी में रहनेवाले चींटे पहले भागते हैं, पर फिर पीछे लौटकर ग्राते हैं ग्रौर ग्राग में नष्ट हो जाते हैं। किसी का घर सहज ही किसी से नहीं छूटता!

बीच-बीच में कोई बच्चा उठकर रोने लगता था ग्रौर माँ उसे पुचकार-पुचकारकर सुलाती थी। ऐसे लगता था जैसे उस शिशु के रोने का स्वर ग्रँधेरे की चादर को चीरते हुए दिग्दिगन्त तक फैलता जा रहा है। विचक्खण सोचने लगा कि, जब मूली

और पासमान बस्सी को जंगल में छोड़कर गये होंगे, तो बस्सी भी इसी तरह रोयी होगी और उसका स्वर चारों दिशाओं में फैल गया होगा...

विचक्खण लेट गया। निद्रादेवी उसे थपकियाँ देकर सुलाने लगी। फिर जैसे उसने विचक्खण के चारों ओर सपनों का जाल-सा बुन दिया...

...क्या देखता है कि भीड़-भम्भड़वाली मण्डी में बड़े-बड़े पिंजरे रखे हैं—हाथी के पेट जितने—और उनमें ठूँस-ठूँसकर पक्षियों को भरकर रखा गया है, इस तरह जैसे बोरी में अनाज भरा जाता है। पक्षी पिंजरों की सलाखों में से मुँह-सिर निकाले हाँफ रहे हैं और बहेलिया चिल्ला-चिल्लाकर उनका मोल लगा रहा है। असहाय पक्षियों की दुर्दशा विचक्खण से देखी नहीं जाती। वह आँख बचाकर पिंजरों के कपाट खोल देता है और एक-एक करके सारे पक्षी आकाश में उड़ने लगते हैं। पिंजरों में से वे इस तरह निकल-निकलकर जा रहे हैं जैसे बोरी के छेद में से अनाज के दाने झरते हैं। धरती से लेकर आकाश तक पक्षियों की एक लम्बी पंक्ति उड़ती हुई जा रही है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे सब पक्षी एक सूत्र को पकड़कर उड़ते हुए जा रहे हों। विचक्खण एकटक आकाश की ओर देख रहा है। पर ज्योंही नीचे एक खाली पिंजरे की ओर देखता है, तो, बस, आँखें फाड़े देखता रह जाता है। वहाँ एक नन्हा मानव-शिशु हाथ-पैर मारते हुए चीख रहा था...

दूसरा सपना इससे भी डरावना था।

...विचक्खण अकेला जंगल में जा रहा है। थोड़ी ही दूर गया होगा कि आगे-आगे एक स्त्री और पुरुष जाते हुए दिखायी देते हैं। पुरुष की गोद में एक नन्हा शिशु है। स्त्री उसके पीछे रोती-बिलखती हुई जा रही है। दोनों एक नदी के निकट पहुँचते

हैं। पुरुष बच्चे को हरी घास पर लिटा देता है और फिर रोती हुई स्त्री की बाँह पकड़कर खींचकर ले जाता है। ममता की मारी स्त्री मुड़-मुड़कर देखती है। ममता के आँसू निकल-निकलकर एक धारा का रूप लेने लगते हैं, जो सीधी नदी में मिलने लगती है। उनके जाते ही वह शिशु को हाथों में उठा लेता है। शिशु बड़ी-बड़ी आँखों को फैलाकर उसे देखता है। उसकी आँखों से तीक्ष्ण किरणें विचक्खण के माथे को भेदती हुई निकल जाती हैं...

विचक्खण जैसे चीख पड़ा। उसकी नींद खुल गयी। निकट बैठा एक शरणार्थी बोला, "अरे, उठ, उजाला हो आया है! पड़ा-पड़ा सपने देखता है और फिर डरकर चीखता है..."

विचक्खण लज्जा से गढ़ गया। चहुँ ओर कोलाहल मचा हुआ था। उदय और वेणी वहाँ नहीं थे। विचक्खण उठकर खड़ा हो गया और देखने लगा। भिखारियों की पंक्ति में उदय और वेणी बैठे भीख माँग रहे थे...

...अन्धी जातकी पर दया करो...

विचक्खण पछता रहा था कि आवेश में आकर उसने ऐसी मूर्खता क्यों की! क्यों उसने सारे चने हट्टीवाले के मुँह पर दे मारे? हानि किसकी हुई?

अब भाखुड़ी का सहारा लेने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। वह जंगल में जाकर भाखुड़ी बटोर लायेगा और फिर उसी से पेट की ज्वाला शान्त करेगा। उसने कन्धे पर झोला लटकाया और बन्दर-बँदरिया को साथ लेकर चल पड़ा।

चलते-चलते वह नगर-दीवार पर आया। एक स्थान से दीवार ढह चुकी थी। विचक्खण धीरे-धीरे पत्थरों पर पैर

जमाते हुए ऊपर चढ़ने लगा।

शीतल बयार चल रही थी। भग्न दीवार पर खड़ा विचक्खण अपने भीतर जैसे नये प्राणों का संचार अनुभव करने लगा।

दीवार के नीचे लम्बी-चौड़ी वृक्षहीन घाटी थी, जिसमें वीसियों पगडण्डियाँ एक-दूसरे को काटती हुई चली गयी थीं। ताँबिया लाल मिट्टी को देखकर ऐसा लगता था जैसे किसी समय यहाँ बड़ा भारी युद्ध हुआ हो और रक्त के परनाले बहे हों।

घाटी में बायीं ओर एक लम्बा पोखर-सा था। उसके हरे-कचनार पानी में किनारे खड़े कीकर का प्रतिबिम्ब पड़ता था। निकट ही एक कुआँ था, जहाँ से दो स्त्रियाँ सिर पर पानी के घड़े और कन्धे पर लपेटी हुई रस्सी रखे जा रही थीं।

खेतों में मोर केऊँ-केऊँ कर रहे थे। बीच-बीच में पण्डुक का स्वर सुनायी पड़ता था—कूकूकु... कूकूकु...। कोई सुग्गा ट्रांय करके निकल जाता था। सामने के कटे हुए खेत में बहुत-से मोर खड़े थे। एक मोर इस तरह भाग रहा था जैसे पानी में तैर रहा हो। एक मोर था कि चोर की नाईं दबे पाँव चलते हुए जा रहा था। एक झाड़ी पर काली-सी चिड़िया बैठी थी। जब वह बोलती थी, तो उसकी पूँछ ऊपर उठ जाती थी।

विचक्खण ने बन्दरों को वहीं एक बड़े पत्थर के साथ बाँधा और झोला लटकाये भाखुड़ी एकत्र करने लगा। भाखुड़ी के दाने चने के आकार के होते हैं और उसमें चारों ओर बिच्छू के डंक जितने सूक्ष्म काँटे-से निकलते हैं। भाखुड़ी का फल डण्डी समेत तोड़ो, तो भीम की नन्ही-सी गदा जैसा लगता है। इसे कूटकर सुखा लिया जाता है और फिर उसके आटे से रोटी बनती है जिसे खाकर निर्धन अपना पेट भरते हैं।

चार मोर नीचे दीवार के पत्थरों में चोंचें मार रहे थे। किसी की आहट पाकर वे ठिठके। जब विचक्खण नीचे उतर गया, तो

वे उसी मार्ग से ऊपर दीवार पर चढ़ गये ।

दीवार के साथ, बायीं ओर एक मोरनी दो बार बोली । फिर उन्हीं मोरों के पीछे चल पड़ी । ढही हुई दीवार के निकट आकर वह तनिक ठिठकी और फिर एक ही उड्‌डारी में ऊपर बैठ गयी और वहाँ से तैरती हुई-सी ओझल हो गयी ।

आकाश पर जैसे हल्का-हल्का धुआँ-सा छा गया था । विचक्खण बीच-बीच में श्वेत फूल तोड़कर उनका मधु चूस लेता था, ताकि कुछ तो पेट में जाये । एक झाड़ी में बेर जितने नन्हे-नन्हे फल लगे थे । झाड़ी की हरी टहनियों में एक भी पत्ता नहीं था । उसके भीतर से ही एक और पौधा उग आया था जिसमें लाल-लाल लम्बे फूल लगे हुए थे । ऐसा प्रतीत होता था जैसे ये फूल उसी बारहसिंघा झाड़ी के हों । विचक्खण ने झाड़ी के बेरों को हाथ तक नहीं लगाया । डरता था कि कहीं कोई विषैली वनस्पति न हो ।

जब उसने पर्याप्त भाखुड़ी एकत्र कर ली, तो वह लौट पड़ा । सामने पत्थरों पर पण्डुक जैसा एक पक्षी आकर बैठ गया था और लम्बा तुर्रर्रअअअ···सा शब्द निकालता था । विचक्खण यह देखकर चकित हुआ कि यह पक्षी स्वर बदलकर कौवे की तरह काँव-काँव भी कर सकता है । पहले वह तुर्रर्रअअअ···बोलता और फिर तीन बार काँव-काँव-काँव करता ।

पत्थरों पर पैर जमाते हुए वह ऊपर चढ़ने लगा । बन्दरों को जहाँ वह बाँधकर गया था, उस स्थल से अभी कुछ ही अन्तर पर था कि एकाएक ठिठक गया और आँखें फाड़े देखने लगा । बन्दर खौंखिया रहे थे और निकट ही एक काला नाग फण उठाये खड़ा था । उसे देखते ही विचक्खण के रोंगटे खड़े हो गये ।

वह खड़ा देख ही रहा था कि तभी यह अद्भुत नाटक आरम्भ हुआ। गव साँप के सामने खड़ा था और सुलसा पीछे खड़ी थी। सुलसा ने धीरे से आगे बढ़ साँप की पूँछ को छेड़ा और ज्योंही साँप उधर मुड़ा कि गव ने उछलकर उसकी ग्रीवा पर तीव्र प्रहार किया। जब तक साँप लौटकर आक्रमण करे कि बन्दर उछलकर परे जा बैठा।

विचक्खण यह देखकर डर गया कि बन्दर रस्सियों से बँधे हैं। यदि साँप ने आगे बढ़कर आक्रमण किया, तो बच नहीं पायेंगे। परन्तु गव और सुलसा जैसे साँप को छकाने पर तुले हुए थे। वह गव की ओर मुड़ता, तो पीछे से सुलसा उस पर प्रहार करती। इस तरह साँप व्याकुल होकर थोड़ी ही देर में शिथिल पड़ने लगा। तभी एकाएक गव ने उछलकर साँप को ग्रीवा से पकड़ लिया। फिर जल्दी-जल्दी उसका मुँह पत्थर पर रगड़ने लगा। विचक्खण घबराया कि कहीं साँप बन्दर को डस ही न ले। परन्तु गव था कि नाग के फण को पत्थर पर घिसे जा रहा था। बीच-बीच में आँखों के सामने रखकर देखता था कि वह मर गया या जीवित है। इस तरह साँप को घिस-घिसकर उसने मार डाला। जब उसे विश्वास हो गया कि साँप मर गया है, तो उसे उठाकर गव ने परे फेंक दिया। फिर खौंखिया-खौंखियाकर प्रसन्नता प्रकट करने लगा। सुलसा भी उछलकर आयी और उसके साथ लगकर बैठ गयी और खौंखियाने लगी।

विचक्खण को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। ऐसी अनोखी घटना उसने पहले कभी नहीं देखी थी। वह दौड़कर आया और दोनों बन्दरों को उठाकर सहलाने-पुचकारने लगा। वे बुरी तरह हाँफ रहे थे। कलेजा धक-धक कर रहा था।

देखते ही देखते एक मोर उड़ता हुआ आया और मरे हुए साँप को उठाकर नीचे घाटी में उतर गया।

सड़क पर शरणार्थियों का एक झुण्ड आ रहा था। इनके साथ भेड़-बकरियों का बहुत बड़ा रेवड़ था। भग्न दीवार के ऊपर खड़ा विचक्खण प्रतीक्षा करने लगा कि धूल हटे, तो वह नीचे उतरकर अपने ठिकाने पर जाये।

विचक्खण यों तो उदय और वेणी से बहुत हिल-मिल गया था, फिर भी वह इतना स्वाभिमानी था कि उनके दिये भीख के अन्न-भात को हाथ तक नहीं लगाता था। वह पेट पर पत्थर बाँधकर सो सकता था, परन्तु भीख का अन्न उसे स्वीकार नहीं था।

उदय और वेणी की, बस, एक ही दिनचर्या थी। भोर होते ही वे शिवालय की सीढ़ियों के निकट जा बैठते। फिर अँधेरा होने पर ही वहाँ से उठते। अभाव के इन दिनों में भी दाताओं की कमी नहीं थी, जो दान दिये बिना अन्न-जल ग्रहण नहीं करते थे। उदय और वेणी प्रतिदिन पलान्न (चावल में माँस) से झोली भरकर लाते थे। विचक्खण दिन-भर गलियों-सड़कों पर भटकता था। फिर भी, दो जून रोटी नहीं जुटा पाता था।

ज्यों-ज्यों दिन बीत रहे थे, निर्वाह उतना ही कठिन होता जा रहा था। विचक्खण घण्टों खेल दिखाता, बोल-बोलकर थक जाता, परन्तु कोई कानी कौड़ी नहीं देता था। गली-कूचों में जाता, तो लोग उसे चोर समझकर भगा देते।

इस सबसे विचक्खण को अपने ऊपर ग्लानि होने लगती। वह अपनी भर्त्सना करते हुए स्वयं को धिक्कारता, "धिक्कार है तुझे। मनुष्य होकर भी तू अपना पेट नहीं भर सकता! तेरे दो-दो हाथ-पैर हैं। फिर भी भूखों मरता है। थू..." उसे लगता कि अभी तक वह उद्यम ही नहीं करता था। हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता है। इसीलिए भूखों मरता है और साथ में सुलझा और गव

को भी भूखों मारता है। इतनी बड़ी राजधानी में वह पेट भरने योग्य दो रोटी भी नहीं जुटा पाता, जहाँ मिट्टी भी मोल बिकती है...

वह उठकर चल पड़ा। धूल-भरी सड़क पर चलते हुए जैसे वह अपने आपसे ही बातें करने लगा, "अब हम भूखों नहीं मरेंगे! हम मनुष्य हैं। हमारे दो-दो हाथ-पैर हैं। हम भूखों नहीं मरेंगे..."

वह जाकर एक आम के घने पेड़ के नीचे बैठ गया। आम्रबौर—जैसे उसके तन-प्राण में एक नयी उमंग, एक नया उत्साह उत्पन्न करने लगा। उसने झोला नीचे रखकर सामान निकाला और बाँसुरी हाथ में ले ली। आज वह ऐसी मीठी बाँसुरी बजायेगा कि सारे तक्कसिला में उसकी ध्वनि गूंजने लगेगी। बाँसुरी को उसने होंठों से लगाया। फिर धीरे-धीरे उसमें जैसे प्राण फूंकने लगा। उसने ऐसी तान छेड़ी कि पेड़ के नीचे बैठे बटोही मुग्ध हो गये और आने-जानेवाले भी ठिठककर सुनने लगे।

विचक्खण जैसे तल्लीन होकर बाँसुरी बजा रहा था। तभी जैसे उसके हाथ से बाँसुरी छूटने लगी। एक-एक करके कई सिक्के उसके सामने गिर रहे थे। यह क्या?

फिर एकाएक सारी बात उसकी समझ में आ गयी। कहीं ये लोग उसे भिखारी समझकर तो सिक्के नहीं उछाल रहे हैं?

भीख नाम से ही उसे घृणा थी। वह भूखों रह लेगा, किसी के आगे हाथ नहीं फैलायेगा। बस, तत्काल उसने दोनों हाथ जोड़कर विनयपूर्वक कहा, "हम कोई भिखारी-भिखमंगे नहीं। अभी हमने अपना खेल तो खिलाया ही नहीं। फिर आप लोग इस तरह सिक्के क्यों उछाल रहे हैं? पहले हमारा खेल देखिए। हम भिखारी नहीं, हम भीख नहीं लेते...।"

एक बटोही बोला, "बचवा! हम कोई बालक हैं जो बन्दर का खेल दिखाग्रोगे ! वो तो गली-कूचों में बच्चों को जाकर दिखाग्रो । हम तो तेरी मीठी बाँसुरी सुनकर दे रहे हैं ।"

विचक्खण का जैसे सारा उत्साह मर गया । क्या, सचमुच, ये लोग बाँसुरी पर मुग्ध होकर ही दे रहे हैं ! नहीं, ये लोग उस पर दया करके, उसकी दुर्दशा देखकर उसे भीख दे रहे हैं जिसे, वह कभी हाथ भी नहीं लगायेगा ।

बस, फिर उसने बाँसुरी होंठों से नहीं लगायी । लोग उठ-उठकर जाने लगे । विचक्खण के सामने ग्राठ-दस सिक्के पड़े थे। गाँवों-कस्बों में खेल दिखाता था, तो रोटी-दाल, ग्राटा, चना, गुड़ ग्रादि मिल जाते थे ग्रौर उसका ग्रौर उसके बन्दरों का पेट पलता था । ग्राज पहली बार जीवन में लोगों ने उसे सिक्के दिये थे ।

उसका ग्रपना पेट खाली था । बन्दर भी निढाल पड़े थे। वह धीरे-धीरे, सिक्के बटोरने लग गया । फिर जैसे चोरी करते हुए लोग उसे देख रहे हों, वह कन्नी काटकर वहाँ से उठा ग्रौर जल्दी-जल्दी एक हट्टी पर गया । सिक्कोंवाली हथेली ग्रागे करके उसने गुड़ ग्रौर चना माँगा । हट्टी पर एक बालक ग्रपने पिता की ग्रनुपस्थिति में बैठा था। बन्दरवाले के हाथ में इतना धन देखकर वह तनिक चौंका । फिर जल्दी से सारे सिक्के ग्रपनी टोकरी में रखते हुए उसने एक पयीणी चना ग्रौर थोड़ा गुड़ विचक्खण की झोली में डाल दिया ।

इतना सारा चना देखकर विचक्खण उसका मुँह देखने लगा। हट्टीवाले ने समझा कि बन्दरवाला सन्तुष्ट नहीं हुग्रा। इसलिए जल्दी से उसने थोड़ा ग्रौर गुड़ उसकी झोली में डालदिया। बोला, "बस, ज़ा । इससे ग्रधिक नहीं मिलेगा ।"

विचक्खण हक्का-बक्का देख रहा था। हट्टीवाला दो ग्रन्य

ग्राहकों की ओर मुड़ गया। विचक्खण की झोली भरी हुई थी। दोनों बन्दर उचक-उचककर देख रहे थे। फिर वह धीरे-धीरे चलकर आया और उसी पेड़ के नीचे बैठ गया। कितने दिनों बाद आज वह भरपेट खायेगा, परन्तु एकाएक झोली की ओर देखते हुए उसे लगा कि कहीं यह भी कोई सपना तो नहीं है···

सूर्य पश्चिम दिशा में झुकने लगा था, परन्तु अभी तक गरमी का प्रकोप कम नहीं हुआ था। पत्ता तक हिल नहीं रहा था।

विचक्खण जामुन के नीचे लेटा निर्निमेष देख रहा था। तभी यह अविश्वसनीय घटना घटी।

वह चौंककर उठ बैठा। एक क्षण को जैसे उसके हृदय की धड़कन रुक गयी। यह उसका भ्रम नहीं था। सामने सड़क पर और कोई नहीं, पासमान ही जा रहा था। वही चाल-ढाल, वही पहरावा। बस, अन्तर यही था कि वह तनिक भचककर चल रहा था और उसके कन्धे से एक शिशु लगा हुआ था।

विचक्खण अचरज से देखने लगा। अभी-अभी बस्सी को वह भिखारियों के पास छोड़कर आया था। फिर पासमान के कन्धे से कौन लगा है ?

विचक्खण उठकर खड़ा हो गया। पासमान चौक तक पहुँच गया था। बायीं सड़क पर सम्भवतः कोई वाहन आ रहा था, और पासमान मोड़ पर लगे पत्थर के साथ खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। विचक्खण जल्दी-जल्दी उसके पीछे चल पड़ा।

ईंधन से लदी एक बैलगाड़ी खड़-खड़ करती हुई निकल गयी। पासमान चौक पार करके आगे बढ़ा। विचक्खण भी जल्दी-जल्दी आया। जब पासमान उससे आठ-धनुष के ही अन्तर पर रह गया, तो वह चिल्लाकर बोला, "भइया ऽऽऽ !"

तत्काल पासमान ने मुड़कर देखा और आँखें फाड़े देखता ही रहँ गया। वह ऐसे देख रहा था जैसे उसने विचक्खण को नहीं, किसी विकराल दानव को देख लिया हो! उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन अचानक विचक्खण से इस तरह उसका आमना-सामना होगा। उस समय पासमान के कन्धे से खेमा लगी हुई थी। पासमान डर रहा था कि विचक्खण बस्सी के विषय में अवश्य पूछेगा, उसके स्थान पर किसी और कन्या को देखकर जिज्ञासा करेगा। तब वह क्या उत्तर देगा? खेमा का भेद अभी तक मूली और उसके अतिरिक्त और कोई नहीं जानता था।

पासमान किसी भी दशा में खेमा का रहस्य प्रकट करके उसके प्राण संकट में नहीं डालना चाहता था। इसलिए तत्काल उसने सोच लिया कि ऐसी विकट स्थिति में उसका क्या कर्तव्य है। खेमा को उसने चादर से ढाँप लिया, जिससे विचक्खण उसे देख न सके और फिर उसे खदेड़ देने के प्रयोजन से वह जैसे दाँत पीसते हुए बोला, "गोखरू चुराकर भी तेरा पेट नहीं भरा, मक्कार! जो पीछा करते हुए यहाँ तक आ पहुँचा है! दूर हो जा मेरी आँखों से..."

विचक्खण के मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। इसी बात का उसे डर था कि पासमान और मूली यही बात कहेंगे। दुख के अथाह सागर में डूबते हुए बोला, "अभी तक तुम लोगों को सन्देह है, तुम्हारा गोखरू हमने ही चुराया है! ..."

"मैं कुछ सुनना नहीं चाहता। दूर हो जा मेरी आँखों से!" पासमान ने आग्नेय आँखों से देखते हुए उसे फटकारा। "तू चोर है। चोरों से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं!"

पासमान का यह आक्षेप सुनकर विचक्खण जैसे गहरे कुएँ में जा गिरा। वह कुछ कहने को उद्यत हुआ, परन्तु पासमान

जैसे उसे अवसर ही नहीं देना चाहता था। बोला, "दूर हो जा मेरी आँखों से···कहीं और जाकर मुँह काला कर···"

अब विचक्खण ने भी पासमान को आड़े हाथों लेने की सोची। उसे निश्चय था कि पासमान के कन्धे से बस्सी नहीं लगी हुई है, कोई और शिशु है। सहज ही उसे लगा कि दाल में कुछ काला है। अब जब पासमान ने फिर उस पर गोखरू की चोरी का दोष लगाया, तो विचक्खण का मन मत्सर से भर उठा। मत्सर-भरा व्यक्ति अनहोनी बातें भी सोचने लगता है। बस्सी का भिखारियों के पास पलना और भिखारियों का कहना कि वे उसे जंगल में से उठाकर लाये हैं और फिर इस समय पासमान के कन्धे के साथ किसी और बच्चे का होना—इन सब बातों से विचक्खण ने सारे सूत्र जोड़ लिये। उसकी बालबुद्धि ने सहज ही विश्वास कर लिया कि मूली और पासमान ने अपनी अन्धी कन्या से पिण्ड छुड़ाने के लिए ही उसे जंगल में डाल दिया होगा और फिर वे किसी की कन्या उठा लाये होंगे। गाँव लौटने में इन्हें साल-डेढ़ साल लग जायेगा। तब गाँव में ही क्या, घर में भी कोई पहचान नहीं सकेगा कि यह बस्सी है या कोई और कन्या। किसी को सन्देह तक नहीं होगा कि सैकड़ों गावुत दूर ये लोग कैसा कुकर्म करके आये हैं। कोई सोचेगा भी नहीं कि सीधा-सादा दिखनेवाला यह किसान कितना निर्दय, निर्मम है, जिसका हृदय अपने कलेजे के टुकड़े को जंगल में छोड़ते हुए भी नहीं काँपा। परन्तु मारनेवाला एक है, बचानेवाले सहस्र। इसे क्या पता कि जिस बस्सी को वह मरा हुआ समझ रहा है, वह अभी जीवित है और इस घड़ी तक्कसिला में ही है···

विचक्खण को इस तरह घूरते हुए देख, पासमान खेमा को छिपाने का यत्न करने लगा। तभी विचक्खण ने ऐसी बात पूछी जिसकी कल्पना तक पासमान ने नहीं की थी। बोला, "बस्सी

कहाँ है ?"

पासमान को लगा जैसे उसके पैरों के नीचे की धरती काँप रही है। विचक्खण एकटक उसका चेहरा देख रहा था। बोला, "बस्सी कहाँ है ? यह किसकी कन्या उठा लाये हो ?..."

यह तो और भी भयावह बात थी। हक्का-बक्का पासमान सोच रहा था कि इसे कैसे मालूम हुआ कि यह बस्सी नहीं, कोई और कन्या है ? पासमान का चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया। उसके मस्तिष्क में जैसे हथौड़े की चोटें पड़ रही थीं। वह किसी भी तरह खेमा का रहस्य प्रकट नहीं होने देना चाहता था। इसलिए एक बार फिर विचक्खण को खदेड़ने के प्रयोजन से बोला, "तू चोर है, तुझे मैं मुँह नहीं लगाऊँगा..."

पासमान चाहता था कि सिर पर पाँव रखकर भाग खड़ा हो। परन्तु विचक्खण भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेला था। वह पासमान की राह रोककर खड़ा हो गया।

विचक्खण को बस्सी के विषय में पूरी जानकारी थी। परन्तु पासमान यह कैसे समझता ! वह तो खेमा के रहस्य को किसी भी मूल्य पर छिपाकर रखना चाहता था। इसलिए जब वह घिर गया, तो इसके अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था कि वह बस्सी के चोरी जाने की बात उसे बताये। इसलिए डबडबायी आँखों से देखते हुए बोला, "मत पूछ, विचक्खण मत पूछ। बस्सी की बात मत छेड़..."

विचक्खण समझता था कि पासमान नाटक कर रहा है और झूठमूठ के आँसू बहाकर वास्तविक बात छिपाना चाहता है। इसलिए विचक्खण जैसे चकित होने का अभिनय करते हुए बोला, "क्यों, क्या हुआ बस्सी को ?"

पासमान की आँखें छलछला आयीं। बोला, "विचक्खण, मत पूछ बस्सी को क्या हुआ ! उसे कोई उठाकर ले गया है !"

बात सच्ची थी। परन्तु विचक्खण इसे बिल्कुल मनगढ़न्त समझ रहा था। वह पासमान को इस तरह देखने लगा जैसे कह रहा हो—छली ! ढोंगी ! प्रपंची ! पाखण्डी !

पासमान अटक-अटककर बोल रहा था कि किस तरह एक रात बस्सी को कोई उठाकर ले गया और तब से उसका कोई पता नहीं चला।

पासमान के एक-एक शब्द में सचाई थी, परन्तु विचक्खण को यह सब नाटक ही लग रहा था। पासमान का मुँह देख-देखकर वह सोच रहा था कि पासमान नाटक करने में कितना पारंगत है। पहले तो यह अपनी अन्धी, अवांछित कन्या को अपने गाँव से इतनी दूर लाया। फिर उसे घने जंगल में मरने के लिए छोड़ आया। अपना कुकर्म छिपाने के लिए अब किसी की कन्या को उठा लाया है, झूठे आँसू ढरकाकर सबकी आँखों में धूल झोंकना चाहता है। दुष्ट को नहीं मालूम कि विचक्खण से कोई बात छिपी नहीं है। एक पाप छिपाने के लिए इसने एक और पाप किया और फिर इस पर भी चादर डालने के लिए झूठे आँसू बहा रहा है। जो मनुष्य इतना कठोर-हृदय हो सकता है कि अपनी सन्तान को भी जंगल में छोड़ आये, वह क्या पाप नहीं कर सकता···

तभी खेमा जाग गयी और सिर उठाकर रोने लगी। पासमान घबरा गया। जल्दी से उसके सिर पर कपड़ा डालकर उसे थप-थपाने लगा। अब उसे लगा कि खेमा के रहस्य को विचक्खण से छिपाना असम्भव है। भेद खुलते ही कितना बड़ा संकट आ सकता है, इसकी कल्पना मात्र से वह सिहर उठा।

विचक्खण धीरे-धीरे मुस्काते हुए उसकी ओर देख रहा था। पासमान डर गया और आशंकित होकर उसकी ओर देखने लगा। अब विचक्खण ने भी सोचा कि चूहे-बिल्ली का खेल

बहुत हो चुका, वह सारी बात अब पाममान के मुँह पर कह दें। झूठे मनुष्य को वह उसके घर तक पहुँचाना चाहता था। इसलिए वह इस तरह खड़ा हो गया जैसे बहुत बड़ा रहस्य प्रकट करने जा रहा हो। बोला, "पासमान! तुम समझते हो कि बस्सी को जंगल में डालकर तुमने उससे पिण्ड छुड़ा लिया..."

पासमान तो उसका मुँह ही देखता रह गया, "क्या बकते हो?"

विचक्खण बोला, "तुम्हारी सारी चाल व्यर्थ गयी, पासमान! बस्सी मरी नहीं, जीवित है..."

हक्के-बक्के पासमान को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ। वह विस्मय से विचक्खण का मुँह देख रहा था। विचक्खण बोला, "क्यों, हमारी बात का विश्वास नहीं होता!"

बात ही विश्वास न करने योग्य थी। इतने दिन बीत गये थे और अब वे बस्सी से हाथ धो बैठे थे। इसलिए पासमान आँखों में गहरा अविश्वास भरकर बोला, "बस्सी जीवित है? कहाँ है मेरी बेटी? कहाँ है मेरी बस्सी?"

पासमान की दशा देखकर विचक्खण जैसे आनन्दित हो रहा था। वह चूहे-बिल्ली का खेल जैसे फिर खेलने लगा। पासमान की ओर व्यंग्य-बाण छोड़ते हुए बोला, "तुम लोगों ने समझ लिया कि बस्सी को जंगल में डालकर तुमने पिण्ड छुड़ा लिया। हाँ, जनम से अन्धी कन्या का बोझ कौन उठा सकता है! पर मारनेवाला एक है, बचानेवाले सहस्र..."

पासमान का कलेजा मुँह को आने लगा था। बोला, "विचक्खण, अब और पहेलियाँ न बुझाओ। ईश्वर के लिए सच-सच बताओ। जानते हो, बस्सी कहाँ है?"

विचक्खण जैसे उसे तत्ते तेल के कड़ाहे में तल रहा था। बोला, "जानना चाहते हो, वह जंगल में भी कैसे बच गयी ?"

पासमान तड़पकर बोला, "और ताने मत मार, विचक्खण··· और ताने मत मार। तुझे कैसे समझाऊँ, कैसे विश्वास दिलाऊँ कि बस्सी को कोई उठाकर ले गया है। तुम नहीं मानोगे, विचक्खण, कि उसके लिए हम कहाँ-कहाँ मारे-मारे फिरे हैं ! कैसे-कैसे दुख सहे हैं हमने। राजधानी का कोई कोना नहीं छोड़ा। मूली दिन-रात आँसू बहाती है। यह तुम्हें किसने बहका दिया कि हम बस्सी को जंगल में छोड़ आये हैं ? यह तुम कैसे सोच सकते हो, विचक्खण, हम बस्सी को जंगल में डाल आये हैं···" कहते-कहते उसका गला भर आया। फिर बोला, "यह तुम कैसे सोच सकते हो, विचक्खण, कोई माँ-बाप अपने कलेजे के टुकड़े को इस तरह जंगल में फेंककर आ सकता है।"

पासमान इस तरह बोल रहा था जैसे उसके भीतर कहीं गहरे से स्वर निकल रहा हो। उसकी दशा देखकर किसी का भी कलेजा पसीज उठता। परन्तु विचक्खण के मन में यह धारणा धर कर गयी थी कि उदय और वेणी सच बोलते हैं और पासमान झूठ बोल रहा है। उसका प्रमाण सामने था। बस्सी भिखारियों के पास थी और पासमान के कन्धे से कोई और कन्या लगी हुई थी।

विचक्खण थोड़ा नरम पड़ा। बोला, "तो फिर तुमने किसकी कन्या को कन्धे से लगा रखा है ? कौन है यह ?"

पासमान का चेहरा फक पड़ गया। बोला, "विचक्खण, तुम्हें सब बताऊँगा। पहले बताओ, बस्सी कहाँ है ? रो-रोकर मूली की काया सूख गयी है। एक बार बस्सी मिल जाये, सब बात तुम्हें सच-सच बता देंगे···"

अब विचक्खण को लगा कि कोई व्यक्ति इतना झूठ नहीं

बोल सकता। पहले तो वह असमंजस में पड़ा। फिर तत्काल वह पासमान को उदय और वेणी के पास ले जाने को तैयार हो गया।

विचक्खण ने यह बात कही, तो पासमान को विश्वास ही नहीं हुआ। कहीं वह सपना तो नहीं देख रहा है?

साँझ घिरना ही चाहती थी। अब आगे-आगे विचक्खण और पीछे-पीछे पासमान चला। खेमा उसके कन्धे से लगकर रो रही थी। पासमान उसे थपथपाता जाता था।

विचक्खण और पासमान शिवालय की गली से निकलकर उस पेड़ की ओर बढ़े, जहाँ उदय और वेणी बैठे थे। निकट के चूल्हे की लपट में दोनों के चेहरे स्पष्ट दिखायी पड़ रहे थे। वेणी किसी काम में व्यस्त थी। उदय ने बस्सी को घुटनों पर लिटा रखा था और उसे थपक-थपककर सुला रहा था।

पासमान व्याकुल दृष्टि से आसपास देख रहा था। तभी उदय की दृष्टि विचक्खण पर पड़ी और वहीं से उसने पुकार लगायी, "ए हो, विचक्खण! तू कहाँ चला गया था?"

विचक्खण अपने स्थान पर जैसे जड़ हो गया।

पासमान भी स्तब्ध होकर उस व्यक्ति की ओर देख रहा था जिसने विचक्खण को पुकारा था। उसने अनुमान तक नहीं लगाया था कि उस भिखारी जैसे व्यक्ति की गोद में बस्सी थी।

विचक्खण कुछ क्षण उदय की ओर एकटक देखता रहा। जैसे किसी दुविधा में हो। पासमान ने अधीरता से कहा, "कहाँ है मेरी बस्सी?"

विचक्खण जैसे जी कड़ा कर रहा था। कुछ-कुछ भयभीत भी था। फिर धीरे से उसने उँगली उठाकर उदय की ओर संकेत

किया।

पासमान का शरीर जैसे दौड़ने से पहले ऐंठ रहा था। एकाएक उसने खेमा को विचक्खण के हाथों में सौंपा, फिर बगटुट बैल की तरह भागा और जाते ही उसने उदय के हाथों से बस्सी को छीन लिया और पागलों की तरह चिल्लाने लगा, "यह मेरी बेटी है···यह मेरी बेटी है···"

उदय के तो जैसे हाथों के तोते उड़ गये। वेणी को भी जैसे सहज आभास हो गया था। इसलिए वह भी चिल्लाने लग गयी। एकाएक जैसे कोहराम मच गया और लोग इकट्ठे हो गये। पासमान के हाथों में बस्सी और विचक्खण के हाथों में खेमा गला फाड़-फाड़कर रो रही थी। एकाएक वेणी लपककर आयी और बस्सी को उसने पासमान के हाथों से छीनना चाहा। परन्तु पासमान ने धक्का मारकर उसे गिरा दिया और चिल्लाकर कहा, "यह मेरी बेटी है!" फिर जैसे सबको चेतावनी देते हुए बोला, "सावधान! जो कोई आगे आया! यह मेरी बेटी है···"

लोगों ने समझा कि यह पागल है और भिखारियों का बच्चा छीनकर भागना चाहता है। इसलिए उसकी राह रोकने के लिए वे खड़े हो गये।

वेणी को लग रहा था कि कन्या उनके हाथों से जा रही है। विचक्खण के साथ इस व्यक्ति का आना और फिर इस तरह झपटकर कन्या को छीनना—इसका और क्या अर्थ हो सकता था! पासमान चीख-चीखकर कह रहा था कि ये लोग उसकी बेटी को उठाकर ले आये हैं···

भिखारी वैसे भी बच्चे उठाने के लिए कुख्यात होते हैं। पासमान के मुँह से यह बात सुनते ही जैसे पासा ही पलट गया। पहले जो लोग भिखारियों से सहानुभूति प्रकट कर रहे थे, वही अब पासमान के पक्ष में बोलने लगे। वे जानते थे कि भिखारियों

की कन्या अन्धी है। क्या कोई अन्धी कन्या के लिए इतना बखेड़ा खड़ा करेगा ?

एक व्यक्ति ने उदय से कहा, "सच-सच बता दे सारी बात ! यह तुम्हारी कन्या है ?"

विचक्खण एक ओर चुपचाप खड़ा था। उदय के भीतर खटके की घण्टी बज चुकी थी। उसने भी समझ लिया था कि हो न हो, इस सबके पीछे यह विचक्खण बन्दरवाला ही है।

उसी व्यक्ति ने फिर उदय से पूछा, "हाँ, सारी बात सच-सच बता दे। यह कन्या तेरी है ?"

उदय घबरा गया। उसके मुँह से बोल नहीं निकल रहे थे। अन्त में उसने सच-सच कहने में ही कुशल समझी। बोला, आँखों में आँसू भरकर, "हाँ, यह हमारी बेटी नहीं है !" फिर जैसे स्वयं को निरपराध सिद्ध करने के लिए वह बोला, "पर हम इसे चुराकर नहीं लाये। इसे हमने मोल लिया है..."

विचक्खण तो उदय का मुँह ही देखने लगा। वह न्यारी बात कह रहा था। वे तो सदा यही कहते थे कि बस्सी उन्हें जंगल में पड़ी मिली !

किसी ने पूछा, "भले मानुस, किससे मोल ली ?"

उदय आँखों में आँसू भरकर बोला, "मैं सच कहता हूँ, वेणी से भी पूछ लो। एक स्त्री और पुरुष इसे हमारे हाथों बेच गये थे, कहते थे इसका पालन-पोषण हम कर नहीं सकते। अपने आपको वे काशी के निवासी बताते थे। कहते थे, हमारा व्यापार चौपट हो गया है। वे हमें सिन्धु के उस पार एक गाँव में मिले थे। हमने भी यह सोचकर इसे गोद ले लिया कि हमारी कोई सन्तान नहीं है और फिर ..." उदय एक क्षण के लिए रुका, "...फिर हमने यह भी सोचा कि कन्या अन्धी है। इससे हमें अच्छी भीख मिलेगी। बस, यही सारा वृत्तान्त है। हमने आप लोगों को सच-सच बता

दिया, चाहे जो कहो…"

सब लोग बैठकर उनका निर्णय करने लगे। वेणी के तो आँसू थमते नहीं थे। उसे लग रहा था कि जिस कन्या को उसने इतने दिनों अपनी छाती का दूध पिलाया, वह अब उससे छिनकर जा रही है। वह उसे अपने हाथों में लेकर दुलारना चाहती थी। परन्तु पासमान ने उसका हाथ झटक दिया।

उदय ने सब सच-सच बता दिया था। अब वह बैठकर उस व्यक्ति की हुलिया बता रहा था जिससे उन्होंने बिस्सी को बीस कहापण देकर मोल लिया था। उसने जब उस व्यक्ति के चेहरे-मोहरे का वर्णन किया, तो पासमान चौंक पड़ा। उसे लगा कि इस हुलिया के व्यक्ति को उसने कहीं देखा है। फिर एकाएक उसे उस माखूवाले का चेहरा स्मरण हो आया जो उन्हें पहले दिन राजधानी में पक्के ताल के किनारे मिला था। उदय का वर्णन ठीक माखूवाले पर ही उतरता था। पासमान ने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि वह दुष्ट माखूवाला उनके साथ ऐसा छल करेगा!

उदय बता रहा था, "यह तो समझो कि तुम भाग्यवान हो जो लड़ाई के डर से हम लोग इधर आ गये। योगी और भिखारी का क्या ठिकाना, क्या राह। गोचरी हमारी वृत्ति है। आज यहाँ, तो कल वहाँ। तुमने कोई पुण्य किये थे पिछले जनम में, जो तुम्हारी खोयी हुई कन्या मिल गयी…"

वेणी की आँखों से सावन-भादों की झड़ी लग गयी। उसे लग रहा था कि उसके हाथ कभी कुबेर का धन लग गया था और अब अचानक उसे कोई छीनकर ले जा रहा है।

मूली बैठी चिन्ता कर रही थी। पासमान को गये बहुत देर हो

गयी थी। खेमा भी भूखी होगी। साँझ हुई। फिर जब काली, अँधेरी रात घिर आयी और पासमान नहीं लौटा, तो विसालक्खी भी चिन्ता करने लगी। चौका समेटते हुए बोल रही थी, "मूढ़-पति है। गली-गली डोल रहा होगा।"

विसालक्खी ठीक ही कहती थी। जब से बस्सी खोयी थी, पासमान खाना-पीना भूलकर उन्मत्त-पागलों की नाईं तक्षशिला की गलियों में डोलता रहता था।

बायें प्रसार के निकट खाट पर बैठी मूली व्याकुल होकर बार-बार आहट लेती थी। फिर वह उठकर केले के गाछों में पानी देने लगी। दायें प्रसार के नीचे दीवट पर दीपक जल रहा था। मूली गड़ुवे से पानी देने झुकी, तो उसकी भीमकाय परछाईं बायें प्रसार पर पड़ने लगी। ऐसे लगता था जैसे कोई बहुत बड़ा दैत्य प्रसार में समाये न समाता हो।

तभी किवाड़ पर आहट हुई। फिर एकाएक किसी शिशु के रोने का स्वर सुनायी पड़ा। मूली का हाथ रुक गया और वह चौंककर देखने लगी।

बाहर पासमान था। उसके पीछे-पीछे विचक्खण आ रहा था। पासमान ने किवाड़ धकेला, तो विचक्खण दो धनुष पीछे खड़ा हो गया।

मूली अचरज से खड़ी देख रही थी। पासमान का एक पैर भीतर था, एक बाहर। एकाएक बस्सी फिर रोयी, तो मूली के भीतर जैसे सारे तार झनझना उठे। कोई माँ क्या अपनी कोख की सन्तान का स्वर नहीं पहचानेगी! मूली के हाथ से गड़ुवा वहीं छूट गिरा। वह ऐसे दौड़ी जैसे गाय बछड़े के लिए दौड़ती है।

अँधेरा था। पासमान ने सोचा था कि बाहर से ही वह चिल्लाकर कहेगा, भवनी! बस्सी मिल गयी। परन्तु किवाड़ पर

आकर जब उसने कुछ कहना चाहा, तो जैसे शब्द उसके कण्ठ में फँसकर रह गये। अब जब मूली दौड़ी, तो पासमान को शब्द मिल गये और वह एकाएक चिल्लाया, "मूली ! बस्सी मिल गयी ! ..."

मूली ने लपककर उसकी गोद से बस्सी को उठा लिया और दोनों हाथों में लेते हुए उसकी रुलाई फूट पड़ी। कन्या को छाती से भींचकर वह भाव-विभोर हो गयी।

विसालक्खी भी दौड़ी आयी।

बात फैलते देर नहीं लगी। विसालक्खी के आँगन में स्त्री-पुरुषों और बच्चों की भीड़ टूट पड़ी। सब चकित थे और मूली तथा विसालक्खी को बधाई दे रहे थे।

पासमान जैसे विचक्खण की उपस्थिति को ही भूल गया था। फिर जब उसे ध्यान आया, तो मूली से बोला, "भवनी ! यह तो पूछ कि बस्सी मिली कैसे ?"

वे उसका मुँह देखने लगे। स्त्रियों से घिरी मूली बस्सी को छाती से लगाये बैठी थी। पासमान ने यह बात कही, तो वह विस्मय से देखने लगी। पासमान कह रहा था, "भवनी ! देख, वह कौन बैठा है ?"

सचमुच, बस्सी को पाकर मूली इतनी खो गयी थी कि उसे खेमा तक का ध्यान नहीं रहा था। एकाएक चौंककर बोली, "खेमा कहाँ है ?"

पासमान धीरे से मुस्कराया और विचक्खण की ओर संकेत करते हुए बोला, "वो देख, पसार के खम्भे के साथ कौन बैठा है ?"

अभी तक किसी ने लक्ष्य ही नहीं किया था कि उनके घर में कोई अपरिचित आकर खम्भे के साथ बैठा है। मूली ने ध्यान लगाकर उधर देखा। अँधेरे में धुंधली-सी आकृति उसे दिखायी

दी। परन्तु वह तत्काल उसे पहचान नहीं सकी और अचरज से पासमान की ओर देखने लगी।

पासमान बोला, "तू पहचानेगी कैसे ! अरी, अपना विचक्खण है, विचक्खण !"

आज की सारी घटनावलि से अनभिज्ञ मूली विचक्खण का नाम सुनते ही पहले तो चकरायी, फिर तिलमिला उठी। अपने स्वर में जैसे सारे संसार का आक्रोश भरकर बोला, "गोखरू लेकर भी इसका पेट नहीं भरा जो फिर आया है..."

विचक्खण की आँखों के आगे अँधेरा छा गया। इसी बात का उसे डर था। पासमान भी जानता था कि मूली विचक्खण को इस तरह क्षमा नहीं करेगी। बोला, "मूली ! ऐसा मत कह, ऐसा मत कह..."

परन्तु मूली ने उसकी एक नहीं सुनी। उसका आक्रोश फट पड़ा। वह फटकारने लगी। पासमान उसे रोकता था। वह उसे बताना चाहता था कि आज विचक्खण न होता, तो बस्सी से वे सदा के लिए हाथ धो बैठे थे। मूली कुछ भी सुनने के लिए तैयार नहीं थी और अपनी भड़ास निकालना चाहती थी। विचक्खण को दुत्कारते हुए बोली कि वह उसका मुँह तक नहीं देखना चाहती।

पासमान विचक्खण के निकट आकर बैठ गया और उसकी गोद में लेटी खेमा को हाथों में लेकर उसे समझाने लगा कि मूली इस समय आपे में नहीं है, इसीलिए ऐसा बोल रही है। जब वह सारी बात सुन लेगी, तो ऐसा नहीं कहेगी।

परन्तु मूली का एक-एक शब्द जैसे उसके कलेजे में शूल की नाईं चुभ गया था। उसका मन करता था कि उसके पंख लग जायें और वह उड़ जाये। पासमान उसे समझा रहा था, "विचक्खण, तू मूली की बात का बुरा मत मान ! मैं उसे समझा

दूंगा।" फिर वह मूली के पास आ बैठा और उसे समझाने लगा।

"पहले सारी बात सुन, भवनी !" पासमान कह रहा था, "मूढ़ मत बन। विचक्खण न होता, तो आज तू बस्सी का मुंह न देखती···पहले सुन तो ले कि बस्सी मिली कैसे ?"

परन्तु मूली एक शब्द भी नहीं सुनना चाहती थी।

इधर पासमान मूली को समझा रहा था, उधर विचक्खण को अवसर मिल गया। जब पासमान ने पलटकर देखा, तो विचक्खण जा चुका था। किसी समय वह आँख बचाकर उठकर चल दिया था और किसी को कानों-कान पता नहीं चला था।

पासमान विह्वल होकर बोला, "मूली ! विचक्खण गया। तेरी जली-कटी सुनकर ही वह गया है···"

विचक्खण का इस तरह चुपके से उठकर चले जाना पासमान के लिए बड़ी लज्जा और पीड़ा की बात थी। मूली भी पछता रही थी कि बिना सोचे-समझे उसने विचक्खण के साथ ऐसा दुर्व्यवहार क्यों किया। उसकी जली-कटी सुनकर ही वह उठकर चला गया।

रात का दूसरा पहर बीत रहा था, परन्तु उनकी आँखों में नींद नहीं थी। विसालक्खी छत पर सोयी थी और ये दोनों दायें प्रसार के बाहर लेटे थे।

पासमान ने करवट लेकर आकाश की ओर देखा। बेरी के पत्तों में से चन्द्रमा दिखायी दे रहा था। उसके बिल्कुल ऊपर फुलचुही का घोंसला टहनी से लटक रहा था जिसमें दो नवजात बच्चे थे। दिन में कई बार फुलचुही आकर घोंसले की देहरी पर बैठती थी और दोनों बच्चों की चोंचों में चुग्गा डालती थी। बीच-बीच में वह घोंसले में घुसकर बैठ भी जाती थी और अपनी

पतली लम्बी चोंच देहरी पर रखे सतर्कता से देखती रहती थी। अँधेरे में घोंसला दिखायी नहीं पड़ता था। परन्तु पासमान को विश्वास था कि फुलचुही घोंसले में से चोंच निकाले बैठी होगी।

मूली ने दोनों कन्याओं को अपने साथ लिटा रखा था। उनके ऊपर उसने बाँह रखी हुई थी, जैसे उसे आशंका थी कि फिर कोई राक्षस आयेगा और दोनों कन्याओं को उठाकर ले जायेगा! पासमान ने करवट बदली, तो मूली ने कहा, "अब हम तक्कसिला नहीं रहेंगे। कल ही गाड़ी मोल लो और चल पड़ो यहाँ से..."

परन्तु पासमान को खेमा की चिन्ता लगी हुई थी। सुमद के लौटने की कोई सम्भावना नहीं थी। उसे आना होता, तो अब तक आकर खेमा को ले गया होता। पासमान को यह भी डर था कि अब जब विचक्खण को भनक पड़ गयी है कि उनके पास किसी की कन्या है, तो बात छिपाये नहीं छिपेगी! पासमान यह सोच-सोचकर और भी डरा कि कहीं ऐसा न हो कि रहस्य खुल जाये और खेमा के साथ उनके प्राण भी संकट में पड़ जायें।

प्रातः पुक्कुस कहार तनिक विलम्ब से आया। आँगन में पैर रखते ही क्या देखता है कि बायें प्रसार के बाहर बैठी विसालक्खी गुपचुप आँसू बहा रही है। देखकर पुक्कुस को बड़ा अचरज हुआ। जल्दी-जल्दी वह आया और विसालक्खी के निकट बैठकर बोला, "तू रो रही है, विसालक्खी! क्या बात है?"

विसालक्खी कुछ बोली नहीं। बस, टप-टप आँसू गिराती रही। पुक्कुस चकित होकर देखने लगा। बोला, "कुछ बतायेगी भी या यों ही बैठी अश्रु बहाये जायेगी!"

मूली और पासमान दायें प्रसार के नीचे बैठे सब सुन रहे थे।

पुक्कुस ने बार-बार पूछा, तो विसालक्खी ने पल्लू से आँसू पोंछते हुए कहा, "जा रहे हैं।"

"कौन जा रहा है ?" पुक्कुस ने अचरज से पूछा।

विसालक्खी ने आँसू पोंछे और उस ओर इंगित किया जहाँ मूली और पासमान बैठे थे। पुक्कुस को अभी तक ज्ञात नहीं था कि बस्सी मिल गयो है। वह आश्चर्य कर रहा था कि कल तक तो कोई बात नहीं थी। आज एकाएक वे तैयारी कैसे कर बैठे ?

वह धीरे से उठा और मूली और पासमान के निकट गया। खाट पर दो कन्याएँ सो रही थीं। बस्सी को पहचानते उसे देर नहीं लगी। चकित होकर बोला, "अरे, बस्सी मिल गयो। किसी ने मुझे बताया तक नहीं !"

अब जाकर सारी बात उसकी समझ में आयी। तो यही कारण है कि मूली और पासमान चलने की तैयारी कर रहे थे। पुक्कुस ने वहीं से विसालक्खी को सम्बोधित किया, "तू अथरू क्यों बहा रही है ! अपने घर जा रहे हैं, इसमें रोने-धोने की क्या बात है ! यह सुख का अवसर है या दुख का ? तुझे तो प्रसन्न होना चाहिए कि ये लोग जैसे आये थे, वैसे ही जा रहे हैं। इतने चिर पश्चात कन्या मिली है। जा, हट्टी से बताशे लेकर आ। आज सारी गली में बाँटेंगे।..."

परन्तु पुक्कुस क्या जाने कि विसालक्खी के मन पर क्या बीत रही थी। दोनों कन्याओं को उसने अपनी गोद में खिलाया था। फिर पासमान और मूली में जैसे उसे अपना बेटा-बहू मिले थे। पुक्कुस क्या समझे कि वह क्यों आँसू बहा रही है !

चारों बैठ गये और बातें करने लगे। पुक्कुस बोला, "इन्हें अब चले ही जाना चाहिए। कन्या का उपचार हो नहीं सकता और फिर तक्कसिला की स्थिति दिन-दिन बिगड़ती ही जा रही है। कहते हैं, सिन्धु के उस पार बैठा म्लेच्छ राजा अब किसी भी

दिन तक्कसिला ग्रा सकता है । सिन्धु पर पुल तैयार है···"

विचक्खण विसालक्खी के घर से निकला था, तो रात एक पहर बीत चुकी थी। जन-कलरव शान्त हो गया था। गलियों, सड़कों पर या तो पहरेदारों के स्वर सुनायी पड़ते वे या कुत्तों के।

विचक्खण डर रहा था। अब वह क्या मुँह लेकर उदय और वेणी के पास जायेगा ! वे उसे दोष देंगे। कहेंगे, उसी के कारण कन्या उनसे छिन गयी।

इस तरह मन से व्याकुल और शरीर से शिथिल विचक्खण भटकता रहा। फिर वह एक झुरमुट के निकट पेड़ के नीचे बैठ गया और गुपचुप रोने लगा। मूली का एक-एक शब्द शूल की नाईं उसकी छाती में गढ़ा हुआ था···हम अपना कलेजा चीरकर दिखा नहीं सकते, हम निर्दोष हैं, गोखरू हमने नहीं चुराया···

फिर वह वहीं पसरकर लेट गया और उस कन्या के विषय में सोचने लगा···पासमान के कन्धे से लगी वह कन्या कौन थी ? कोई भी हो सकती है। जहाँ ये लोग रहते हैं, उनकी भी हो सकती है···

फिर पता नहीं कब उसकी आँख लग गयी और वह बड़ी देर तक सोता रहा। प्रातः जब नींद उचटी, तो जामुन के पत्तों में से धूप छन-छनकर आ रही थी।

वह उठकर बैठ गया। उसे लग रहा था कि रात की घटना सपना मात्र थी। परन्तु अगले ही क्षण सारी घटनावलि उसकी आँखों के आगे नाच गयी। मूली के वे शब्द उसे पीड़ित करने लगे, कचोटने लगे। फिर उसका मन हुआ कि वह दौड़कर उदय और वेणी के पास जाये। वे रुष्ट होंगे, फटकारेंगे, परन्तु वह उन्हें मना लेगा···'हमने कोई पाप नहीं किया।···'

उठकर वह एक बावड़ी पर गया और मुँह-हाथ धोने लगा। उसे कुछ शान्ति मिली और साथ ही मनोबल भी, और वह जल्दी-जल्दी उतरकर नाले की ओर चल पड़ा।

इस वेला में उदय और वेणी शिवालय के निकट बैठते थे। इसलिए विचक्खण पहले उधर मुड़ा और गली के सिरे पर एक मकान की ओट में खड़ा होकर देखने लगा।

उदय और वेणी उसे कहीं दिखायी नहीं दिये। विचक्खण को खटका-सा हुआ। वह जल्दी-जल्दी पुल पार करके आया और देखने लगा। परन्तु उदय और वेणी अपने ठिकाने पर भी नहीं थे।

...कहीं ऐसा तो नहीं कि वे चले गये हों...

विचक्खण ने ठीक ही सोचा था। उसने आसपास के लोगों से पूछा, तो उन्होंने बताया कि उदय और वेणी रात को ही यहाँ से चले गये थे और फिर अभी तक लौटकर नहीं आये।

विचक्खण की आँखों में आँसू आ गये। वह एक ओर जाकर बैठ गया—'वे क्यों चले गये? उन्हें किस बात का डर था? उन्होंने तो एक अन्धी कन्या की जान बचायी थी...'

"विचक्खण!"

एकाएक उसने चौंककर देखा। सामने पासमान खड़ा था। विचक्खण डर गया और सोचने लगा कि सिर पर पाँव रखकर भाग खड़ा हो।

पासमान जल्दी-जल्दी आया और उसके निकट खड़ा होकर स्नेहवश डाँटते हुए बोला, "तू रात को भाग क्यों आया था?"

विचक्खण ने आँखें नीची कर लीं। बोला नहीं। बस, अँगूठे से मिट्टी कुरेदता रहा। विचक्खण को लगता था कि वह अभी

रो पड़ेगा।

तभी पासमान ने आगे-पीछे देखा, अचरज करते हुए कहा, "वे लोग कहाँ हैं—उदय और वेणी ?"

विचक्खण ने जैसे पीड़ा से निचला होंठ काटते हुए उसकी ओर निरीह आँखों से देखा।

पासमान समझ गया। निराश और दुखी होकर बोला, "मैं तो उन्हें एक बीसी कहापण देने आया था !"

फिर कुछ समय तक वे चुपचाप बैठे रहे। आसपास के लोगों ने सम्भवतः पासमान को पहचान लिया था कि यह वही व्यक्ति है, जिसकी कन्या को वे भिखारी उठा लाये थे। आते-जाते वे उत्सुकता से उसे देखते थे।

पासमान विचक्खण को सान्त्वना दे रहा था। उसकी सहानुभूति पाकर विचक्खण का गला भर आया और वह बोला, "हम झूठ नहीं कहते। हमने गोखरू नहीं चुराया…हम चोर नहीं…"

पासमान ने पूछा, "फिर तू उस दिन मरुथल में कहकर भी क्यों नहीं आया ?"

तब विचक्खण ने सारी बात बतायी। वह बोला कि किस तरह वह उस दिन बन्दरों के पीछे मारा-मारा फिरा। सारे मरुथल में दूर-दूर तक रेत ही रेत और ऊँटझाड़ियाँ दिखायी पड़ती थीं, परन्तु बन्दर कहीं दिखायी नहीं दिये। भटकते-भटकते उसे बन्दरों के पैरों के चिह्न दिखायी पड़े, जो दूर पेड़ों के एक झुण्ड तक जाते थे। विचक्खण भागा-भागा गया। क्या देखता है कि दोनों बन्दर एक पेड़ पर बैठे थे। विचक्खण को देखते ही वे खौंखियाकर उसे डराने लगे और फिर बहुत ऊपर चढ़ गये।

विचक्खण थकावट और प्यास के मारे व्याकुल था। गर्म रेत

र चलने से पैरों में फफोले पड़ गये थे। बस, वह निढाल होकर पेड़ के नीचे बैठ गया और बन्दरों को फुसलाने का उपक्रम करने लगा। बन्दर थे कि उससे आँख तक नहीं मिलाते थे। विचक्खण ने बहुतेरे पत्थर-ढेले मारे, परन्तु बन्दर ऐसे ढीठ हो गये थे कि टस से मस नहीं हुए।

करते-करते साँझ घिर आयी। विचक्खण घबराया। भाग्य से एक ओट्ठी अपने दो ऊँटों के साथ उधर आ निकला। विचक्खण ने रो-रोकर उसे अपना दुखड़ा सुनाया। ओट्ठी ने उसे पानी और कुछ खाने को दिया और फिर अपने साथ गाँव ले गया।

गाँव क्या था, पथरीली भूमि में पेड़ों के साथ एक खेट अर्थात छोटी बस्ती-सी थी जिसमें दस-पन्द्रह मड़ैया थीं। ओट्ठी के छह बच्चे थे और पत्नी नहीं थी। सबसे छोटा लड़का तीन बरस का था और बड़ा पन्द्रह बरस का। शेष चारों लड़कियाँ थीं। उन्हें जब मालूम हुआ कि उनके घर बन्दरवाला आया है, तो वे उछलने लगे।

विचक्खण उन्हीं के घर ठहरा, परन्तु रात-भर उसे नींद नहीं आयी। बार-बार उसके मन में यह बात आती थी कि उन लोगों ने उस पर चोरी का दोष क्यों लगाया—'आरोप आरोप ही होता है—चाहे झूठा हो।' परन्तु उसे विश्वास था कि समय बीतने के साथ सच्ची बात सामने आयेगी।…'अपने को निर्दोष सिद्ध करने में समय लगता है…सोना आग में डालो, तो देर से पिघलता है। सिक्का जल्दी पिघलकर काला हो जाता है।…हम माता जानकी की तरह निर्दोष हैं। अपनी निर्दोषता सिद्ध करने के लिए आग में भी बैठ सकते हैं…अगन परिक्खर दे सकते हैं…'

अगले दिन उजाला होते ही वे सब मरुथल की ओर चल पड़े। विचक्खण को रत्ती-भर आशा नहीं थी कि बन्दर वहाँ

होंगे। परन्तु जब वे उस पेड़ के नीचे पहुँचे, तो देखकर चकित रह गये। बन्दर उसी पेड़ पर बैठे थे। विचक्खण के साथ छह बच्चों और ओट्ठी को आते देख वे चिपर-चिपर करने लगे। अब जाकर सारी बात विचक्खण की समझ में आयी। बन्दरों की रस्सियाँ टहनियों में उलझ गयी थीं और रात-भर वे इसी पेड़ पर बैठे रहे। बस, ऊँट पर चढ़कर उसने दोनों बन्दरों को पकड़ लिया और फिर पतली टहनी लेकर उनकी वह पिटाई की कि वे वश में आ गये।

वह दिन हँसते-खेलते बीत गया। रात आयी, तो विचक्खण फिर बिसूरने लगा। वह बार-बार कुलगाम जाने का निश्चय करता, परन्तु फिर विचार बदल लेता। वह ओट्ठी के खेट में ही टिक गया। आसपास की बस्तियों में जाकर वह खेल दिखाता और साँझ होने से पहले ओट्ठी के खेट में लौट आता। उसके बच्चों के साथ वह घुल-मिल गया था। ऊपर से वह प्रसन्न था, परन्तु भीतर ही भीतर घुलता रहता था।

कुछ दिनों के पश्चात न जाने उसके मन में क्या समायी कि वह कुलगाम जाने के लिए तैयार हो गया। आज तक उसने ओट्ठी को गोखरू की चोरी की बात नहीं बतायी थी। उस दिन न जाने क्या सोचकर उसने सारी बात कह डाली। सुनकर एका-एक ओट्ठी का ढंग-रवैया बदल गया। वह बोला, "सच-सच बता, तूने गोखरू चुराया तो नहीं ?"

विचक्खण की आँखों से टप-टप आँसू गिरने लगे। बोला, "नहीं, हम झूठ नहीं बोलते। हमने गोखरू नहीं चुराया। हम अगन-परिक्खा भी देने को तैयार हैं।"

ओट्ठी ने कहा, "जब तूने चोरी नहीं की, तो फिर वहाँ से भागा क्यों ?"

सचमुच, विचक्खण ने बहुत बड़ी भूल की थी। बस, उसी

क्षण उसने झोला उठाया और कुलगाम की ओर चल पड़ा।

उस दिन सूरज ढलने के साथ कहीं वह कुलगाम पहुँचा। परन्तु जब उसने आकर देखा, तो उसका हृदय बैठने लगा। सार्थ उठकर जा चुका था और सार्थवाले मैदान में उल्लू बोल रहे थे। एक ग्रामीण ने उसे बताया कि सार्थ तो कई दिन पहले वापस चला गया। उसने समझ लिया कि पासमान और मूली भी सार्थ के साथ अपने गाँव लौट गये होंगे।···

पासमान बड़े ध्यान से सुन रहा था।

विचक्खण ने विस्तार से बताया कि वह कहाँ-कहाँ मारा फिरा, कैसे पेट पर पट्टी बाँधकर सोया और फिर किस तरह भटकते हुए राजधानी तक्कसिला के निकट पहुंचा और उदय और वेणी से उसकी भेंट हुई। सब संयोग ही था।

विचक्खण की दुख-गाथा सुन पासमान के रोंगटे खड़े हो गये। वे चुपचाप बैठे रहे। फिर विचक्खण ने ही पूछा, "गोखरू मिला?"

"नहीं।" पासमान ने धीरे से कहा।

विचक्खण ने पूछा, "कौन ले गया होगा?"

पासमान क्या बताता। उसे सन्देह क्या, विश्वास था कि गोखरू गन्धी ही चुराकर ले गया था।

विचक्खण की आँखें डबडबा आयीं। बोला, "हमारा विश्वास करो। हमने गोखरू नहीं लिया। हम झूठ नहीं बोलते। हमने उसे हाथ तक नहीं लगाया···"

फिर दोनों चुप हो गये। विचक्खण की आँखों से टप-टप आँसू बह रहे थे। एकाएक उसे कुछ स्मरण आया। बोला, "हम झूठ नहीं बोलते, भिखारियों की बात हमें बहुत सच्ची लगी थी।

हमने मान लिया था कि तुम लोग बस्सी को जंगल में डाल गये। फिर जब हमने तुम्हारे कन्धे से लगी उस कन्या को देखा, तो हमारा सन्देह पक्का हो गया। वह कौन थी ?"

एकाएक विचक्खण ने पूछा, तो पासमान उलझन में पड़ गया। क्या बहाना बनाये। पहले तो उसने सोचा कि विचक्खण को भेद बताने में कोई दोष नहीं है। परन्तु डरता था कि बात निकल गयी, तो प्राणों के लाले पड़ जायेंगे। इसलिए उसने सोचा कि कन्या के प्राणों की रक्षा के लिए और अपने जीवन के लिए यदि झूठ भी बोलना पड़े, तो अनुचित नहीं है। इसलिए गोलमोल उत्तर देते हुए बोला, "अरे, वह कन्या !" और वह ठहाका मारकर हँस पड़ा, "अरे, समझो कि वह अपनी ही बिटिया है..."

विचक्खण को लगा जैसे उसके मन का सारा बोझ एकाएक हलका हो गया है।

पासमान भीतर ही भीतर डर रहा था। परन्तु संकट टल गया लगता था।

अब उदय और वेणी के लौटने की कोई सम्भावना नहीं थी। अवश्य ही वे कहीं चले गये थे। राजधानी से बाहर भी जा सकते थे। इसलिए उनकी प्रतीक्षा करना व्यर्थ था।

पासमान को इस बात की भी आशंका थी कि कहीं विचक्खण उसके साथ घर न चल पड़े। परन्तु विचक्खण मूली से इतना त्रस्त था कि उसके सामने नहीं पड़ना चाहता था। इसलिए बहाना लगा गया कि वह यहाँ बैठकर उदय और वेणी की राह देखेगा और साँझ को आयेगा।

परन्तु वह साँझ नहीं आयी और इसके पश्चात फिर कभी उनका मिलाप नहीं हुआ।

अब मूली और पासमान जैसे उड़कर अपने गाँव पहुँचना चाहते थे। एक-एक पल उन्हें भारी पड़ रहा था। बैलगाड़ी का प्रबन्ध हो जाये, तो वे तक्षशिला का पानी तक न पियें।

परन्तु पासमान दुविधा में था : थैलो में से धन निकाले अथवा नहीं ! किसी की धरोहर में वह हाथ नहीं डालना चाहता था, परन्तु अब ऐसा करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं था। पासमान की अण्टी में इतना धन नहीं था कि गाड़ी मोल लेता और गाड़ी के बिना यात्रा असम्भव थी।

खेमा के विषय में भी उन्होंने निश्चय कर लिया था। वे किसी को भी नहीं बतायेंगे और उसे चुपचाप अपने साथ गाँव ले जायेंगे। देवथली में सुमद नाम के उस व्यक्ति ने भी यही कहा था। बस, डर यही था कि कहीं विचक्खण ही न आ जाये !

दोपहर होने जा रही थी। तभी कधौली के बाहर एक बैलगाड़ी चरमराती हुई आकर रुकी। पासमान और मूली दायें प्रसार में खाट पर बैठे थे। विसालक्खी घर पर नहीं थी। वह सवेरे ही नगर-द्वार पर चली गयी थी।

तभी किवाड़ हिले और पुक्कुस कहार प्रविष्ट हुआ। आते ही बोला कि वह उनके लिए टप्पर गाड़ी लाया है।

दोनों अचरज से उसका मुँह देखने लगे। सबसे पहली बात पासमान के मन में यह आयी कि सम्भवतः उसकी पुरानी टप्पर गाड़ी मिल गयी है, परन्तु इसकी कोई सम्भावना नहीं थी। इसी-लिए वह मुँह बाये उसकी ओर देख रहा था।

पुक्कुस बोला, "चकित क्यों होते हो !" फिर वह उनके निकट आया और अपना स्वर धीमा करते हुए फुसफुसाकर बोला, "गाड़ी मैंने अपनी अण्टी से मोल नहीं ली···सुमद ने भेजी है···"

मूली और पासमान तो आँखें फाड़े देखते रह गये। सुमद! पुक्कुस सुमद को कैसे जानता है?

उनकी आँखों में भय और आश्चर्य देखकर पुक्कुस ने कहा, "घबराओ नहीं, डरने की कोई बात नहीं। गाड़ी सुमद ने ही भेजी है और कहलवाया है, चुपचाप कन्या को भी अपने साथ गाँव ले जाओ···"

घोर आश्चर्य! तो पुक्कुस को सारा रहस्य मालूम है?

पुक्कुस ने जैसे उसके भीतर झाँकते हुए उसके मन की बात पढ़ ली। बोला, "सब बताऊँगा। पहले स्वस्थ होओ और जल्दी से अपना सामान बाँधो। आज सायं एक दल उधर ही जा रहा है। उसके साथ चलने के लिए तुम्हारा प्रबन्ध हो गया है··" फिर बोला, "इस तरह टुकुर-टुकुर क्या देख रहे हो? बाहर जाकर देखो! टप्पर गाड़ी पसन्द है?"

पासमान जैसे डरते-सकुचाते हुए किवाड़ तक आया और झाँकने लगा। बिल्कुल नयी टप्पर गाड़ी बाहर खड़ी थी, जिसमें दो हृष्टपुष्ट श्वेत बैल जुते हुए थे।

पुक्कुस उसके पीछे खड़ा था। बोला, "दोनों बैल सर्वधुरीण हैं, चाहे जिधर जोत लो···" और पासमान ने मुड़कर देखा, तो वह धीरे-धीरे मुस्काने लगा।

पासमान को यह सब कोई अलौकिक सपना-सा लग रहा था। उसे अचरज हो रहा था कि पुक्कुस यह सब जानता था और उसने संकेत तक नहीं किया!

पुक्कुस उसे अपने पास बैठाकर धीरे-धीरे बता रहा था। बोला कि खेमा एक कल्पित नाम है इस कन्या का और यह कोई साधारण कन्या नहीं है। यह उसी कुमार अक्खत (अक्षत) की बेटी है, जिसकी आँखें निकलवाकर उपराज आम्भि ने वध का आदेश दिया है। राजकुमार अक्खत का सारा

परिवार मारा गया है विप्लव में। केवल यह अबोध कन्या बची है, जिसे सुमद नामक वह व्यक्ति राजमहल से छिपाकर ले गया था और छद्मवेष में देवथली में रहता था।

पुक्कुस बता रहा था और दोनों उसका मुँह देख रहे थे। वह बोला, "अब तुम यह पूछोगे कि पुक्कुस को यह सब कैसे मालूम हुआ।...बेटो! पुक्कुस उदकहार है और बड़े-बड़े सेट्ठिओं के घरों में पानी भरता है..." और फिर कनखियों से देख-देखकर मुस्काने लगा। फिर एकाएक गम्भीर होकर बोला, "परन्तु भूले से भी यह भेद किसी पर प्रकट न करना, नहीं तो इस कन्या के साथ तुम भी प्राणों से हाथ धो बैठोगे..."

समय अधिक नहीं था। दोनों दौड़-दौड़कर सामान बटोरने लगे। एकाएक पासमान का हाथ रुक गया। वह पुक्कुस के निकट आया और धीरे से फुसफुसाकर बोला कि क्या विसालक्खी भी यह सारा भेद जानती है?

पुक्कुस ने आँखें बन्द कीं और सिर झुकाकर बालों में हाथ फेरते हुए मन्द-मन्द मुस्काने लगा।

पासमान सामान बाँध रहा था। पुक्कुस बोला, "आज है भी शुभ दिन। मैंने टप्पर गाड़ी को उत्तराभिमुख खड़ा कर दिया है। यात्रा आरम्भ करने से पहले गाड़ी को उत्तर की ओर मोड़कर खड़ा करना चाहिए। सामान बाँध लो। अभी विसालक्खी भी आती होगी। तुम्हारे लिए पथ्याशन बाँध देगी..."